अनुसंधान

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसूत्त, ५२९) 'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

प्राकृतभाषा अने जैन साहित्य विषयक
संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

१

संकलनकार : आचार्य विजयशीलचन्द्रसूरि • हरिवल्लभ भायाणी

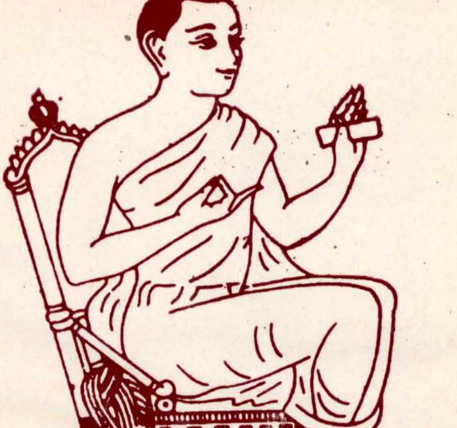

श्री હેમચંદ્રાચાર્ય

कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृतिसंस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
१९९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसंधान

प्राकृतभाषा अने जैन साहित्य विषयक
संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

१

संपादको : विजयशीलचन्द्रसूरि
हरिवल्लभ भायाणी

શ્રી હેમચંદ્રાચાર્ય

कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद

१९९७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुसंधान ९

संपर्क : **हरिवल्लभ भायाणी**
२५/२, विमानगर, सेटेलाईट रोड,
अहमदाबाद - ३८० ०१५

प्रकाशक : **कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद, १९९७**

किंमत : रू. ३५-००

प्राप्तिस्थान : **सरस्वती पुस्तक भंडार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अहमदाबाद - ३८० ००१

मुद्रक: **क्रिष्ना ग्राफिक्स**
किरीट हरजीभाई पटेल
९६६, नारणपुरा जूना गाम,
अहमदाबाद - ३८० ०१३
(फोन : ७४८४३९३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

"अनुसन्धान" अनियतकालिक पत्रिका छे. ए मात्र स्वाध्यायना प्रयोजनथी ज प्रकाशित थाय छे, तेथी तेने समयनुं के लवाजमनुं के तेवुं अन्य बन्धन परवडे तेम नथी.

"अनुसन्धान" गुजरातीमां छतां तेनी लिपि नागरी शा माटे ? एवो एक प्रश्न थाय छे. आनो खुलासो एटलो ज के विदेशोमां तथा अहीं अन्य प्रान्तोमां, जे मित्रोने जूनी गुजराती भाषा वगेरे साथे काम रहे छे, तेवा मित्रोने भाषा अंशत: समजाती होवा छतां लिपि अवरोधक बने छे. आ अवरोध न रहे ते आशयथी ज नागरी लिपिमां प्रकाशननो उपक्रम योज्यो छे.

—संपादको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रम

१.	श्रीस्तंभनाधीशप्रबन्धसंग्रहः भूमिका	विजयशीलचंद्रसूरि	१
	श्रीस्तंभनाधीशप्रबन्धसंग्रहः	विजयशीलचंद्रसूरि	६
२.	श्रीस्तंभनपार्श्वनाथ-द्वात्रिंशत्प्रबन्धोद्धारः	सं. विजयशीलचंद्रसूरि	६१
३.	बे भास	सं. मुनि जिनसेनविजय	७६
४.	प्रयोगोनी पगदंडी पर सात 'सुख', क्षेपणी, अरित्र	हरिवल्लभ भायाणी	
५.	गुरुस्तुतिरूप त्रण लघुकृतिओ	सं. भँवरलाल नाहटा	९२
६.	(१) अखंड दीवानो विस्तरतो उजाश	प्रद्युम्नसूरि	९७
	(२) काळजयी साहित्यकृतिना पुनरुद्धारकनुं अभिवादन	विजयशीलचंद्रसूरि	
	(३) समुद्धारयज्ञनी पूर्णाहुति	हरिवल्लभ भायाणी	
७.	पंडित वीरविजयजी स्वाध्याय ग्रंथ	वसंत दवे	१००
८.	A note on ullaṇa; kusuṇa/kusaṇa	H. C. Bhayani	१०२
९.	bhadraṁ te and bhadanta	H. C. Bhayani	१०४
१०.	A Glossary of Rare and Non-standard Sanskrit Words of The Katharantakara of Hemavijayagani (1600 A.C.)	H. C. Bhayani	१०६
११.	प्रकाशन-परिचय	ह. भायाणी	११३
१२.	ओरिएन्टल-कोन्फरन्स ३८मुं संमेलन	विजय पंड्या	११४
१३.	अवसान-नोंध	ह. भायाणी	११६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीस्तंभनाधीशप्रबन्धसंग्रह : भूमिका

-विजयशीलचन्द्रसूरि

"स्तंभनाधीशप्रबन्धसंग्रह" ए संभवतः नागेन्द्रगच्छीय अने 'प्रबन्ध-चिन्तामणि' कार श्रीमेरुतुंगाचार्यनी एक विद्वद्भोग्य प्रगल्भ रचना छे. देखीती रीते ज, आ रचनामां ऐतिहासिक करतां पौराणिक विषयवस्तुनुं प्राचुर्य तथा प्राधान्य छे. कर्ता पोते पण "स्तम्भनेन्द्रपुराण" नामथी आने ओळखावे छे ते आ संदर्भमां नोंधवा योग्य छे (प्र. २३). जो के पौराणिक विषयनिरूपणमां पण रसिकता तो भारोभार छलकाय छे. शब्दोनी भभक, भाषानी झमक, स्थळो तथा व्यक्तिओनां नामोनुं वैविध्य-आ बधुं कर्तानां विशद पाण्डित्यनो संकेत आपनारुं छे. वळी, पुराणकथा होवा छतां वर्णित प्रसंगो लगभग अपूर्व छे : अन्य जैन ग्रंथो के पुराणग्रंथोमां भाग्ये ज आ प्रसंगो जोवा मळे. घडीभर शंका थाय के आ रचना निगममतनी तो नहि होय ने ? ए हदे आमां नावीन्य छे.

परंतु, नवीन होवा छतां आ वातोने साव अप्रमाणिक मानी लेवानुं साहस करी शकाय तेम नथी. तेनां ३ कारणो छे :

१. कर्ता पोते आ रचनाना आधार लेखे जे साधनोनो उल्लेख करे छे ते ध्यानार्ह छे : [१]शंखिनीमत, [२]दूषमगण्डिकाबन्ध, [३]भैरवीचरित, [४]विद्याकल्प, [५]मन्त्रसार, [६]श्रीबिन्दुसारचूला, [७]योनिप्राभृतकर्णिका, [८]देवमहिमसागर, [९]प्राभृतपटल; उपरांत, देवेन्द्रस्तव (प्रबन्ध - ३२); आ बधां ग्रंथोनां नामो छे, जेमांना एक-बेने बाद करतां एक पण ग्रंथ आजे कोई स्वरूपे लभ्य लागता नथी. मात्र 'देवेन्द्रस्तव' उपलब्ध छे, अने 'योनिप्राभृत'नी एक खण्डित प्रति ज मात्र (पूना BOIR) उपलब्ध छे. संभव छे के आ बधा ग्रंथ ते समये ग्रंथकारने हाथवगा होय अने कालांतरे कालग्रस्त बन्या होय. जो के कर्ता पासे बीजां पण साधनो छे ज, जे आभ्यंतर वा अंगत गणाय तेवां छे : [१]सद्गुरुना मुखे सांभळीने, [२]बहुश्रुतो द्वारा प्राप्त 'आदेश' ने आधारे, [३]पद्मावतीदेवीनी आराधनाना प्रभावे (प्रबन्ध ३१मां पण जुओ), [४]सरस्वतीदेवीनी कृपाथी तथा [५]अन्य वार्ताकार विद्वानोना सहकारथी-एम ५ आधारो आ रचना माटे कर्ताए मेळव्या छे.

२. आ रचना नवीन अने पूर्वसूरिओनी ग्रंथपरंपराथी साव भिन्न होवानुं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो कर्ता पोते ज आ शब्दो द्वारा कबूल करे छे : '**अभिनवग्रन्थारम्भं चैनं श्रम्यामि**' (प्र-१), तथा 'श्रीस्तम्भनजिनचरिते, सूरि **श्रीमेरूतुङ्गमतिलिखिते** ।' (प्र.१, अंत); आम छतां, एक गीतार्थ, शास्त्र तथा परंपराने वफादार, दोषभीरु एवा जैन आचार्य तरीके पोते क्यांय भूलमांय उत्सूत्र-सूत्रविपरीत आलेखन नथी करी नाखता ने ? तेवी तपास-जातनिरीक्षण-पोते वारंवार करतां रहे छे, अने पोताथी अजाणपणे पण तेवुं थयुं होय तो ते बदल क्षमाप्रार्थना पण कर्या करे छे, जे तेओनी पारदर्शक प्रमाणिकतानुं द्योतन करे छे. जेम के -

(१) मदीयं वितथं वाक्यं, सत्यं वा वेत्ति कोऽपि किम् ? ।
प्रायः प्रमादिनां यस्माद्, दुःषमायां वचोऽनृतम् ॥ (प्र.१ आदि).

(२) श्रीमेरुतुङ्गसूरेर्मा भूदुत्सूत्रपातकम् ।
मा भूदाशातना वार्ता, देवस्तम्भनवर्णने ॥ (प्र. १०)

(३) आदिष्टं मद्गुरुणा, मत्पुरतो यद् यथैव चरितमिदम् ।
श्रीमेरुतुङ्गसूरि-स्तथैव तल्लिखति न परवचः ॥ (प्र. १५)

(४) श्रुत्वा केऽपि हसिष्यन्ति, प्रबन्धांस्तलिनाशया ।
व्रजिष्यन्ति मुदं चाऽन्ये, सूरयो गूणभूरयः ॥ (प्र. १७)

(५) उत्सूत्रपातभीतस्य, मिथ्यादुःकृतमस्तु मे ॥ (प्र. २७)

(६) न देयं दूषणं मह्यं कदा कोऽपि विपर्ययः ।
दुर्ज्ञेयं चरितं चित्रं, को जानाति महात्मनाम् ॥ (प्र. २८)

(७) यदा प्रवर्त्तमानेषु, प्रबन्धेषु वचोऽनृतम् ।
शोधयन्तु कृपां कृत्वा, तज्ज्ञातारः कृतोऽञ्जलिः ॥ (प्र. ३०)

(८) इहोत्सूत्रं भवेत् किञ्चित् प्रमादात्पतितं मम ।
शोधयन्तु कृपां कृत्वा, तदवद्यं बहुश्रुताः ॥ (प्र. ३२)

३. अने आ रचनाना अंतभागमां कर्ता स्वयं सूचवे छे तेम आ रचना मलधारगच्छना वडा श्रीराजशेखरसूरि ('प्रबन्धकोश'ना प्रणेता) वगेरेए प्रमाणित कर्या पछी ज कर्ताए तेने वहेती मूकी छे; आ रह्युं ए सूचक पद्य :

मलधारिगच्छनायकसूरि श्रीराजशेखरप्रमुखैः ।
गणभृद्भिर्गुणवद्भिर्ग्रन्थोऽयं शोधितः सकृपैः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सार ए के अनेक साधनोनो आधार लईने रचेलो, समकालीन मान्य पुरुषोए प्रमाणेलो, अने पोताथी जाण्ये अजाण्ये खोटुं न लखाई जाय ते माटे खूब सभान रहेनारा सर्जके सर्जेलो आ ग्रंथ अने तेमांनी चमत्कारिक जणाती वातोने सदंतर अप्रमाणिक मानवानुं साहस करी न शकाय.

कर्तानो मुख्य सूर श्रीस्तंभनपार्श्वनाथनी प्रतिमानो महिमा गावानो छे. ए प्रतिमा प्रत्ये तेमना चित्तमां अनन्य श्रद्धा-भक्ति छे, ते अहीं सर्वत्र अनुभवी शकाय छे. जो के प्रसंगोपात्त, परंपरागत पद्धतिए, अजैन मान्यताओने जैन ढांचामां ढाळवानो के तेमनुं जैन अर्थघटन करवानो तेमनो प्रयास जोवा मळे छे, जे केटलेक अंशे घणो मौलिक लागे (प्र-४, १६ वगेरे). तो २९मा प्रबन्धमां इतर दर्शनोनी खबर पण तेमणे लई नाखी छे. आम छतां, ग्रंथकार -

अयोनिजेन येनेदं सर्वं सृष्टं चराचरम् ।
सर्वशक्तिपरीताय, तस्मै विश्वात्मने नमः ॥ (प्र.१६)

विश्वान्यमूनि विश्वानि, येन सृष्टानि शक्तितः ।
अनादिनिधनो देवः, स्वयं सिद्धो मुदेऽस्तु वः ॥ (प्र.२२)

आवां पद्यो लखे छे, ते जोईने भारे आश्चर्य उपजे तेम छे. कर्तानी तात्त्विक समन्वयदृष्टिनो ज आ बधामां परिचय मळे छे, एवुं तारण काढीए तो ते अयोग्य न गणाय.

आ रचना तद्दन पुराणात्मक नथी. आमां इतिहासनां छांटणां पण छे खरा. आने कोई दंतकथालेखे वर्णवी शके जरूर. परंतु बधी दंतकथा अप्रमाणिक ज होय-एवो निश्चय राखीने चालनार इतिहासशोधक भाग्ये ज विश्वसनीय अने सत्यान्वेषी गणाय, ए पण, अहीं ज, स्पष्ट करवुं पडे. तो इतिहासोपयोगी अंशो आपणे जोईए :

१. २७मा प्रबन्धमां झंझूवाडा, त्यांना सूर्यमंदिरनी कथा, पंचाश्रय-जे कर्ताना वखतमां पंचासर नामे प्रसिद्ध थई चूकेलुं ते आजनुं पंचासर गाम, तेनी नजीकनुं पाडला गाम-जे आजे पण ए ज नामे विख्यात छे; त्यांनी नेमिनाथनी जीवत्प्रतिमा (नेमिनाथनी विद्यमानतामां ज बनेल तथा प्रतिष्ठित प्रतिमा)-जे अत्यारे तळाजा तीर्थे पर्वत उपर लावी होवानुं जाणीतुं छे; शंखेश्वरनी मूल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिमाना स्थाने अत्यारे (कर्ताना समयमां) अन्य प्रतिमा होवानुं विधान, -आ बधी वातो इतिहासनी वेरविखेर शृंखला समी छे ज. अने कर्ता स्वयं चोखवट करे छे के - 'आ वात (शंखेश्वरनी प्रतिमानी वात) मने योनिप्राभृतना संकेतथी जाणवा मळी छे, माटे कोईए भ्रांति न करवी.'

२. रसयोगी नागार्जुने रससिद्धि माटे स्तंभनपार्श्वनाथ-प्रतिमानुं आलंबन लीधेलुं, त्यारथी ते प्रतिमानुं नाम-रसस्तंभन थवाथी-'स्तंभन' पार्श्वनाथ पडेलुं. ते प्रतिमा द्वारा ज्यां रससिद्धि मेळवी, ते 'सेढी' नदीना कांठाना गामनुं नाम पण त्यारथी स्तंभनपुर पड्युं-एम आ ग्रंथकार वर्णवे छे (प्र.३१). अने ए स्तंभनपुर ते आजनुं थामणा-उमरेठ पासेनुं गाम. स्तंभन→थंभण→थमण→थामण, (स्तंभनक परथी थामणा).

३. थामणा क्षेत्रमांथी स्तंभनपार्श्वनाथनी ए प्रतिमा कालांतरे खंभात-स्तंभनतीर्थे आवी होवानुं तो जगजाहेर छे. पण ते कया वर्षमां अने शा माटे आवी तेनी विगत क्यांय मळती नथी. आ ग्रंथमां प्रथमवार आ विगत आ प्रमाणे मळे छे :

"१३६८ वर्षे इदं च बिम्बं श्रीस्तम्भतीर्थे समायातं-भविकानुग्रहणाय ॥" (प्र. ३२)

अत्यारे सामान्य मान्यता एवी छे के थामणामां देरासर हतुं अने त्यां आ प्रतिमा पूजाती हती, पण मुस्लिम आक्रमणना कारणे प्रतिमा खंभात लई जवाई हती; आ वात हवे ऊपरनो संदर्भ जोतां बिनपायादार ठरे छे.

आ ग्रंथनी मात्र एक ज प्रति अद्यावधि मळी छे, जे उपरथी अटकळ थाय छे के आ रचनाने परंपराए बहु आदर के संमति नथी आपी. नवी वात आवे त्यारे तेनो जलदी स्वीकार भाग्ये ज थतो होय छे. एक प्रति मळे छे ते पाटणना श्रीहेमचन्द्राचार्य ज्ञानभंडारनी छे (डा. ३१२, नं. १४९६५). ९३ पत्रोनी आ प्रति, ग्रंथनी रचना (सं. १४१३) थयाना ११ वर्षे ज (सं. १४२४) लखायेली होवाथी प्रमाणमां शुद्ध छे. आ प्रतिनी प्रेस कोपी आगमप्रभाकर पूज्य मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी महाराजे वर्षो अगाऊ करावेली हती, तेना आधारे तेमज पाटणनी प्रतिनी झेरोक्स नकलना आधारे आ ग्रंथ संपादित करी अत्रे रजू कर्यो छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाटणनी प्रतिमां २४-२५, २८-२९, ३२-३३, ४३, ५६, ८२, ८४ एम कुल १० पत्रो नथी, तेथी ग्रंथ ते अंशे खंडित छे. बीजी प्रतिओ मेळववा माटे अनेक भंडारोमां शोध करी, परंतु आ ग्रंथनी प्रति क्यांयथी मळी नहि. हा, आ ग्रंथना सारोद्धाररूपे लखायेली कृतिनी २ प्रतिओ जरूर मळी पण ते कृति, आ रचनाना तूटता पाठने सांधवा माटे सक्षम नथी जणाई.

पाटण-प्रतिना अंतिम-९३मा पत्र पर "मेरुतुंगसूरिकृतस्तंभनाधीशप्रबन्धाः ३२" आवो उल्लेख होवाथी आ संपादनमां "स्तंभनाधीशप्रबन्धसंग्रह" एवुं नाम आपेल छे. पाटणनी प्रतिनी नकल आपवा बदल पाटण-हेमचन्द्राचार्य भंडारना कार्यवाहको प्रत्ये, तथा प्रतिनी प्रेस कोपी आपवा बदल प्राकृत ग्रन्थ परिषद्(PTS) ना कार्यवाहको प्रत्ये आभारनी लागणी दर्शावुं छुं.

***

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ अर्हम् ॥

श्री स्तम्भनाधीशप्रबंधसंग्रहः ॥

(प्रबन्धः १)

सर्वभीतिविनाशार्थं, सर्वसौख्यैककारणाम् ।
स्तम्भनेन्द्रमुखं पश्ये(पश्येत्), सर्वदा सर्वतोमुखम् ॥ १ ॥

शासनाचारसूरीणां, वैपक्ष्यं यत्र जायते ।
सूरिश्रीमेरुतुङ्गस्य, मिथ्यादुःकृतमस्तु मे ॥ ॥२ ॥

मदीयं वितथं वाक्यं, सत्यं वा वेत्ति कोऽपि किम् ।
प्रायः प्रमादिनां यस्माद्, दुःषमायां वचोऽनृतम् ॥ ३॥

अपि च –

शङ्खिनीमतात् दूसमद(ग?)ण्डिकाबन्धात् भैरवीचरितात् विद्याकल्पात् मन्त्रसारात् श्रीबिन्दुसारचूलाया योनिप्राभृतकर्णिकाया देवमहिमसागरात् प्राभृतपटलात् श्रीसुद्गुरुमुखात् बहुश्रुतादेशात् श्रीपद्मावतीसमाराधनप्रभावात् श्रीभारतीप्रसादात् अन्येषामपि च वार्ताविदुषां सान्निध्याद् अस्यैव श्रीस्तम्भनायकस्यानुप्रे(ग्र)हात् स्वयंसमुद्भूतनिबिडतरभक्तिभरसमुल्लसितान्तःकरणानाहतवचोविलासात् कुण्ठकु(क?)ण्ठोऽपि जडजिह्वोऽपि अमुखरमुखोऽपि तलिनप्रज्ञोऽपि अनतिशयवचनरचनोऽपि अकवियश(शः?)स्पृहोऽपि श्रीस्तम्भनेन्द्रप्रबन्धान् इमान् द्वात्रिंशत्प्रमितान् वक्ति ।

सूरिश्रीमेरुतुङ्गेण, वादिहव्यकृशानुना ।
वादिवेश्याभुजङ्गेन, श्वेतवस्त्रांह्रिरेणुना ॥
सभाया(यां) बाहुमुद्धृत्य, जिनशासनवैरिणः ।
एकया वेलया सर्वे, व्रियन्ते जयवादिनः ॥

येन सूरिश्री**मेरुतुङ्गे**णेत्थं चतुर्दिक्षु गलगर्जिः प्रतन्यते स्वदर्शनप्रसादात् । अन्यच्चाहं चतुर्विधस्य श्रीसङ्घस्य कृतनतिर्बद्धाञ्जलि वार्त (?) सर्वथा निर्जरार्थं देवस्तुतिवाक्यमात्रं अभिनवग्रन्थारम्भं चैनं श्रम्यामि कुब्ज इव नृत्यं वितन्वन् विद्वद्भिरशेषैरुपहास्यमानोऽपि टुण्ट इव कण्डकविमोचनक्रीडादुर्ललितः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"तथाऽपि श्रद्धामुग्धोऽहं, यथा ज्ञातं तथा वचः ।
रचयामि प्रबन्धेषु, प्रसादं कुरु वाणि ! मे ॥"

तथाऽत्र प्रारभ्यते -

जम्बूनामद्वीपे भरतक्षेत्रे इक्ष्वाकुभुवि विनीतायां पुरि अस्यामेवावसर्पिण्यां तृतीयारकसुः(सु)षमदुःषमानाम्नि एकपूर्वकोटिहीने वर्तति सति श्रीनाभिनाम-सप्तमकुलगुरुकाले युगलरीत्या मरुदेवाकुक्षावबातरत् श्रीधनसार्थवाहजीवः सर्वार्थसिद्धिनामविमानात् च्युत्वा । साद्धर्धाष्टमदिननवमास(मास ९ दिन ७)गर्भवासदुःखभुक्तेरनन्तरं चैत्रकृष्णाष्टम्यां ऋषभस्य जनुर्जायते स्म ।

पढमित्थ विमल[1]वाहण च[2]क्खुम-ज[3]समं चउत्थ[4]मभिचंदे ।
तत्तो य पसे[5]णीए, मरु[6]देवे चेव ना[7]भी य ॥ १ ॥

इति श्रीआदिनाथकुलगुरवः सप्त भण्यन्ते । ततो मध्यरात्रावेव षट्पञ्चाशद्दिक्कुमारीभिः कृते सूतिकर्मणि मेरुगिरौ च चतुःषष्टिभिरिन्द्रैः सचतुर्विधदेवनिकायैः कृते जन्ममहोत्सवे ववृधे विभुः । क्रमेण पञ्चभिस्ति-थिभिर्बालचन्द्र इव निस्तन्द्रमूर्तिर्लाल्यमानः सम्पूर्णः सुवृत्तः जीवात्मा(त्म)वत् पञ्चभिरिन्द्रियैः परिभ्राजमानः काले युवराजा संवृत्तः । सुनन्दा-सुमङ्गलाभ्यां कृतपाणिग्रहणः पञ्चभिर्विषयैरूपसेव्यमाने(नैः?) दै (दे)वोपमान् मानुष्यि(ष्य)कान् भोगान् भुञ्जानो विंशतिपूर्वलक्षमितायां कुमारतायामतीतायामिन्द्रादिभी राज्ये निवेशितः । त्रिषष्टिपूर्वलक्षाणि राज्यं कृत्वा पुत्रीं सुन्दरीं ब्राह्मीं च पुत्रशतं च प्रसूय विभज्य सर्वां वसुमतीं शतपुत्राय दत्वा च स्वे पदे मूलराज्ये भरतं निवेश्य स्वयं भगवान् नाभेया दीक्षां जग्राह । व्रतदिनादारभ्य जातवर्षोपवासः कारितश्रेयांसकुमारपारणाभ्यास उत्पन्नकेवलज्ञानो विजहार वसुंधराम् । धर्मतीर्थमवतारयन् भरतोऽपि चक्रवर्ती जज्ञे यस्य चक्रवर्तितां वर्णयतः सुरगुरोरपि रसना अवैदग्ध्यमधुरेव विभाति । यस्यादिमचक्रिणः प्राज्यराज्यलीला सौधर्मेन्द्रस्यापि स्पृहाकरी विस्मयकरी रत्नखानिरिव । तत्तादशं चक्रवर्त्तित्वं भुञ्जतस्तस्यार्षभेर्भरतस्य दक्षिणकुक्षौ सू(शू)लं आविरभूत् कृते दिग्विजये कथमपि पूर्वोपचितं मिथ्याहार-विहाराभ्याम् । ततः श्रीभरतेशकुशलप्रश्नार्थं मघवा ना(आ)ययौ । वज्रिणा पृष्टं कथाप्रसङ्गे नानारङ्गे प्रवृत्ते-किमद्यापि महती पीडाऽस्ति वोहे (वो देहे) ? । श्रीभरतचक्रिणाऽप्युक्तं- दैन्यस्वाजन्यविनयमैत्र्योपरोधनिर्भरं - हे बिडौज (जः) !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ममाद्याधुना प्राणानामप्रयाणे भवदास्यसुधांशुवाक्सुधाधारा महदन्तरायं विलसति । वासव उवाच-किमिति चतुर्दश रत्नानि तव भवने, नवापि निधानानि च, देव्यो देवास्तु षट्खण्डनिवासिनः किङ्करत्वकारिणः, अन्येषां भूभुजामाज्ञाविधायिता । किमुत दिग्विजयं विदधद्भिर्भवद्भिः किमपि दुष्कर्मापि तादशं कृतमस्ति ? इति श्रुत्वा चक्री वदति-भवतां ज्ञानिनां किमपि अज्ञातमस्ति !; धनुर्लीलं सहास्यं सगुणं स्वमाननं कुर्वन्तो भवन्तो मां किं कदर्थयन्ति कृपालवोऽधुना ? । यस्मान्मया "**राज्यं नरकान्तं**" इति नीतिशास्त्रोपदेशं **राजग्रन्थरहस्ये षाड्गुण्यग्रन्थाम्नायं** विस्मृत्य कानि कानि पापानि न कृतानि ?। तद्यथा - पितृपादैर्व्रतं गृहणद्भि स्वपदाधीशः कृतः कुटुम्बनायकश्चाहम् । मयाऽपि स्वकुलं प्रति कालस्वरूपं धृतं असुरविजयिनेव तावत् पूर्वं ते बान्धवा महापुरुषा अष्टानवतिप्रमाणा पितृदत्तपृथ्व्यंशभोक्तारोऽपि बलिनोऽपि व्रतं जगृहुः इति मामवगणय्य स्वेच्छाचारिणं पित्राज्ञाभङ्गकारिणं सर्वसंहारिणं पापिनं लोभिनमद्रष्टव्यमुखम् । अन्यच्च स बाहुबलिर्मया चक्रेण रणे कण्ठे स्पृष्ट इदमालप्यालं च। हे इन्द्र ! मां त्वं किं खेदयसे ?। य कमपि तमुपायं विरचय येन नीरुग् भवामि। इत्युक्तप्रान्ते ज्ञानेन ज्ञात्वा हिमाद्रौ पद्महृदे सहस्रयोजननालपृथ्वीकायकमलोपरि सहस्रपत्रकर्णिकास्थितं **जगदानन्दननामदेवबिम्बं** हरिणेगमेषिणा पदात्यनीकेशेन आनाय्य वज्री तत्स्नात्राम्भसा चक्रिणं नीरुजं चकार। जातमाङ्गलिको नाभेयं नत्वा लब्धाशीर्वादश्चक्री पार्श्वस्थे शक्रे पप्रच्छ शूलकारणम् । अवदद भगवांश्च - "इतो व्यतीते तृतीये भवे श्रीवज्रसेनतीर्थंकरपुत्रत्वे महाविदेहक्षेत्रे पुष्कलावतीविजये पुण्डरीकिण्यां नगर्यां बाहुनामा जातस्त्वम् । व्रतं जग्राह तस्यैव पितुः पार्श्वे । चतुर्दशपूर्ववर्षलक्षाणि अमुं नियमं पालितवान् - 'पञ्चशतीं साधूनां निजलब्धिलब्धेन विशुद्धभिक्षान्नपानेन पारणकं काराप्याहं भोक्ष्ये नान्यथा' । एकदा भिःसदामिश्रिताहारदानपापेन अनालोचितप्रतिक्रान्तेन कर्मोदयेन भरतेश ! ते शूलं जातम् ।" तत् श्रुत्वा प्रमुदितः स चक्री । ततः सर्वेऽपीन्द्रादयो देवा नराश्च कर्ममर्म दुर्भेद्यं प्रतिपद्यन्ते स्म । ततोऽन्तःपुरे प्राप्तकेवलज्ञानो अभङ्गवैराग्यरङ्गतरङ्गतया व्रतं गृहीत्वा लोकव्यवहारेण -मोक्षं ययौ ।.

श्रीस्तम्भनजिनचरिते, **सूरिश्रीमेरुतुङ्गमतिलिखिते** ।
रोगोपसर्गहारी, प्रथमो भरतप्रबन्धोऽयम् ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इति अमन्दजगदानन्ददायिनि आचार्यश्रीमेरुतुङ्ग विरचिते श्रीदेवाधिदेव-पटले धर्मशास्त्रे श्रीस्तम्भनेश्वरचरित्रे पवित्रे द्वात्रिंशत्प्रबन्धबन्धुरे प्रथमः श्रीभरतेश्वर प्रबन्धः समाप्तः ॥

मा कुप्यन्तु कृपावन्तः, प्रति मां कविकुञ्जराः ।
कविकीटकतुल्योऽहं, हन्तव्यो नास्यमामता ॥ १ ॥

***

(प्रबन्धः २)

यदेकमपि संसारे, नानाकारकरम्बितम् ।
दर्शनैरपि दुर्लक्ष्यं, तद् ज्योतिः प्रणिदध्महे ॥ १ ॥

क्वा पि देवा न के सन्ति भक्ता अपि तथाप्यहो ।
सेवकस्वामिता कापि, **श्रीमेरु-स्तम्भनेन्द्रयोः** ॥ २ ॥

अस्मिन्नेव जम्बूद्वीपे भरते च वर्षे अयोध्यायां श्रीयुगादिदेवनिर्वाण-कल्याणकदिनात् सुषमदुःखमारके तृतीये वर्षत्रयसप्तदशपक्षहीने व्यतिक्रान्ते पञ्चाशत्कोटिलक्षसागरोपमेषु गतेषु सगरजितजन्म । सगरस्य चक्रवर्तित्वं व्याख्येयम् । एकदा च तस्मिन् श्रीसगरचक्रवर्तिनि सभासीने सति अकस्मात् कुतोऽप्यागत्य केनाप्यवधूतवेषधारिणा नरेण निवारकैर्निवार्यमाणेनापि स्वाम्यादेशेन प्रतीहारसहमध्यप्रविष्टेनैकं मृतबालकं उपदावद् राज्ञोऽग्रे विमुच्य सभान्तरित्यूदानम्(रित्युदितं) - हे राजन् ! मुष्टोऽस्मि दैवेन, मृतोऽकाले मे पुत्रोऽयं, कुरु मे प्रसादं यथा जीवत्यसौ । तत् श्रुत्वा राजोवाच-भो पुरुष ! मयि विजयिनि अकालमरणं कुतः सम्भाव्यते अश्रुतपूर्वम् ? । स्वामिन्नहं न जाने दैवविलसितम् । इत्युदिते तस्मिन् दुःखिते पुरुषे राजवैद्यवृन्दाय सजीवकरणाय तं मृतमर्भकं ददौ । तेऽपि पर्यालोच्य विदग्धा वैद्याः समयोचितमुत्तरं विज्ञप्तवन्तः - हे राजन् ! यत्र गृहे कोऽपि कदापि न मृतोऽस्ति भरतेऽत्र प्रतिगृहं शोधयित्वा तद्गृहरक्षां समानीय सजीव एष विधीयते । तथा कृते न लब्धा । ततः सगरः प्रोवाच - भो पूत्कारकारक ! किं रोदनशीलो भवान् नैवं वेत्ति सर्वेषामपि जीवानां मरणान्तमेव जीवितम् ? । ततः किमर्थं क्लिश्यते स्वात्मा विवेकविकलैः पुम्भि : ? । राजोक्तं स पूत्कारवान् विचार्य साक्षेपं वचः प्रोवाच-भो नरेन्द्र ! मयेति न ज्ञातं महात्व्यास इव भवान् संसारस्वरूपं व्याख्यातुं वैराग्यं तरङ्गयितुं पण्डितत्वं करिष्यति । प्रजानाथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इव सेवकदु:खमूलं समूलमुन्मूलयिष्यति भवान् । हे सगरचक्रवर्तिन् ! निजाङ्गजविपत्तिर्भृशदु:खकारिणी हृदयगता क्षुरिकेव दु:सहा स्यात् । राज्ञेति ब्रूतं ततः, भो ! दु:खितशोकोऽयं नित्यबुद्धेर्हृदि दार्ढ्यं बिभर्ति न तु अनित्यतासम्पन्नस्य अतः कारणाद् रसे रसान्तरसङ्क्रमणं वैरस्याय सम्पद्यते । द्रव्याणां परिणतिः परिणामविश्रसा स्यात् । राज्ञोऽपि रङ्कस्यापि मृत्युः पुत्रवियोगादिदु:खान्यपि भवन्ति, परं भूभुजो बहुपुत्राः, सामान्योऽयं जनः पुत्रैको वा नैकपुत्रोऽपि स्यात् । यथा मे षष्टिसहस्राण्यङ्गजानां तवैकोऽङ्गजन्मा । ततः सोऽवधूतवेषी इति राज्ञा प्रोच्यमाने वचनव्यूहे छलेनान्तः प्रविष्टः-भो द्वितीयचक्रवर्तिन् ! धीरो भव । वीरत्वं अवलम्बस्व । सावधानः शृणु । यथाऽसौ मत्पुत्रो दृष्टस्त्वया तथा तव पुत्रषष्टिसहस्राणि मृतानि मया दृष्टानि । इति श्रुत्वा मुमूर्च्छ चक्री । पपात सिंहासनात् । भुवं ददर्श । सर्वत्र सरोदनो हाहाकारः प्रससार । विललाप विह्वलं निखिललोकः सशोकः । ततो दक्षैः शीतलोपचारैः स्वस्थीकृतः पृथ्वीनाथः तं पुरुषं पारिपार्श्वकैर्बद्धं कदर्थ्यमानं विलोक्य सुखिनं कृत्वा पप्रच्छ । ततः स शक्रो द्विजरूपधारी प्रगल्भवाक् जजल्प वाचं - भो भरतनाथ ! ते तव सुतास्तवान्तिकान्निर्गता प्राप्तादेशा नानाश्चर्यधरां धरां भ्रान्त्वा भरतचैत्यपरिपाटीं विरचयन्तो निजेच्छां पूरयन्तोऽष्टापदं गत्वा पूर्वजप्रतिष्ठितं देवगृहं च निरीक्ष्य हृष्टाः प्रोचुः - भो मन्त्रिणः ! क्वापि विलोकयन्तु ईदृशमपरमचलं यत्रास्माभिरपि निजा कीर्तिः प्रतिष्ठीयते देवगृहदेवबिम्बादि सप्तक्षेत्रद्रव्यव्ययेन । तथा कृते न प्राप्तः क्वापि तादृशोऽचलः मन्त्रिभिः । तैः तद्दु:खनिवारणार्थं बहु विमृश्य कृत उपायः । ततः सचिवास्ते प्रोचुः हे कुमाराः ! अतः पश्चान्नृपाः पापिनो लोभिनश्च भविष्यन्ति । तीर्थोपद्रवकारिणः सुवर्णमाणिक्यादिद्रव्यलुण्टाकाश्च । ततोऽभियोगः क्रियते । तत् पूर्वजकारिततीर्थरक्षार्थं परितः परिखा खन्यते । दण्डरत्नेन तथा कृतम् । सहस्रयोजना गर्ता पपात पञ्चशतयोजनपृथुला । ततो व्यन्तरनगरेषु उपद्रुतेषु ज्वलनप्रभनागकुमारराजागमनम्, कुमारविनयभाषणकोपापहरणं, शिक्षादानं, 'मदाज्ञां विना पृथ्वीकर्म न कार्यं' दत्वेति च स्वस्थानगमनम् । ततो हे महाराज ! परिखाकण्ठे ये केचिद् जीवा अरण्यचारिण आयान्ति ते सर्वे मूर्छां गत्वा मध्ये पतन्ति । तथा दृष्ट्वा मन्त्रिपार्श्वे कुमारैः पृष्टं - कतिजीवानामस्थिभिः सम्पूर्णा भविष्यन्त्येषा ? । किमेतत् पापं कारिता भवद्भिः ? । ततस्ते सचिवाः प्रवदन्ति स्म - यदि जलापूर्णा भवति न पतन्ति तदा यथा अरण्यान्यां जलाशयेषु । एवं श्रुत्वा दण्डरत्नेन मूलगङ्गाप्रवाहादाकृष्याम्भः पातितवन्तः तस्यां परिखायां कैलाशं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परित: । तथाकृते महानुपद्रवो बभूव । उत्त्रस्तं व्यन्तरकुलम् । अननुभूतपूर्व इव प्रलयकाल: संवृत्त: । अवधिज्ञानेन ज्ञात्वा निजाननुलग्नान् 'तात ! मातर् ! भ्रातर् ! त्रात हे शरणवीर ! धीर ! अस्मान् शरण्यान् रक्ष रक्ष' इति ब्रुवाणान् मृदुभाषणपृष्ठिहस्तदानादिना विशोकान् विधायाष्टापदाधत्ति(धित्य)कायां शिबिरान्त: कुमाराणां पटकुटीषु सर्वास्वपि षष्टिसहस्राणि दृष्टिविषसर्परूपाणि वैक्रियाणि निर्माय रोषपोषपूर्ण: स्वयं ज्वलनप्रभस्तम्यां(स्यां) तस्थौ । तेऽपि कुमारा: प्रगे अपनिद्रिता प्रथमोत्थान एव प्रथमाक्षिसन्निपातेनैव तं भुजगेन्द्रं तथारूपं सर्वेऽपि समकालं पश्यन्ति स्म । क्षणाद् भस्मसाद् बभूवु: । सैन्यजनेनाऽपि काष्ठभक्षविधि: सूत्रित: । तत: सौधर्मेन्द्रासनकम्पेन महदरिष्टमापतितं भरतखण्डे विभाव्य ममेदमाभाव्यं दक्षिणभरतार्धाधिपत्यात् निश्चित्येति सर्वसैन्यलोकं वराकं तथाऽपक्रममाणं गिरेति निवार्य 'भो लोका ! प्राणान् मा त्यजन्तु भवन्त: । राजाग्रे भो लोका ! अहं कथयिष्ये 'मृतास्ते सर्वेऽपि पुत्रा:' । सैन्यं तु सर्वमागतमकुशस्फाटं ते हे भूजाने !। ततस्तस्यानुलग्नं अयोध्यापुरि प्रविष्टम् । सोऽपि मृतबालकपूत्कारबलेन भूभुजो दर्शनं सुलभं भविष्यति प्रपञ्चेनानेन सर्वं वृत्तान्तं कथितवान् । तमेनं मां शक्रं जानीहि त्वम् । तत्रान्तरे एक(क:) स्थानपुरुष: पूत्कुर्वन् समेत्य भृता परिखा गङ्गाप्रवाहेण उल्लटिता च प्लाव्यते मध्यप्रदेश: इति विज्ञापनां चकार-हे महाराज ! कुरु रक्षाम् । कुमारविलसितं श्रोतमुप्यशक्यम् । ततो जह्नुकुमारनामा पौत्र: पितामहं सगरं तदम्भोरक्षार्थं चलन्तं निवार्य स्वयमेकाकी प्रासादेशश्चचाल । रात्रिलब्धतत्ता दृशशुभस्वप्नद्विगुणितोच्छा(त्सा)हबलेन सोऽपि गच्छन् निर्भयं गगने शब्दं दैवं अश्रौषीत् - 'भो जह्नो ! कुमारश्रेष्ठ ! इदं कर्म कुर्वता भवता कस्याप्याशातना न विधेया' इति पितामहदत्तां शिक्षामाशिषमिव मूर्धा(र्ध्ना) वहन् भो: ! कल्ये **माकन्द**नामसरसि **रुक्मिणीवटस्या**धो **वासवदेव**कुलिकायां निवासार्थं रात्रौ स्थेयम् । तत्र **विश्वेश्वरनामा** देवस्ते मनोरथं पूरयिता । तथा चकार सोऽपि तद्वच: । रात्रौ तस्य कुमारस्य वासार्थं कृतस्थितेरिन्द्रादिदेवैरुपास्यमानो **विश्वेश्वर**नामा स देव: परितुष्ट: देवाधिष्ठायकै: सतिलकाक्षतपूर्वं तस्य जह्नो: कण्ठे वरमाला न्यस्ता पृष्ठहस्तश्च दत्त: । उक्तं च-गृहाणैनं दण्डं भो महावीर! शृणु देवादेशम्-'आगच्छतो गङ्गाप्रवाहस्य पुरा दण्डेनानेन रेखा प्रकाश्या त्वया । रेखां दष्ट्वा अजल्पिता व्याघुट्य व्रजिष्यति। भवन्नाम्ना जाह्नवी गङ्गेति प्रसिद्धिं यास्यति च ।' तथैव जातं द्वितीयेऽह्नि । ननु अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीगुरुप्रासाददेवताराधनशुभकर्मोदयानां प्रभाव: ।

रसो रसायनं योगो, मन्त्रो वर्तिरथाञ्जनम् ।
सिद्ध्यन्ति सर्वकर्माणि, प्रसन्ने परमात्मनि ॥ १ ॥

भ(भा)गीरथिप्रबन्धोऽयं, द्वितीयस्तु समर्थितः ।
सलिलोपसर्गहारी, चरिते स्तम्भनप्रभोः ॥

इति अमन्दजगदानन्ददायिनि आचार्यश्रीमेरुतुङ्गविरचिते श्रीदेवाधिदेवपटले धर्मशास्त्रे श्रीस्तम्भनेश्वरचरित्रे पवित्रे द्वात्रिंशतप्रबन्धबन्धुरे द्वितीयः प्रबन्धः ॥

*****

(प्रबन्धः ३)

नमो ममार्हते तस्मै, कस्मै भवतु भावतः ।
यदोजसा तमस्त्रस्तं, स्मरघस्मरकारिणा ॥ १ ॥

जम्बूद्वीपे भरते च दक्षिणस्यां दिशि विदर्भदेशे कुण्डिनपुरे **मान्धाता** नाम राजा । तत्पत्नी च **मन्दोदरी** । तयोः पुत्रो **मदनदेवराजा** राज्यं करोति । स्वभावात् सप्तमनरकतालककुञ्चिकाप्राये पापिनां परमप्रिये परदाराभिलाषरसे स्वभावादेव तस्य लाम्पट्यं वर्वर्ति । तत एकदा तेन राज्ञा तन्नगरनिवासि**देवशर्म**नामभूदेवप्रणयिनी **रूपश्रिनी** नाम जलकेलिविहारार्थं गतेन ददृशे । साऽप्युद्यानिका दिन निमित्तकृतमज्जना विद्युदिव समुल्लसन्ती विभ्रमेण राज्ञा बलादपहृता । श्येनेन चिल्लीव नीयमाना विललाप साऽपि चिरं इति – 'हे राजन् ! हे प्रजानाथ ! राजरक्षितानि धर्मवनानि यस्मात्, वृतौ चिर्भटानि भक्षयितुं समुद्यतायां कस्याग्रे पूत्क्रियते ? । दिनकरकुलादन्धकारप्रसूतिः, सुधांशुमण्डलादङ्गारवर्षणं तदिदं जातं महाराज ! यन्मादृश्या वराक्या अनिच्छन्त्या पतिव्रतलोपो विधीयते ।' इत्युक्तिप्रान्त एव धर्मशास्त्रकुण्ठैर्वण्ठै राजान्तःपुरक्षिप्ता मुमूर्छ । अथ सोऽपि तत्प्रियो स्वशक्तेरनुसारेण जीवितमपि पणीकृत्य भूपं विज्ञाप्य विज्ञाप्य, सर्वेषां राजवर्गिणां कार्यस्वामिनामग्रे पूत्कृत्य पूत्कृत्य, प्रतिभवनं प्रतिजनं विलप्य विलप्य, ग्रथिलवत् भ्रान्त्वा भ्रान्त्वा, अलब्धोत्तरराजद्वारप्रवेशप्राप्तार्धचन्द्रोऽपि भस्मोद्धूलिताङ्गोऽपि कृतकौपीनोऽपि एकाक्यपि अनीश्वरत्वं प्राप्तः । ततः स द्विजः प्रियावियोगार्त्तो जातदेशपट्टो देशान्तर **रुलन्** रङ्कवत् बुभुक्षादिमहादुःखवेदनाभिः काष्ठभक्षणेन विपन्नः पश्चादग्निकुमारो देवो जातः । काले समयं प्राप्य तेन वैरेण सर्वं ज्वालयितुं देशं सन्नद्धः । तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सति राज्ञा सप्रधानेन तस्य प्रतिकाराय घनं मन्त्रितं, पुनस्तस्य कोऽप्युपायो न लग्नः। यस्माद् दैवे निरुन्धति सति प्रयासपुरुषाणि पौरुषाणि निबन्धनतां न वहन्ति। ततस्तत्र पुरे **सीमन्धरसूरि**नामकेवली ससङ्घः सुवर्णकमलोपविष्टो धर्मं कथयन् राज्ञा बाह्यालीं कर्तुं गतेन सता निरीक्षितः। राज्ञाऽभिवन्द्य च विज्ञप्तः - हे प्रभो ! धर्मगुरव एव भवन्तः संसारतारका अबोधबोधदा बोधिपारग्रामदा वा आमुष्मिकं अल्पपुण्यानां मादृशा हितकारि प्रासङ्गिकं निमित्तम्। गुरुराह-किं पृच्छसि भो जनपते ! मदन्तिके देशोपद्रवनिदानं रक्षोपायं च प्रष्टुकामोऽसि ?, तत् शृणु भो राजन् ! विप्रभार्याशीललोपकल्पनया दुःखमिदं अनुभवन्नसि, परत्र घोरं च नरकं यास्यसि अकृतप्रतीकारः। ततो मुमोच तत् विप्रकलत्रं स राजा। अङ्गीकृतं स्वदारसन्तोषनाम व्रतम्। अथ श्रीसङ्घोपरोधाद् राजविज्ञापनानन्तरं तद्दुष्टदेवदमनाय गुरुणोक्ता शिक्षा- भो भूमिनेतः। दक्षिणदिशि मलयाद्रौ चन्दनवने पन्थासरसि देवकुले **जगज्ज्योति**र्नाम बिम्बं **पार्श्वेशस्य** समाराधय। तत्र गच्छ। ततस्तद्बिम्बं ततः स्थानकात् गृहीत्वा दक्षिणकरकनिष्ठाङ्गुल्यग्रे संस्थाप्य अलग्नस्थलाग्रं पुरेऽत्रसमानय। महता विस्तरेण प्रवेशमहं कुरु। अष्टाह्निकां रचय। देशान्तर्डिण्डिमडम्बरं रचय। अम्बरं साम्बरं कुरु। लोकानाकार्य सकलधर्मविधौ देवपूजने वितरणे च शिक्षां देहि। आध्वजांतं गर्तापूरात् जिनभवनं हेमस्तम्भं मणिभित्ति रत्नबद्धभूमिं सर्वोपहारपूजावस्तुसम्भृतं सर्वदेवपरिचारिजनाकीर्णं विरचय्य देवपूजापण्डितान् परमार्हतान् महाश्रावकान् शान्तिकादिकर्ममर्मनिपुणान् मानय। मान्यान् अग्रे कुरु। धनं निधनं विमृश्य, तृणोपमां श्रियं सम्भाव्य वितर दानम्। कारागारं व्यर्थनाम रचय। वैरं मुञ्च। सर्वैः सार्धं विनयं कुरु। मिथ्यादुःकृतं देहि संसाराम्भोधितरणप्रवहणम्। अनया रीत्या महाचैत्ये निवेश्य तत् **श्रीजगज्ज्योति**र्नाम देवबिम्बं महापूजनमहामन्त्रस्मरणमहास्नात्रकरणश्रीसङ्घ वात्सल्यादिभिरुपायैर्विगलिते कृशानूपद्रवे त्वं सुखी भव हे नृप !। एवं चानुशिष्टे सति स दुष्टदेवो देशान्तः प्रवेशं न कर्ता तद्देवभक्तसुरगणेन भापितः। पश्चाद् व्याख्याश्रवणागतविद्याधरवृन्देन साधर्मिकवात्सल्यार्थं तत्र सरोवरगमने राज्ञः साहाय्यं चक्रे। एवं विहिते च तत् तथा जातं, राजाऽपि सम्यग्दृष्टिर्जातः प्रपन्नद्वादशव्रतः। महती जिनशासनप्रभावना जाता। तत्र पुरे सर्वदा सुमनोव्रजसम्भृते देवभवने तस्मिन अशेषविशेषगतशोकैः सुश्रावकैर्विरचिताः समयोचिताश्चैत्यपरिपरिपाटयः प्राकट्यमानशिरे अतुच्छा महोत्सवा प्रसस्रुः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनलोपसर्गहारी, स्तम्भनचरिते तृतीयबन्धोऽयम् ।
सुजनहृदानन्दकरे, चरितं श्रीमदनदेवस्य ॥ १ ॥

*****

(प्रबन्धः ४)

ये जीवाः कर्मवशतो, मत्तोऽपि जडबुद्धयः ।
तेषां हिताय गदतः, सफलो मे परिश्रमः ॥ १ ॥

परवस्तुसङ्ग्रहमृते, निर्वाहो नैव चात्र कस्यापि ।
परपुत्रिभिर्लोकः, करोति पाणिग्रहं यस्मात् ॥ २ ॥

सेवाहेवाकदेवासुरनरनिकरस्फारकोटीरकोटी-
कोटीव्याटीकमानद्युमणिसममणिश्रेणिभा वेणिकानाम् ।
राजन्नीराजनश्रीचरणनखशिखाद्योतिविद्योतमानः,
स्थेयश्रेयः स देयात् तव विशददशाबन्धुरं पार्श्वनाथः ॥ ३ ॥

ये केचिद् विद्वांसो, भुवने विलसन्ति भारतीपुत्राः ।
गृह्णामि तत्कवित्वं, मम सर्वे सहोदरा यस्मात् ॥ ४ ॥

अस्मिन्नेव जम्बूद्वीपनामद्वीपे भरतक्षेत्रे अयोध्यातः पश्चिमायां **वाणारसे देशे काश्यां नगर्यां** समारोपितकोदण्डाकारनिभायां पञ्चगव्यूतिमात्रक्षेत्रायां **हिरण्य**नामो राजऽभूत् । तस्य प्रिया **कमला** । तयोः पुत्री **जरत्कुमारी**नाम कुमारी । सा प्राप्तवयाः सती सतीशिरोमणिः सखीवृता वनान्तं क्रीडार्थमेकदा गता । प्रविष्टा तामसिकायां वाटिकायां यत्र धारागृहं उल्बणोष्णकालौषधं च । यत्र च मेघमण्डपो निदाघदाघधन्वन्तरिः, यत्र च तापप्रतापप्रशान्तकारिणी अगुडिलबुहल(बहुल)-जलकल्लोलाकुला **षड्डोषलिकामहाविद्या** विद्योतते । तस्मिन् प्रदेशे पुष्पावचयं कुर्वती जातिगह्वरे प्रविष्टा । यावत् करेण पुष्पं चिनोति तावद् दन्दशूकेन दक्षिणकराङ्गुष्टे दष्टा । तया धन्यया सदयया न पूत्कृतं 'माऽस्य कोऽपि पीडां करोतु मम वाचं श्रुत्वा' । स्मृतपञ्चपरमेष्ठिनमस्कारा जातविषापहारा क्षणार्धेन जाता । तुष्टश्चासौ नागकुमारदेवः सर्परूपी । दत्तो वरः 'अहं पातालेशस्य शेषनागस्य **मुकुटवर्धन**नामा पुत्रोऽस्मि, तव पितृगृहं नागलोकोऽद्य प्रभृति, तव रसातले गतिरस्खलिताऽस्तु' । ततो देवः स्वस्थानं ययौ । कुमार्यपि जातप्रमोदा चिरं रत्वा जगाम स्वं वेश्म ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथैकदा राज्ञा वनवासिने **जरत्कुमार**नामऋषये सोपरोधं सभासमक्षं दत्ता पादयोर्निपत्य उक्त्वेति च - 'पूरय मे पणमीदृशं पुरोक्तं यो मत्पुत्र्या नाम्ना ऋषिर्भविष्यति तस्मै दास्येऽहं स्वसुताम्' । सोऽपि **जरत्कुमार**नामा अनिच्छन्नपि परिणीय वनान्तं(न्तः) प्रतस्थे । इति सन्मुखं पणं विधाय-'यदा मदभक्ता एषा तव पुत्री भविष्यति तदा त्यक्ष्यामि' । 'अस्तु'-राज्ञोक्तम् । साऽपि च यौवनं सफलं कृतवती पतिरसेन निर्व्याजेन । सोऽपि निजायै तस्यै प्रियायै पञ्चेन्द्रियाह्लादकारि पञ्चधा वैषयिकं सुखं उपढौकितवान् । ततो द्वादशे वर्षे आपन्नसत्त्वाऽभवत् । अथैकदा च दिनास्ते सन्ध्याव्रतलोपं विभाव्य सुप्तं पतिं जागरयाञ्चकार । 'मयि निद्राभङ्गकारिण्यां एष कोपं कृत्वा शापं दास्यति मत्त्यागं करिष्यति वरमिदमस्तु' इत्यङ्गीकृत्य पादाङ्गुष्ठनिपीडनेन सहसोत्थापितः । सोऽप्युत्तस्थौ । दण्डाद् घट्टितभुजङ्ग इव वाग् बुहल(बहुल)गरलवर्षी केन पापिनोत्थापितोऽस्म्यहम् ? । साऽवोचत्-न केनापि, प्राणेश हे ! मयाऽनया त्वं विनिद्रितः पापिन्या । 'यद्येवं त्यक्तासि रे ! मया दुराचारिणि ! भर्त्रभक्ते ! स्मर स्वं पणं, दूरे भव, मा स्पृश मां, अद्य प्रभृति स्वेच्छया वानप्रस्थोऽहं तपः करिष्ये' । साऽपि तं प्रति विनयनता विज्ञप्तवतीति- 'क्षमस्व ममापराधं एनं मत्कृतं, न पुनः करिष्ये, प्राणनाथं(थ!) गच्छत्प्राणत्राणोपायं कुरु' । तत् श्रुत्वा जगौ मुनिः-'हे पुत्रजननी(नि!) मम बीजाधानं तवोदरान्तः प्रधानं निधानं, दास्यति ते समाधानं, मा कुरु खेदं, हे सुन्दरि ! कुकर्मकवचः कालादत्रुटत् तव प्रतिपन्नपितृगृहस्य सकलनागलोकस्य सतक्षकस्य सेन्द्रस्य देवलोकस्यापि च सर्पसत्रसाङ्कट्ये विकटे सति अभयदानदातृतया त्रिभुवनोपकारी मदङ्गजो भविष्यति ।' मुनिरित्युक्त्वा वने तपस्तेपे । साऽपि पितृगृहमागत्य सुखेन दिनान्यतिवाहयति पाताले याति च । पूर्वप्राप्तवरबलेन जातः पुत्रः समये । तथा **आस्तीक** इति नाम दत्तम् । शेषनागप्रभृतीनां भागिनेयतया मान्यः पाताले नागकुमारैः सार्धं निरङ्कुशः क्रीडति । काले च स पठितवान् वेदं धनुर्वेदं च । अथ तत्रान्तरे नर्मदातटे विन्ध्याद्रौ द्वादशशतपल्लीवनमध्ये **राजभवन**नामस्थानके चन्द्रवंशी पाण्डवसन्तानी **परीक्षि [त] राज**पुत्रः **जि(ज)न्मेजय**नामा सर्पसत्रं कारयन् वर्तते । तत्र च यज्ञवाटके वेदिकायाः पुरो यज्ञस्तम्भे निहिते गाह्र(र्ह)पत्याह्व(हव)-नीयवेदिनामसु त्रिषु अग्निकुण्डेषु जातवेदःसु सर्वसम्पूर्णसमित्समृद्धेषु याज्ञिकैर्मन्त्रेणाकृष्य सर्वस्मिन् नागलोके जिनप्रमिताङ्गुलविश्वयोनिनामश्रुच् शृङ्गाग्रे अवतारिते सति, अग्निकुण्डोपरि सेन्द्राय सतक्षकाय नागलोकाय हे द्विजेन्द्र !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहुतिं देहि, कुरु सर्वं स्वाहाभुक्सात्, इति। राजाज्ञया तथा कृते पुरस्तादेव प्रादुरासीत् तावता स **आस्तीक**नामा कुमारः । ततो **वाणारसी**क्षेत्रात् केनाप्यानीत उत्थाद्यः (उत्पाट्यः ?) ब्रह्मेव वेदोच्चारं दर्शयन् विशुद्धं सर्वतो विलोक्य निजेनाभयदानामृतवर्षिणा लोचनेनाश्वास्य प्रलयकालरूपिणि धर्मस्य यज्ञे सर्वथा मृतं धर्मं समूलं दयालक्षणं जीवं विधाय सर्वशुभधर्मेषु साम्राज्यमिव संस्थाप्य तथा चेदं सभान्तः पपाठ सोत्साहं सकृपं सविनयं यथा सर्वे याज्ञिकादयः श्लथीकृतस्वकृत्यास्तस्थुः । तैश्च हृदि मीमांसितं चिरं तददृष्टपूर्वकौतुकमिव दृष्ट्वा आः किमेतत् जातम् ?, कौतस्त्योऽयं कोऽप्याकस्मिक एषः कारणपुरुषः प्राप्तः ? । अयं पूर्णमनोरथः **सन् यज्ञफलोपमः** सम्भाव्यते, हतेच्छः पुनर्यज्ञोपप्लवरूपीव विभाति । शापानुग्रहसङ्ग्रहविग्रहग्रहोऽयं यस्मादेष दरीदृश्यते अस्मन्मनस्त्वं पुरुषस्यानुचरवदनुसरीसरीति । बहु किं बम्भण्यते ? अस्य वपुर्वर्चस्तथा परिपोस्फुरीति यथाऽस्य किमप्यसाध्यं महापुरुषस्य नास्ति । ततस्तैः सर्वैः सम्भूय 'सर्वस्याभ्यागतो गुरु'रित्याम्नायं धर्मशास्त्राणां स्मरद्भिः यथोचितं सबहुमानं सविनयं आसनाञ्जलिबन्धादरपूर्वं प्रणिपातादि तस्य चक्रे । निषिद्धस्तु वेदं पठन् न च तिष्ठति । ततः स राजा सविनयं नतशिराः प्राञ्जलिर्जजल्प-'महापुरुष ! विरम पाठश्रमात् । तवेप्सितं यत् तदहं दास्ये । परं एतां मे विज्ञापनां सावधानोऽवधारय । चिरकालेप्सितं ममेदं यावदद्य पुष्पश्रियमधिरोहति तावद् भवता सुधासमेनापि सा कलिकैव दन्दह्यमाना सम्भाव्यते । अन्यच्च हे महोत्साह! महाबाहो ! कुमार ! **मौलक्य**स्यास्य याज्ञिकस्य **भारद्वाज**नाम्नः पिता ममापि च तक्षकेन दष्टौ मृतौ इत्यालप्यालं "ते पुत्राः ये पितुर्भक्ता" इति वाक्यं स्मरन्तौ चावां अमुं क्रतुं कर्तुं उपक्रान्तौ । सर्वनागकुलाहुतिः सतक्षका होतव्या श्रुचोऽग्रे दृश्यते । एष आवयोर्द्वयोः चिरस्वीकृतो नियमोऽस्ति । अमुं धर्मं मां प्रति प्रकटयन्तोऽमी द्विजा वेदविदः प्रार्थितयज्ञभागाः सर्वेऽपि त्वां बहु मानयन्ति । ततः क्षणार्धं एकं तव मनः पीडयितुं विलम्बेन वयमलम्भूष्णवः । ततः पूर्णमनोरथा महतीं भक्तिं करिष्यामः। अथवा त्वं किं याचसे ? त्वं भण तद् गृहाण पूर्वम् । इत्युक्ते स प्रोवाच दशनद्युतिभिः सर्वतमांसि कण्ठे गृह्णन्निव प्रकृतिसुन्दरः भद्रकभावः आस्तिकशिरोमणिः सर्वानाहूतसहायः सर्वजीवगणनिष्कारणवत्सलः अतुच्छः स्वच्छः सकृपः सत्रपः सत्यवाक् परधननिधनदृश्वा सकलशब्दब्रह्मवेदी दाता त्राता च ब्रह्मचारी परोपकारी परमार्हतः यशःशाश्वतः **पार्श्वनाथवंशाभरणं** पराक्रमी गम्भीरः धीरो वीरश्च

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजत्स्फातिः क्षत्रियजातिः शुभनीतिः प्रदर्शितपुण्यरीतिः दूरीकृतभीतिः रसनेन्द्रियामृतमोचनः दयार्द्रलोचनः सर्वगुणः अनभ्यर्थितसदासर्वसाधुः असम्बन्ध बान्धवरूपः । 'भो ! भो ! शृण्वन्तु सर्वे सावधानाः । वाणारसे देशे काश्यां **जरत्का(त्कुमा)**रमहर्षिपुत्रोऽहं **जरत्कारी**(त्कुमारी)कुक्षिसम्भूत **आस्तीक**नामा । मध्याह्ने गङ्गातटे कृतस्नानः पवनगुंजयोत्पाटितः सुखासनाधिकसुखं अनुभवन् **सिन्दूरगिरौ रक्तशृङ्ग**सानुनि देवदारुवने द्वादशकोटिनामवैश्वानरकुण्डे सिंहासनस्थं सर्वदेवोपासितं सर्वनाथनाथं **अमृतेश**नामदेवबिम्बमद्राक्षमद्य । ततः स्वामी प्रणाममात्रेण तुष्टः वाक्यसिद्धिर्भवतु भो आस्तीक ! ते वरमिति ददौ मह्यं भगवान् । इत्यादेशं च दत्तवान्--निजमातृपितृगृहस्य सतक्षकस्य नागलोकस्य सेन्द्रस्य च देवलोकस्यापि च जीविताभयदानदानात् तं च जनमेजयं नृपं कुधर्मकर्मशर्मावलोकिनं पापिनं निरापराधजीववधपातकिनं कुशास्त्रप्रणीतकुमार्गान्धकारभारप्रहतनयनं पापनुबन्धिफलेन राज्येन पापानुबन्ध्येव फलं चिन्वन्तं समुद्धर । त्रिभुवनमपि च । ततो राजन् ! भोः ! स देव आशिषं दत्तवानिति च मह्यं सर्वोपासकदेवसमक्षं 'शिवास्ते सन्तु पन्थानः' ।

"कुशलं कुशलं नि(?) बिन्दवो मुनिसन्ध्याविधयः सृजन्तु मे ।
अपि सन्तु शिवा दिवानिशं हविशे हेलिमखा हविर्भुजः ॥"

इति खे देववाणी उच्छलिता । पुष्पवृष्टिः शिरसि मे जाता । देवादिष्टं मां प्रति "गच्छ वच्छ(वत्स) शीघ्रं प्रदीयमानां तत्र यज्ञाग्नौ मूलाहुतिं याचस्व श्रुचोऽग्रात्" इत्युक्तान्ते तद्देवप्रभावेण ततः स्थानकात् हुङ्कारोच्चारसमं समेतोस्मि । मूलाहुतिमेनां याचे । मा विलम्बं कुरु भो राजन् ! प्रदीयतां स देवो यदि ते मनसि प्रमाणम् । इति निशम्य वचः सर्वे हताशाः सन्तो वराका इव मृतास्तस्थुः मर्कटा इव परस्परास्यदृश्वानः काकपोता इव खसूचिनः[१] x x x x

तु मा मुदिरप्रेक्षामीक्षांचक्रुस्ते ब्रह्मण्या इति श्रुत्वा मरणमिवोपागतं इति मन्यमानैः सा तस्मै दत्ता मूलाहुतिः । करे दक्षिणे मुक्ता । हुता इवात्मानं मन्यमाना सुधांशुमण्डलशीतलं **आस्तीक**करतलं कमलकोमलमलञ्चक्रुः ते विषधराः लब्धचेतना स्वसम्भालितशरीराः कृतपवनाहारा विगतदुर्दशाभाराः सुखसञ्चारा सभागत स्वदीप्तिप्रकारा **आस्तीक**स्तुतिमुखव्यापारा वरदानोदाराः त**मास्तीकं** दृष्ट्वा प्रणम्य

१. अत्र २२ तमं पत्रं नास्तीति पाठस्त्रुटितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्तुत्वा सतारस्वरं वरदानपूर्वं प्रोचुः -

सर्पापसर्पभद्रं ते, दूरं गच्छ महाविष ।
जिन्मेजयस्य सत्रान्ते, आस्तीकवचं स्मरा(र) ॥ १ ॥

आस्तीकवचनं श्रुत्वा, यदि सर्पो न निवर्त्तते ।
सप्तधा भिद्यते मूर्ध्नि, **शंसवृक्षफलं** यथा ॥ २ ॥

आस्तीकेनोरुगैः सार्धं, पुरा यः समयः कृतः ।
स यदा समयः सत्यो, जन्तुं हिंसन्तु माऽहयः ॥ ३ ॥

स मे शरणमास्तीकः, पुत्रो यो जरत्कारयोः ।
यत्प्रीतिबद्धमनसो, न दशन्ति भुजङ्गमाः ॥ ४ ॥
आस्तीकस्य च यत्राज्ञा, वरदास्तत्र पन्नगाः ।
दयागुरुणा आस्तीकेन सम्भाषिता इति (?) ॥ ५ ॥

प्राणातिपातविरमणव्रता जाताः । ततो **नागमतं ज्ञानमतं** च कथ्यते । **पञ्चमीदिने नागपूजनं** ततो लोके प्रसिद्धिमगमत् । आस्तीकेनापि दयाधर्मो व्याख्यातस्तेषामग्रे ।

दमो देवगुरूपास्तिर्दानमध्ययनं तपः ।
सर्वमप्येतदफलं,[१] x x x x

*****

(प्रबन्धः ५)

अस्या राजपुत्र्या अपहृतालङ्काराया केनापि दुर्दशापतितायाः । ततोऽचीकथत् स विद्याधरेश्वरः सर्वप्रत्यक्षं विमानं निश्चलीकृत्य स्वां प्रियां हे प्रिये ! विद्याधरेश्वरो वैताढ्ये, रथनूपुरे नगरे राजाऽस्ति । तस्य देवतावसरपूज्यमान-**जगत्पाल**नाम-बिम्बागमनेनाऽत्रास्याः कुमार्याः कार्यसिद्धिरिति उक्त्वा तिरोदधे । कथितांत एव कुमारीमातुलो मणिचूलः समेतो मीलनार्थं तत्र तदा राज्ञाऽपि च मणिचूडमुपरोध्य तद्बिम्बं आनायितं चैत्ये स्थापितम् । तत्स्नात्राम्भसा सर्वत्रामृताऽभिषेकः कृतः । पूजनानन्तरारात्रिकसमये तद्बिम्बभक्तदेवगणेन शिरःस्थरत्नालङ्कारमोटो(?) गाढं बद्धो मुष्टिभिस्ताड्यमानो भृशमारटन् देवपादमूले क्षिप्तः दिव्यवाचा प्रतिबुद्धो

१. अत्र २४-२५ तमपत्रद्वयं नास्ति, अतः पाठः खण्डितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनशासनाराधको जातः । यदुक्तम् -

त्वां सदाधिगुणधर्मरोपिणं, येऽरिहन्तरभयाय भेजिरे ।
तान् कदापि न भवाटवीपथे, दस्युवत् प्रतिरुणद्धि मोहराट् ॥ १ ॥

पवित्रः **कुन्तलानाम** प्रबन्धः पञ्चमः स्मृतः ।
चरिते स्तम्भनाथस्य, वाञ्छितार्थफलप्रदे ॥

*****

(प्रबन्धः ६)

सिद्ध्यन्ति सिद्धयः सर्वाः, स्तम्भनायकनामतः ।
अवाप्यते न किं यस्मात्, चिन्तामणिपरिग्रहात् ॥ १ ॥

वङ्गदेशे **तामलिप्ती**पुरे **पुष्पशेखरो** राजा । **पुष्पवती** प्रिया । स राजा राज्यं कुर्वन् पापोदयेन सर्वराजकार्येषु प्रमादी जातः । आलस्यत्वात् (अलसत्वात्) सर्वेषां द्विष्टश्च । किं बहु ?, यथा तथा कृत्वा स राजा राज्यान्निर्वासितः । अथ स देशाद्देशं रुलन् काष्ठविक्रयेण जीवं पालयन् एकस्मिन् दिने शमीवृक्षमूल मखनत् । तत्र विवरं विलोक्य प्रविष्टः । तत्र पथि व्रजन् नागपुरमेकमद्राक्षीत् । तत्परिसरे गङ्गापुष्करतडागपालीशिरसि अनेकदेवाराध्यमानं देवगृहमध्यस्थं **पुराणपुरुषनाम** देवबिम्बं अपश्यत् । स पुरुषः स्नात्रपूजास्तुतिभिराराधयामास त्र्यहं महद्भक्त्या । निराहारश्च कामं सम्भाल्य सर्वभक्तप्रत्यक्षं महता शब्देन घण्टानादपूर्वं सुप्तः । काले प्रबुद्धश्च पुनस्तं देवं प्रणतवान् । ततो देववैयावृत्यकारिभिर्देवैः साधर्मिकवात्सल्येन सबहुमानं स्तुत्यालापपूर्वं देवप्रसादं पारिजातपुष्पं "भो भक्त! त्वं गृहाणेदं **अजामरं (अजरामरं)** नाम" । "महाप्रसादोऽयं मे" इत्युक्त्वा गृहीतं तेन । देवैश्च तस्येत्यादिष्टं "भो ! देवभक्त ! इदं पुष्पं स्मेरणीयं रिपुं दृष्ट्वा, यस्त्वां न मानयिष्यति तस्य मूर्धा **स्फिरयिष्यति** । स चेति लब्धप्रसादो देवप्रसादीकृतं **देवप्रसाद**नामानमश्वमारुह्य तर्जनेनामुमश्वं वारमेकं हत्वा स्वनगरे स्वे सिंहासने स्वस्मादश्वादुत्तीर्य पुष्पं **फेरणीयं** गगनगत्याऽस्खलितप्रचारोऽस्तु" । ततस्तेन राज्ञा तथैव चक्रे । सर्वेऽपि प्रतीपभूपादयो लोकाश्च तत्पुरे विलपन्तो कुण्ठकण्ठनिहितकुठाराः तं शरणमीयुः । तेनाऽपि च राज्ञा धर्मविजयिना मुक्तास्ते सर्वेऽपि जीवन्तः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदाह – उपकारिणि वीतमत्सरे, सदयत्वं यदि तत्र कोऽतिरेकः ।
अहिते सहसाऽपलब्धे, सघृणं यस्य मनः सतां स धुर्यः ॥ १ ॥

तावत् कोपो विलसति, महतां क्रियते न पादयोः प्रणतिः ।
रामो विभीषणाय, प्रणताय स दत्तवांल्लंकाम् ॥ २ ॥

राजाऽपि जातसुखश्चिरं राज्यं भुक्तवान् । क्रमेणाऽऽर्हतो जातः । काले पण्डितमरणेन समाधिना मृतः स्वर्गे समुत्पन्नः । बुभुजे दिवि सुखम् ।

उक्तः षष्ठः ॥

*****

(प्रबन्धः ७)

[१]लोकः यमकिङ्करप्रत्याहतिसञ्जातकाटकभाटकादिकुटकं च ततस्ते यमभक्ताः चण्डादयो दासा यमाग्रे तं पराभवं अवदन्तोऽपि स्वस्य महीमनमुण्डा इव सशिरःस्फोटा भग्नाऽस्थिकूटाः झरत् झरं रुधिरं निजैरङ्गैर्वर्षनश्छिन्ना भिन्नाङ्गा आत्मानं तथा पराभूतं दर्शयन्ति स्म । सूर्पणखेव रावणाग्रे अजल्पन्त्यपि श्रीरामगौरवं प्रकटं चकार । यमोऽपि रोषारुणाक्षः तत्र जिनगृहे प्राप्तः । तं त्रिशङ्कुं दृष्ट्वा विह्निरिवोषरपतितो विध्यातः, उल्मक इव निर्वाणः, पन्नग इव ताक्ष्याक्रान्तो निर्विषः, जलधिरिवागस्तिसमाक्रान्तो व्यतीतजलः, मार्तण्ड इव राहुमुखप्राप्तो वितेजाः जातः । ततः कृतान्तोऽयं तं देवाधिदेवं राजानं च नत्वा स्तुत्वा सर्वप्रत्यक्षं भट्ट इव कीर्तिघोषणां ततान "भो भो भव्यलोकाः ! अहं कालः कलयितुमेनमागां राजानम् । नवग्रहपीडाऽपि मम साहाय्यं चकार । यद्येनमुपायं नाकरिष्यदसौ तदा ममैककवलोऽभविष्यः हे राजन् ! त्वं । अतोऽयं देवो ग्रहपीडाशान्तिकारी भवति भविनां भक्तानाम् । अन्यच्च अशुभं कर्म क्षयं याति शुभं च वर्धते । प्रबन्धं एनं उदीर्य जगाम यमः । राजाऽपि दृष्टप्रभावो बहून् जीवान् धर्मे जैने स्थिरीकृत्य स्वस्थाने गत्वा राज्यं प्राज्यं भुक्तवान् । काले व्रतं गृहीत्वा प्राप त्रिदिवम् ।

प्रबन्धः सप्तमो जातस्त्रिशंकोर्ग्रहशान्तिके ।
चरिते स्तम्भनाथस्य, महानन्दसुखप्रदे ॥ १ ॥ ७ ॥

****

१. २८-२९ तमपत्रद्वयं न, अतः पाठोऽपि त्रुटितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(प्रबन्धः ८)

दूषयन्ति नव नोकषायका, दुर्ग्रहा अपि न तं ग्रहा इव ।
यस्त्वदुक्तविधिना सुरक्षितं, स्वं करोति करुणैकसागर ॥ १ ॥

राजभययक्षराक्षसभूतप्रेताः पिशाचशाकिन्यः ।
नायान्ति तस्य मूलं, स्तम्भनजिननाम हृदि यस्य ॥ २ ॥

कलिङ्गदेशे काञ्चनपुरे पद्मनाभो राजा । **पद्मावती** प्रिया । इतश्च तत्रागतः केवली सुबाहुनामा हेमकमलोपविष्टः करोति व्याख्याम् । दृष्टश्च स राज्ञा बाह्ये वाजिक्रीडां वितन्वता । नत्वा पृष्टश्च इहागमनकारणम् । अस्मिन् विन्ध्यगिरौ रेवातटे हस्तिभुवि चतुर्विंशतियोजनपृथुलशाखाव्यापो द्वादशयोजनोन्नतः **कुञ्जरराज**नाम वटोऽस्ति तत्रास्ते सर्वदुःखवारणस्य **भुवनत्रयतारण**नामदेवाधिदेवस्य प्रतिमा । तां वन्दितुमिहागतोऽस्मि हे राजन् !, तवेति प्रश्नोत्तरम् । इति श्रुत्वा हृष्टा गताः सर्वेऽपि सम्यक्त्वधारिणो जाताः । एकदा तु स राजा वन्यगन्धगजबन्धनक्रीडार्थं हस्तिभूमौ गजाकरे रराम । तत्रान्तरे अकालजलदजलसिक्तभूमिसुरभिमृत्स्नागन्धाघ्राणे नासिकापुटकुटीकुटुम्बितां गते प्रोन्मत्तगन्धगजवृन्देनाक्रान्तः । पलायिताः पूर्वमेव पदातयः तृणानीव असाराणि पवमानेनेव । ततो भटा नेशुः अपण्डितमुखे वचनरसा इव । ततोऽश्वाः पेतुः अविनीतजनगुणा इव । ततो गजाः सैनिका मुमूर्च्छुः सुलोचना सविलासलोचनाञ्चलाचान्ता रागिगणा इव । क्षणात् तत् सैन्यं सर्वम्भव-स्वरूपमिव विश्रसापरिणामजातं विगत[1]

******

(प्रबन्धः ९)

वेशिते **जनवल्लभो** राजा नाम्ना परिणामेन च प्रतिष्ठाकूर्मः जगज्जे(ज्ज्ये)ष्ठः वैरवाराहः अरिविदारणनारसिंहः पराक्रमपरशुरामः उन्नतिमेरुः अगाधतासमुद्रः मर्यादामकराकरः क्षमाक्ष्मासमः विवेकश्रीवासुदेवः अरियवासकवारिदावतारः पूर्वजाचारभारगोवर्धनोद्धरणगोविन्दः राजनीतिपार्वतीपरितोषसुखार्धनारीनटेश्वरः समस्तविज्ञानविश्वकर्मावतारः प्रजारक्षणदामोदरः संसारसर्वस्वरङ्गलीलारम्भा-भाववासवः अनुजीविदुर्दशादुःखधारणीगिरिश्रेणीदलनदम्भोलिः न्यायान्यायदुग्धनीर-

---

१. ३२-३३ तम पत्रद्वयं नास्तीति पाठः खण्डितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचनराजहंसः चतुरुदधिकाञ्चिवसुमतीमण्डलसितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः गुणमणिरोहणः अद्रोहणः कविरिव कविः वाचस्पतिरिववाक्पतित्वे विद्योतमानः भारतीव भारतिप्रियः दयाजीमूतवाहनः परुषार्थलीलापाकशासनः सत्यवाग्युधिष्ठिरः राज्यं करोति । तत्र देशे **दुर्लभो** नामा कौटुम्बिकः क्षेत्रं रक्षन् मुनिमेकं जैनं क्षुधार्तं तृषार्तं च भक्तान्नपानप्रतिलाभनावैयावृत्त्याभ्यां शुश्रूषितवान् । तेनापि **सहजसिद्ध** नामवीतरागबिम्बे भक्तिः कार्या त्वयेति उपदिष्टम् । स च मुनिर्ययौ । तस्यापि कर्षकस्य सप्तमेऽह्नि अमुत्र मृतनगरेश्वरजनवल्लभराजकुलक्रमायातामात्याधिवासितपञ्चदिव्याधिष्ठायिकदैवतैः पट्टाभिषेकः कृतः । तथापि तस्याज्ञाविधायी तादृशः कोऽपि न जातः । अन्यच्च प्रतिपक्षराजानस्तस्य पुरं वेष्टितवन्तो मिथश्च मन्त्रयित्वा निर्वास्यते कोऽयमुपविष्टो रङ्कोऽस्ति । एवं व्याकुलीभूते लोके चलितोडुमण्डलनभस्तलोपमे नगरे कल्पान्तकालविशालपवनोद्धुतनक्रचक्रसमुद्रोदरविवरभयङ्करे नगरलोके च इतश्चेतश्चाभ्रंलिहलहरिहेलाविदलितक्षतिद्रमिथोघर्षचूर्णीभवत्तिमिकुलसङ्कुलजलधिजलवैसंस्थल्योपमिते स विद्याचारणो मुनिः **विद्यासागर**नामानं राजानं वन्दापयितुमियाय । ववन्दे राजा च मुनिम् । ततः प्रोवाचाशीःपूर्वं स साधुः भो राजन् । मा भैषीः, तव सर्वं रम्यं भविष्यति । ज्ञातः सर्वोऽयं व्यतिकरः सर्वथा तेऽधुना स **सहजसिद्ध**नामा देवः शरणं श्रेयस्कारि । इत्युदित्वा जगाम मुनिः । अत्रान्तरे रोदसीं ध्वानयन् जनमुखारावः प्रोल्ललाव हा हे ति हा हेति किं देव ! भविष्यति ? । तत्रान्तरे नगरबुह(बहु)मध्यदेशभागस्थितात् साधनकूपाच्च तद्देवबिम्बमुद्गतं जलस्योपरि सपरिकरं गगनमलञ्चकार । महामहोत्सवोऽजनि । पुष्पवृष्टिर्नभस्तः पपात । देवदुन्दुभयः प्रणेदुः । दिव्यवाणी प्रससार । वर्धापितः क्षितिपतिः । ततः सपरिवारो राजा समेतस्तत्र । भूमौ लुलोठ । देवभक्तैरुत्थापितः । सर्वसमक्षं प्रणतवान् । हर्षोत्कर्षवशंवदः स्तुतिं चकारेति -

किं पीयूषमयी किमुन्नतिमयी किं कल्पवल्लीमयी,
किं सौभाग्यमयी किमु(म)द्भुतमयी किं ज्ञानलक्ष्मीमयी ।
किं वात्सल्यमयी किमुत्सवमयी किं वि[श्वसौख्यावनी ?]
[दृष्ट्वे]त्थं विमृशन्ति ते सुकृतिनो मूर्तिं जगत्पावनीम् ॥

विरचित... प्रभावना । कृता पूजा जगदीशबिम्बे । ततश्च वीरकोटीकोट्यः सहुङ्कारनिर्घोषाः प्रादुरासन् । ततो वैरिणो भीता फुत्कारक्रान्ता अपि जजकारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रान्तिजातनिर्विषाः पन्नगा इव व्यपमदा उपदापूर्वं तं स्वामिनं शरणं ययुः। ये च न नमन्त्येनं नश्यन्ति चक्षुभ्यां न पश्यन्ति ते ततो देवगिरा प्रतिबुद्धा जाताः सेवकाः। तस्य नाम दत्तं देवादेशेन देवैः **मार्तण्ड** इति। राजा प्रसिद्धिं गतः। चैत्ये च देवं तं निवेश्य महाभक्त्या पूजयित्वा चाखण्डप्रभावश्चिरं राज्यं चकार।

समरभयशान्तिकारी, मार्तण्डनृपेण पूजितो भक्त्या।
श्रीस्तम्भनजिननाथस्तच्चरिते नवमबन्धोऽयम् ॥ १ ॥

दुःकषायचतुरङ्गवाहिनी, प्रौढरागनृपकल्पितः कलिः।
त्वत्त्रिशुद्धिकृतभक्तिशक्तिभिर्भासुरैर्यदि नरैः समाप्यते ॥ २ ॥

*****

(प्रबन्धः १०)

श्रीमेरुतुङ्गसूरेर्मा, भूदुत्सूत्रपातकम्।
मा भूदाशातनावार्ता, देवस्तम्भनवर्णने ॥ १ ॥

सौवीरदेशे वीतभये पत्तने श्रीवीरसेनो नाम राजा। **वीरमती** भार्याऽस्य च। तत्र **श्रीनिवास**नामा दरिद्री गोष्ठी घृतकूपं शिरसा वहन् सन्ध्याक्षणे पथि देवनिर्मितभवने **लक्ष्मीकान्त**नाम बिम्बं विलोक्य ननाम। पूजां कृत्वा निजकूपघृतेन स्वपटीं विभिद्य दीपवर्तिं विधाय दीपं कृत्वा चाग्रे सुस्वाप(ष्वाप)। तुष्टो देवेन्द्रः। तस्मै वरं दत्वा आदेशं कृतवान्-हे श्रेष्ठिन्! जलधेस्तीरं याहि। तत्र गतस्त्वं मद्दत्तवरपरप्रा - ततः सोऽपि तथा चकार। इतश्चाऽक्षुब्धाब्धिकल्लोलहस्ताग्रनिषि(ब)ण्णा लक्ष्मीस्तं श्रेष्ठिनं रत्नाकरतीरस्थं समागत्य समालिलिङ्गभुजोपपीडम्। चिरविरहातुरा प्रेयसीव निजं प्रियं प्राप्य सपुलका सुप्तं समुत्थाप्य। द्वितीयस्यां वेलायां द्वितीयालोल कल्लोलाग्राधिरुढा हया गजा आगताः। तथैव तृतीयायां तृतीयोत्तङ्गप्रत्तरङ्गतरङ्गाग्रे रङ्गत्तररत्ननिकरोऽ**क्षयकोश**नामा निधिश्च समागतः। देवा अपि खे स्व(सु)स्थितलवणाधिपप्रमुखाः- सभक्तिकं तं स्तुवन्तः। **श्रीनिवास**स्य स्वपुरं समागतस्य सतः तत्पुरेशेन श्रीवीरसेनेन अपुत्रिणा स्वं राज्यं दत्वा व्रतं जगृहे। गगनवाद्यमानदेवदुन्दुभिक्रियमाणकुसुमवृष्टिनृत्यमानमधुकरीनामनाटक सहर्षगीयमान**श्रीकान्त**देवप्रसादावदातपरम्पराप्रकटितसर्वराजमण्डलमहाचमत्काराकरस्य इहभवेऽपि **लक्ष्मीकान्त**देवप्रसादेन महाराजा(जो) जातः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धणओ धणत्थियाणं, कामत्थीणं च सव्वकामकरो ।
सग्गापवग्गसंगमहेऊ जिणदेसिओ धम्मो ॥ १ ॥

श्रीनिवासप्रबन्धोऽयं, दशमः कार्मणं श्रियः ।
स्तम्भनाथचरित्रेऽस्मिन्, वाणीजाड्यविषामृते ॥ २ ॥

*****

(प्रबन्धः ११)

लीलयाऽपि तव नाम नरा ये, गृह्णते नरकनाशकरस्य ।
तेभ्य एव नरकैरुचिता भीस्ते तु बिभ्यतु कथं नरकेभ्यः ॥ १ ॥

आजन्ममुद्रदारिद्र(द्य)समुद्रावर्तपातिनम् ।
स्तम्भनायक ! मां पाहि, कान्ततीर्थकरश्रियः ॥ २ ॥

दक्षिणस्यां दिशि **मगधदेशे राजगृहे** पुरे **नरकान्तो** नाम राजा । पूर्वकृतनिजपातकोदयेन सर्वराजकार्यमहोद्यतोऽपि मेदुररोगाद् अकिञ्चित्करो जातः । स चैकदा गङ्गायां स्नातुं गतः जलमानुषदम्पती वार्तां कुर्वन्तौ दृष्टवान् । शृणोति स्मेति च – 'कल्ये नन्दीश्वराष्टाह्निकामहं कृत्वाऽत्र विश्रान्ता देवा, जलक्रीडां कुर्वद्भिस्तैर्देवैश्चान्योन्यं कथितं, नृपोऽसौ नगरेशो वैरिभिर्नगरान्निर्वास्यते लग्नः पराभवपदं भविष्यति । परं हे प्रिये ! नगरेशस्य जयवादविधिं निशि कथयिष्ये' । इति निशम्य राजा तत्रैव तथागत्य प्रच्छन्नं स्थित्वा ताभ्यां कथितं जयवादोपायं स(शु)श्रुवे । ततो राजा वटगह्वराद् विनिर्गत्य वटमूलाद् उत्खनित्वा पठितसिद्धां गगनविद्यां पत्रस्थां वाचयित्वा नन्दीश्वरयात्रिकदेवप्रदर्शितजयोपायं कर्तुं गगने चचाल । मलयाचले कङ्कोलीवने कुम्भोद्भवस्याश्रमे अग्निशृङ्गशिखरे सिन्दूरकुण्डान्तः सिद्धैरुपास्यमानं **जयपति**नाम जिननाथबिम्बं प्रोत्पाट्य यावदायाति स्वपुरं तावत् तत्पुरं तस्य रिपुराजभिर्वेष्टितं सोऽद्राक्षीत् । पुरमध्ये बाह्ये च कल्पान्तभ्रान्त पाथोधरनिकररवप्रार्थ्यमानप्रताने निश्वाननिश्वाने जगतोऽपि कर्णानुदीर्णे ज्वरयति सति सर्वाङ्गं, जनस्य शब्दाद्वैतमिव यज्ञे अद्वैतवादिनां प्रमाणभाषायामिव । राज्ञाऽपि च स देवोऽन्तःपुरे मुक्तः सिंहासने । स्वयं तस्यानुचरो जातः । भणितं चेति च "त्वं राजा हे प्रभो ! मेऽधुना ।" अत्रान्तरे प्रतोली स्वयमुद्घटिता । दध्वान देवदुन्दुभिः खे । रिपुकटकं मूकं विकलाङ्गं जातं सत् तस्य राज्ञः पादयोर्निपत्य जीविताऽभयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रार्थितवान् । देवभक्त्या तद्दलं जीवन् मुक्तं अनुचरीभूतं पट्टेऽभिषिक्तः सर्वैः सम्भूय। जातो महाराजा श्रावकश्च । भुक्त्वा राज्यं मृतः स्वर्गं गतः ।

अद्भुतचरिते चरिते, स्तम्भनाथस्य दत्तजयवादे ।
नरकान्तनामनृपतेरेकादशमप्रबन्धोऽयम् ॥

*****

(प्रबन्धः १२)

द्रव्यभावतमसां विनाशनं, द्रव्यभावमहसां प्रकाशनम् ।
भक्तिभारनतपाकशासनं, तावकं शिरसि मेऽस्तु शासनम् ॥

सा धन्य रसना नृणां, स्तौति या स्तम्भनेश्वरम् ।
सैव प्रभा रवेः श्लाघ्या, या पुष्णाति दिनश्रियम् ॥ ॥

नक्तमालदेशे श्रीमकुरनगरे श्रीभीमसेनो राजा । **हेमासना** कलत्रं च । तत्रान्यदा च **श्रीबुद्धिसागरसूरि**नामानो धर्मगुरवः ऐयरुः । सोऽपि राजा वन्दित्वा तं गुरुं धर्मं पप्रच्छ । अहं **शत्रुञ्जये** तीर्थयात्रां कर्तुं भगवन्नालं, अन्तरा **राक्षसदेशम**ध्यागमनोपद्रवभयेन । ततो **क्षेमङ्कर**नामदेवप्रसादबलेन करिष्यसि त्वं **तीर्थयात्रां भो राजन्** ! । हे भगवन्नहं कथं तं देवं ज्ञास्यामि ? क्वास्ते स देवः ? । **राज्ञोक्तेरनन्तरं गुरुरुवाच** 'मानुषोत्तरपर्वते सहस्रभुजविराजितया **त्रिभुवनस्वामिनी नामदेव्या समुपास्यमानोऽस्ति** । कालवशात् श्रीसङ्घकायोत्सर्गबलेन शासनदेवी **त्वां तत्र नेष्यति** । त्वयि तत्र स्थाने गते श्रीसङ्घस्य निद्रा समेष्यति । इदमभिज्ञानं **कार्यसिद्धयै ज्ञातव्यम्** । त्वमपि हे पृथ्वीपते ! तत्र स्थानके कृताष्टाह्निकोत्सवः **समाराधनप्राप्तदेवप्रसादः** प्राप्तवरः सम्पूर्णमनोरथः तद्देववैयावृत्त्यकरदेवगण निर्मापितद्वादशयोजनप्रमाणप्रलम्बनवपृथुलजङ्गमसुवर्णवप्रमध्यगतः समेत्य स्वपुरे चतुर्विधेन श्रीसङ्घेन समं **सिद्धक्षेत्रमहातीर्थ**महायात्रां महाभक्त्या महाद्रव्यव्ययेन निरन्तरविधीयमा[न]जिनशासनप्रभावनारञ्जितचतुर्विधदेवनिकायबलेन महामहोत्सवेन **निरुपद्रवः** अन्नपानीयतृणेन्धनादिना सुखी सन् व्याघुट्य स्वनगरमायास्यसि । त्रिभुवनजनकुतुकमिदं अदृष्टपूर्वं करिष्यसि त्वम् । तेनाऽपि भूभुजा सुगुरूपदेशे तत्सर्वं तथा निर्ममे । इत्थं कृते श्रीजिनशासनप्रभावना भूतले उद्भूताऽभवत् । मिथ्यात्वं सर्वत्राऽपि सम्यक्त्वसहस्रकिरणोदयेन हिमवज्जगाल । कल्पद्रुमावतारतुल्येन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मेण पापं दारिद्रमिव विद्राणं गङ्गाप्रवाहेणेव पङ्कसम्पर्कं प्रयाति काऽत्र भ्रान्तिः विदुषां हृदयेषु । सुकृतोपार्जनया दुरितसन्ततिर्दूरे भवति घूमरीव दिनकरप्रभया । सोऽपि राजघस्तस्येव परमेश्वरस्यादेशेन **जगन्मल्लं** नाम पुत्रं पट्टेऽभिषिच्य तद्देवोपासनाप्रजापालनन्यायशिक्षासमादेशदानपूर्वं जातवैराग्यरागः सर्वसङ्गविरतो गृहीतपञ्चमहाव्रतः शुक्लध्यानेन सकलकर्मक्षये जाते अन्तकृत्केवलज्ञानोत्पत्तिः ।

द्वादशतया प्रबन्धः, पूर्णोऽयं भीमसेनभूपस्य ।
स्तम्भनजिनपतिचरिते, वाग्जन्मविलासकल्पतरौ ॥

*****

(प्रबन्धः १३)

सर्वमङ्गलमये त्वदागमे, सर्वविघ्नहरणे कृतात्मनाम् ।
नाथ ! दुःशकुनवृद्धिशृङ्खलाः, कुर्वते किमु कुतीर्थिकोक्तयः ॥ १ ॥

अक्षया प्रतिभातीव, वाणी स्तम्भनवर्णने ।
अयं देवः परं ब्रह्म प्रदत्ते यदुपासितः ॥ (२) ॥

नर्मदापट्टदेशे शुभनिवेशे श्री**नन्दपुर**नामपुरे **चन्द्रकान्ता**पतिः **चन्द्रचूडो** राजा। तस्य एकविंशतिपूर्वजाः पापर्द्धिव्यापादित**मणिबन्ध**नामसिंहजीवेन प्राप्तव्यन्तरजन्मना मारिताः । अस्याऽपि **चन्द्रचूड**स्य तत्कुलोद्भवत्वात् स पापर्द्धिरसो महीयान् जागर्ति । एकदा वनक्रीडां कुर्वन् आखेटकरसेन स राजा विन्ध्यगिरिगह्वरे **तोरणमाल**नामपर्वतान्तरशिखरे आम्रारामे अखाते **उदुम्बर**नामसरसि **नर्मदा**जलापूर्णे **साजण-गा**जण[illegible]मानं उदुम्बरवृक्षद्वयं दृष्टवान् । मुनिं च जैनं सलीलं लोचनयुगलेनाऽद्राक्षीत् । नि[illegible] [illegible]चिन्त्य विलोक्य चेतस्ततो मुनिं तं नत्वा पप्रच्छ-भगवन् ! भोः ! के भवन्तः ? किमत्रागताः ? को हेतुर्वाऽत्रागमने ? किमर्थं भूमिरेषा पदक्षुण्णा ? किं मीमांस्यते ? अन्यच्च उदुम्बरस्याऽधोभूमौ कस्य जीवस्य पदान्यमूनि निरीक्ष्यन्ते ? । ततः स मुनिराह-**कर्णाट**देशस्य **विकटोत्कच**नामराज्ञः पुत्रोऽहं **घटोत्कच**नामा । मुनिदर्शनजातपूर्वभवस[illegible]कमुनिदान-स्मृतिसमुत्पन्नवैराग्यो विहाय तृणवत् स्त्रैणं, कनकं कनकवत् त्यक्त्वा गृहं प्रेतगृहवद्विभाव्य, समाश्रितश्रामण्यः **शबरनाथ**नामदेवं प्रणन्तुमत्रागाम्; तवेति प्रश्नोत्तरं जानीहि हे राजराजन् ! । ततो राजोवाच--हे मुने ! किमिति न पश्येऽहं तां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिमाम् ? । गुरुणोक्तं ततः-उदुम्बरवृक्षस्यान्तः । नृपः प्राह सविस्मयं-भगवन् भगवन् ! मां अनुगृहाण प्रसादीक्रियतां अनेनोदन्तेन । मुनिनोक्तम्-शृणु राजन् ! गुप्ताद् गुप्ततरं वचनमिदं पुरा शापप्रभावोपलब्धशबररूपेण **महादेवेन पार्वती**प्रेरितेन शूकरवधार्थं वृक्षस्याऽस्य मूले शरश्चिक्षेप । शरस्तु तं न पस्पर्श । ईश्वरः क्षतव्रती जातः । तस्य मनसि च शान्तरसः सङ्क्रान्तः पूर्वमस्पृष्टोऽपि । ततः सोऽचिन्तयच्च नवीनं कुतुकमिदं प्रोल्लसति स्पृशास्म(स्पर्शाश्म)सम्पर्कादिवायसि कलधौतत्वं परिस्फो(पोस्फु)रीति । सत्यं मत्तस्याऽपि महिषस्य शिरसि भारत्या स्वकरे दत्ते चानाहतः सारस्वतोल्लासो वरीवर्ण्यते । तत् किं क्वापि देवादिदेवश्रीवीतरागप्रतिमा मादृशामविवेकिनां तारणी महानरकनिपातनिवारणी आसन्नैव सम्भाव्यते । यन्मम चित्ते हिंसारसनिष्ठुरेऽपि सकरुणा शान्ति(न्त)रसश्रीः सर्वाङ्गमनुसरीसरीति स्म ! तदुक्तेरन्त एव पुरः प्रादुरभूत् प्रभुप्रतिमा । प्रणता च ताभ्याम् । मुनिर्वक्ति पुनः-भो राजन् ! तदा प्रभृति शबररूपधारिणा महेश्व[रे]ण स्थापितोऽयं देवोऽत्र कारणेनानेन च **शबरनाथ** नाम जा[१]-

*****

(प्रबन्धः १४)

तारका अपि गण्यन्ते, गण्यन्ते वार्द्धिबिन्दवः ।
स्तम्भनेन्द्रगुणश्चैको, गण्यते नामरैरपि ॥

तिलङ्गदेशे हंसपत्तने ढोरसमुद्रनामसरोवरशोभिते **नरविभ्रमा**पतिः **नरविभ्रमो** नाम राजा । एकदा च राजपाटीं विनोदेन भ्रमन् वने तृषार्तो जातः । वैद्यैर्मान्त्रिकैर्गणकैश्चोपचारविधिः कृतः, सर्वोऽपि विफलोऽजनि । नृपोऽपि वैकल्येन च एकाकी सन् गृहाद्विनिर्गत्य गङ्गातटे चिञ्चाद्वयान्तरे निषसाद । एतावत्यवसरे समकालमेव एकस्यां भुजङ्गमोऽपरस्यां चिञ्चायां भेको निःससार । ततस्तौ मिथः सवैरं जल्पतः स्म । भेकेनोक्तम्-भो भोः । कोऽप्यस्ति य एनं सर्पाधमं मारयति? मारयित्वा चास्य शिरोमणिं गृह्णाति ? । इत्युक्ते सक्रोधं रोषारुणलोचनः सर्पः प्राह-हं हो ! दर्दुरं हत्वा अस्यैवाधनस्तनभूमिस्थं अक्षयं रत्ननिधिं गृह्णाति यः स कोऽपि नास्ति ? किं दर्दुरस्यापि व्यापादने कस्याऽपि हत्या लगति ? । इत्युक्त्वा इन्द्रजालवत् तद्युगं विलीनं स्वयमेव । ततश्चैकतो राक्षसः अन्यतो राक्षसी गगने

१. ४३ तमं पत्रं नास्त्यतः पाठस्त्रुटितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रणं कर्तुमुद्यतौ । स राजा तत्रासीनो विलोक्यति स्म । क्षणेन गगनात् तौ दम्पती पतित्वा राज्ञोऽग्रे मृतौ । अत्रान्तरे विमानस्थो विद्याधरेश्वरोऽवोचत्-भो राजन् ! दुर्मना इव किं लक्ष्यसे ? । भो महाराज ! जगामाऽदैवं तव, प्राप्तं त्वया सर्वं समीहितं, ननाश विकलत्वं पूर्वभवश्रमणाभ्याख्यानदानफलम् । अन्यच्च गङ्गावेलाजलस्थाप्यमानदक्षिणमधुचिञ्चामूलाधस्थित**पुरुषोत्तम**नामबिम्बस्नात्रजलं पिब। तदाकर्ण्य राज्ञा तद्विद्याधरवचनं तथा चक्रे । तज्जलं **देवद्रव्यमपि** सत् "सव्वसमाहिवत्तीयागारेणं" इत्यागारपदबलेन "महत्तरागारेणं" च अस्यापि पदस्य बलेन सर्वसङ्घेन मिलित्वा कृतानुग्रहः पपौ देवस्नात्रमपि। ततो वाक्पटुताऽभवत्। जज्ञे कल्याणम् । सर्वदेशे महोत्सवः प्रसस्रे । जानपदिकाः सोत्साहाः कृतस्नाना सपुष्पशिरसः कण्ठदामाभिरामा सनन्दनाः सचन्दनाः गतरोगाः कृतभोगाः परिधृतविचित्राम्बराः प्रतिगृहप्रतिपाटकप्रतिरथ्यामुखप्रतिचत्वरत्रिकतूर्या-स्फालननिनादप्रतिनिनदिताम्बराः सगीताः स्फीताः सनृत्यारम्भां वीतशङ्का विगतातङ्का लक्ष्मीवन्तः सपक्षाः दक्षा अविषादाः प्राप्तराजप्रसादाः घनदानाः स्थूलहस्ता **जबादि**जलहरा **बीटिका**वज्राकराः **सूत्कटी**समुद्रा वैरिवैरकरणवाराहाः प्रतिष्ठानिष्ठा वरिष्ठाः पण्डिताः अखण्डिताः बद्धनिजनिजजाति**टोला** विकसत्कपोला ताम्बलोत्फुल्ल**गल्ल**मुखारविन्दाः सानन्दाः गजगतयः सुमतयः कृतमनोवाञ्छितभोजना याचकजनदीयमानसमीहाधिकधनभरविगलितवृजिनाः सन्मार्जितनगररथ्यासञ्चाराः पवित्राचारा मार्गणप्रवेश**बोहनिका** निर्गमशम्बल**विरदाः** सर्वाङ्गविरचिताभरणाः सर्वशरणाः गृहस्थाः स्वस्था अदुःस्थाः शान्ता लक्ष्मीकान्ता उदाराः परोपकारसाराः सबलाः निजनिजव्यवसायप्राप्तफलाः सर्वतोऽपि खेलन्ति स्म । अन्यतश्च राजन्यका राजकुलाश्च सामन्ता मण्डलिकाः शल्यहस्ता दण्डनायका दलपतयश्चमूसाधनिका राजपुत्राः सेनान्यः पदातयश्च श्रीकरणा व्ययकरणा मध्यकरणा अङ्गलेखकाः क्षूणलेखका मन्त्रिणः अधिकारिणः वसिष्ठाः श्रेष्ठिनः नायका महत्तरा महत्तमा अन्येऽपि च सामान्यलोकाः चत्वारो वर्णाः षडपि दर्शनानि चतुरशीतिमहाजना अष्टदशप्रकृतयः षट्त्रिंशद् **राजकुल्यः** षट्त्रिंशत् **प्रवण्यः** षण्णवतिराजरीतिका षण्णवतिपाखण्डानि **विंशत्यधिकसप्तशतमतानि** च स्वेच्छया राजप्रसादनिर्गलं रमन्ति स्म । गायनानि स्वरशुद्धिमाधुर्यरसेन विश्वावसुं हसन्ति स्म । नर्तकीगणा देवनर्तकीं रम्भाप्रमुखीं स्वतालशुद्धिसमनखादिनर्तनसूक्ष्मशुद्धिवैदग्ध्येन तर्कयन्ति स्म । वादित्रोपाध्यायाः **शिववाडशक्तिवाडहस्तवाणि**प्रमुखाक्षरशुद्धि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्वनिमानज्ञानाविर्भावेन इन्द्रमार्दङ्गिकान् मामामूमूमुख्यान् विडम्बयन्ति स्म । इत्थमष्टाह्निकं वर्धापनं जातं देशे राजकुले च । ततो राजा तं देवं महाद्रव्यव्ययनिर्मिते चैत्ये निवेश्य षण्मासीं यावत् महामहोत्सवं चकार । एवं श्रावकत्वं शुद्धं पालयित्वा सुगुरूपदेशेन प्रान्ते च व्रतं गृहीत्वा पुनर्गृहीतसंस्तारकदीक्षाविहितचतुःशरणगमनः कृतदुःकृतगर्हः विहितसुकृतानुमोदनः विशुद्धभूमण्डलबद्धपर्यङ्कासनः विहितदेववन्दनः "सव्वलोए अरिहंतचेईयाणं" इत्यादि दण्डकोच्चारणपूर्वं सर्वजीवान् प्रति मिथ्यादुःकृतं दत्वा

क्षमयामि सर्वान् सत्त्वान्, सर्वे क्षाम्यन्तु ते मयि ।
मैत्र्यस्ति तेषु सर्वेषु, त्वदेकशरणस्य मे ॥ १ ॥

इति क्षामणकपूर्वं योगाभ्यासेन समावर्जितप्राणायामपरिस्फन्दो नाशा(सा)ग्रन्यस्तदृग्द्वन्द्वो श्रीनिरञ्जनाप्तोपदेशाभ्यस्तपरब्रह्ममर्मोपचीयमानैकान्तान्तःकरणशरणः इति पपाठ पाठम् -

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
मध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ! ॥

एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः, प्रमादिन सञ्चरता यतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मलिता निपीडितास्तदस्तु मिथ्यादुरनुष्ठितं प्रभो ! ॥ २ ॥

अतिक्रमं यं विमतिर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं स्वचरित्रकर्मणः ।
व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमन्तस्य करोमि शुद्धये ॥ ३ ॥

इत्यादि पण्डितमरणचेष्टया प्रतलीकुर्वन् कर्माणि क्षपकश्रेणीं प्रविष्टः शुक्लध्यानान्त्यभेदयुगलीं विहितघातिकर्मक्षयो विश्रम्य शेषे समयद्वये निद्राद्या प्रकृतीः क्षयं नीत्वा केवली भूतः सन् पूर्वकोट्यायुःप्रमितं च त्रयोदशमगुणस्थानं सयोगिनाम मुक्त्वा अपूर्वकरणप्रयोगेण चरमं गुणस्थानं अयोगिनाम स्पृष्ट्वा लघुपञ्चाक्षरप्रमाणं मुक्तिं गतः । एवं चोभयथा महामोहव्यामोहसन्दोहहन्ताऽयं परमेश्वरश्रीपार्श्वनाथनामा ।

नरवर्ममहीपालप्रबन्धोऽयं समर्थितः ।
चतुर्दशतया श्रीमत्स्तम्भेन्द्रचरिते हिते ॥ १ ॥

*****

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(प्रबन्धः १५)

आदिष्टं मद्गुरुणा, मत्पुरतो यद् यथैव चरितमिदम् ।
श्रीमेरुतुङ्गसूरिस्तथैव तल्लिखति न परवचः ॥ १ ॥

गौडदेशे **कोलापुरे नारायणो** राजा । **नरदेवा**ऽस्य च राज्ञी । राजा स्वभावादेव दर्शनभक्तः । एकदा च नास्तिकेनैकेन भूताकर्षणपूर्वं भूताकर्षणविद्या प्रदत्ता च(चु?)कोपाराधनवेलायां ग्रथिलो जातः । मध्यार्धपतितगृहगोधावत् निमीलिताक्षः उभयोष्ठाग्रनिपीडिताग्ररसनस्तिष्ठति । स च एकदा निर्ययौ । अवन्त्यामगच्छत् । **गजेन्द्रपद**नामस्मशाने **शिप्रा**नदीतीरे **सिद्धवट**समीपे **रामसागर**नामानमेकं मुनिं दृष्टवान् । प्रणनाम स च तं मुनिम् । तस्यापि च मुनेर्ज्ञानमुत्पादि तदैव निशि । तस्य विकलस्य राज्ञः पश्यत एव तत्र सुराः केवलज्ञानोत्सवार्थमीयुः । ततौ देवैः स राजा मुनिसमक्षं पृष्टः स्ववृत्तान्तमाचख्यौ । मुनिसेवकोऽयं चिरन्तन इति विमृश्य साधर्मिकबुद्ध्या **मण्डपदुर्गे** गच्छद्भिः सद्भिः स राजा सार्धं नीतः । तत्र तु **मण्डकेश्वरा**दिदेवगणैः पूज्यमानं **भद्रगर्तो**परि **मणिकर्णक**शृङ्गे कुण्डपञ्चकसमीपे सिद्धायतनस्थं **निरञ्जन**नामदेवं नयनयोरतिथीचकार । देवा अपि **शतसहस्त्रलक्षकोटिकोटीकोटिबिन्दु**नामकुण्डेभ्यो जलं गृहीत्वा ते देवं असिस्नपन् । प्रत्यक्षा षडपि ऋतवः स्वैः स्वैः कुसुमैस्तं देवमानर्चुः । इत्थं कृत्वा जग्मुस्ते प्रभावनाम् । स राजा वैकल्यात् तथैव तस्थौ षण्मासान् यावत् कृतोपवासः दत्तदेवास्यदृष्टिः । मासषट्कान्ते तुष्टो देवश्च षट्पञ्चाशत्कोटिफणिफणावलीतलस्पर्शमानपदकमलतलः नवकुलनागनाथसनाथोभयपार्श्वः मिलदलिकज्जलगवलकालकालाम्बुदनिर्मलः कुवलयतालतमालबालकुन्तलसमपुद्गलः । ततस्तद्देवेन तस्य पुरो सकुरणां (सकरुणां) दृशं विधाय रत्नत्रयं व्याख्यातम् । स राजा च सज्जो जातः । महामाया जगाल । देवसेवाकारिभिरमरैरुत्पाट्य स राजा राज्ये नीतः । पट्टेऽभिषिक्तः । दिव्यं अस्त्रः औषधीर्दिव्याः चिन्तामणिं च देवास्तस्मै तुष्टा ददुः । तेन तद्बिम्बं स्वपुरे समानिन्ये तद्देवप्रभावेण स त्रिखण्डाधिपतिर्जज्ञे ।

नियदव्वमउव्वजिणंदभवणजिणबिंबवरपय(इ)ट्ठासु ।
वियरइ पसत्थपुत्थयसुतित्थतित्थयरजत्तासु ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इति सिद्धान्तप्रणीतेषु सप्तसु क्षेत्रेषु वित्तव्ययं निर्ममे । स महीपालः दुष्टान् दण्डयन् साधून् प्रतिपालयन् कोशवृद्धिं न्यायेन कुर्वन् परोपकारेण च यथायोग्यं सर्वजीवान् प्रति उपकुर्वन् निजं देशं सर्वथा विविधोपद्रवेभ्यो रक्षन् अनय(या) राजरीत्या राज्यं कृत्वा राज्यं नरकान्तं विमुच्य प्रान्ते कृतसंयमशरणो विहितमरणः सञ्जातः स्वर्गी ।

नारायणस्य क्ष(क्षि)तिपस्य जज्ञे, रसालयः पञ्चदशः प्रबन्धः ।
अस्मिञ्जिनस्तम्भपतेश्चरित्रे; प्रभावरत्नोद्गमरोहणस्य ॥

*****

(प्रबन्धः १६)

अवन्ध्यं तद्धाम त्वमसि भगवन् ! यत्र न नमो (तमो ?)
न चालोकः कश्चित् फलमिह न जाने स्तुतिगिराम् ।
तथापि स्तोतुं मां त्वरयति मुहुर्भक्तिजडता
जडः किं कुर्वाणः फलवदफलं वा कलयति ॥ १ ॥

अयोनिजेन येनेदं, सर्वं सृष्टं चराचरम् ।
सर्वशक्तिपरीताय, तस्मै विश्वात्मने नमः ॥ ॥

पञ्चालदेशे **काम्पिल्य**पुरे **ब्रह्मबन्धु**नाम राजा । तत्कलत्रं **तारादेवी** क्षायिकसम्यक्त्वधारणी महाश्रमणोपासिका शीलवती गुणवती रूपवती दयावती सुदती चतुःषष्टियुवतिजनजन्मविज्ञानवेदिनी । अथ भीष्मे ग्रीष्मे व्यतीते समेते च वर्षाकाले तत्र पुरे एकः **प्रभाचन्द्र**नामा मुनिर्नद्या एव मध्ये कायोत्सर्गेण तस्थौ । प्रावृषि चाखिलभूतलबुहल(बहुल)जलविलसितायां सा नदी न पपाट । तस्यां राजगर्तानामध्यनद्यां(?) नीरं समापतत् । देव्या जिनशासनसम्बन्धिन्या निषिद्धं मुनेस्तस्योपसर्गसम्भवत्वात् । देवता च तन्नगरोपरि स्फटिकरत्नशिलां निर्मितवती । तस्यां तारकादि सर्वं प्रत्यक्षमेव विलोक्यते । नगरोपरि पतितं जलं वप्रबाह्ये पतति तया रत्नदृषदाच्छत्ररूपिण्या । अन्यच्च रासभस्योपमितोऽयं तन्निवासी निष्कारणवैरी अपशब्दकुक्षिम्भरिः तदुद्गिरणशीलः अश्लीलभाषी अनाथविद्याविनोदो जिनदर्शन-दर्शनसमुत्पन्नमत्सरभरो लोकोऽनेकानुपसर्गांश्चकार तस्य नद्यां स्थितस्य **प्रभाचन्द्र**नाम-मुनेः । ततो निरङ्कुशैः पापभिर्लोकै "र्नायं तपस्वी किन्तु कौटिल्यकलापात्रं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दाम्भिक एष कौतस्त्य" इति प्रघोषणां कृत्वा समकालमेव एकलोष्टवधः कृतः स मुनिः ।

पाणच्चए वि पावं, अवि जे एगिंदियस्स निच्छंति ।
ते कह जई अपावा, पावाइं करंति अन्नस्स ॥ १ ॥

जिणपहअपंडियाणं, पाणहराणंपि पहरमाणाणं ।
न करंति य पावाइ, पावस्स फलं वियाणंता ॥

इति सर्वविरतिप्रत्याख्यानस्य तत्त्वमुष्टिमाकलय्य सर्वथा कर्मबाहल्यात् तत्परीषहोपसर्गवेदनासमुद्घातं नितान्तमनुभूय पण्डितमरणविधीन् सर्वान् स्पृष्ट्वा च शैलेशीं प्रतिपद्य लेश्यां गतकर्मा जातः, सिद्धिं गतः, लोकमस्तकाग्रस्थः सिद्धोऽभवत्। धर्मास्तिकायबलेन गतिपूर्वप्रयोगेणापि च कर्मरहितोऽपि आत्मा सप्तरज्जुप्रमाणं लोकाकाशमुत्पतति इत्यागमममर्म । अपि च स मुनिर्जानपदिकैस्तथा वध्यमानो राज्ञा न निषिद्धः । राज्ञी च पश्चात्तापं ययौ । यतो वारिदो नाश्वासयति वसुधां स्वाम्बुना यदा तदा लोकस्य कां प्रीतिं जनयति विद्युत् स्वेन स्फुरणेन। ततश्चुकोप धर्मदेवी "ववर्ष महाजल !" । ततो मेघवृष्ट्या प्लावितं तन्नगरं सर्वम्। राज्ञी च स्वगृहाग्रे वटमारुरोह । "नमो अरिहंताणं" इत्युक्त्वा शीलवत्यास्तस्याः पुण्यातिशयेन सफलसर्वधर्मायाः **काबेरीनर्मदासङ्गमे** **कपिला**नामनद्याश्च तटे स वटः स्थितः । तदादि स तत्रस्थो वटः प्रसिद्धिमगमत्।

अथ **तारादेव्या** स्वप्नादेशप्रमाणेन तस्यैव वटस्याधस्तात् **आदिरूपनाम** देवबिम्बं **खनाप्य** बिम्बं **मण्डापितं** स्वनाम्ना **ताराविहारश्च** कारितः । स्वनाम्ना **तारापुरं** च । खन्यकर्मणि प्रारब्धे रत्ननिधिरक्षयश्च प्राप्तः । देवस्याग्रे स्वमूर्तिः कारिता । **तारानाथ**नाम्ना स देवाधिदेवो जातः । द्रव्यव्ययेन शासनप्रभावना **तारया** चक्रे । काले गच्छति सा देवी **तारामूर्तिस्तारादेवी** जाता । **बौद्धमते** साऽद्यापि सर्वार्थकामसिद्धिदा बौद्धदर्शनाधिष्ठायिका प्रसिद्धा ।

"ध्यात्वा भक्तिजुषस्तरन्ति विपदस्तारां तु तोयप्लवे ॥"

इत्याम्नायप्रमाणात् । तारादेव्यपि व्रतं गृहीत्वा मुक्तिं गता ।

चित्रे चरित्रेऽतिशयैः पवित्रे, स्तम्भेशितुः सर्वसुखङ्करस्य ।
ताराप्रबन्धः खलु षोडशोऽयं, श्रीमेरुतुङ्गेण मुदा प्रबद्धः ॥ १ ॥

*****

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(प्रबन्धः १७)

विश्वरूपकृतविश्व ! कियत् ते, वैभवाद्भुतमणौ हृदि कुर्वे ।
हेम नह्यति कियन्निजचीरे, काञ्चनाद्रिमधिगत्य दरिद्रः ॥ १ ॥
श्रुत्वा केऽपि हसिष्यन्ति, प्रबन्धांस्तलिनाशया ।
व्रजिष्यन्ति मुदं चान्ये, सूरयो गुणभूरयः ॥ ॥

हस्तिपुरे हरिश्चन्द्रो राजा । रात्रौ निद्रां गतः स्वप्नं ददर्श-"कोऽपि महादेवता श्वेतवासाः सु(स)प्रसादं जगादेति-हे राजन् ! प्रभाते तव वाह्यालीं गतस्य कोऽपि पुमान्नेत्रातिथिर्भवति तेन साकं मैत्र्यं जागर्यं भवता" । स्वप्नान्ते च गतनिद्रः प्रातरुत्थितः श्रुतबन्दिजनमाङ्गलिककलकलः मङ्गल-पाठकाहमहमिकापठ्यमानबिरुदश्रेणीनिश्रेणीसमधिरोहितकीर्तिनटीपराक्रमनट-तद्रूपार्धनारीनरेश्वरनाटकरञ्जितचमत्कृतत्रिभुवनजनः कृतदेवगुरुस्मरणः क्लि(क्लृ)-प्तपञ्चपरमेष्ठिपञ्चपदोच्चरणः दिनोदयसार्धसमारब्धकनकवितरणः प्रकटित-षट्त्रिंशद्दण्डायुधपराक्रमः **षरुली**-भूमण्डलान्तरालानेकशैक्षकोपनमितराजन्य कुमारप्रदर्शितयुद्धाङ्गणरङ्गतरङ्गपराहतिस्वाङ्गरक्षाद्व्याश्रयकथाव्यवहारविचारः स्वेदबिन्दकितगौधिरधोरस्वा(श्वा)सः(?) सञ्जात-सर्वाङ्गप्रयासः कृतदन्तपावनः विलोकितदर्पणवदनः किङ्करदूरीकृतपरिग्रहः जवनिकान्तरितः त्यक्तचरणः नमदत्यक्तचरणः परिधृतजलार्द्रः चतुर्विधविश्रामणाविदग्धजनविहितमर्दनः प्राकुरङ्ग मदमीलितमौलिः यक्षकर्दममृदून्मृदिताङ्गोऽङ्गनाभिराप्लवनेच्छुर्गन्धवारिभिरभिषिक्तः राजा । ततो गन्धकाषायवाससा शोषितसर्वाङ्गजलबिन्दुवृन्दः समाश्रितारक्ताम्बरवेषधरः कृतकनकमणिमौक्तिकाभरणशृङ्गारः कृतदेवाधिदेवपूजनः विहितोत्तरासङ्गः प्रमदोत्तरङ्गः प्रदत्तदानीयजनदानवितानः एवं प्राभातिककृतकृत्यः देवगृहात् समास्वादित ससाक्षिकताम्बूलः समाश्रितसर्वावसरः प्रपञ्चितपञ्चाननासनासनः शिर उपरि धृतश्वेतातपत्रः राकादर्शसदृशवीज्यमानोभयपक्षचामरः सनान्दीनिर्घोष-जातनीराजनाविधिः वामाङ्गविलसितषाड्गुण्यपुस्तकः लोचनाग्रजाग्रत्सकलधर्मशास्त्रः नीतिग्रन्थसनाथदक्षिणाङ्गभागः विविधविदेशागतप्रतीपभूपालप्रधानजनक्रियमाणोपदा-विचित्रीयमाणसभ्यहृदयः सभाभर्ता पुरोऽभवत् नानास्फीतसङ्गीतकविलसद्रस-समाप्तसकलदुर्दशादुःखसमुदयः क्षितिपाल इच्छया काले लोकं विसृज्य प्रतीहारमुखेन **पल्ययनिकै**र्हयमानीयाश्ववारैर**श्ववारतां कारा**प्य वासव इवोच्चैःश्रवसं स्वयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुरगमारुरोह पश्चात् । अथ स राजा एकं नृपं तृषार्तं भूपतितं दृष्ट्वा समीपस्थसपल्लययनाश्वं च स्वभावोपकृतिबुद्ध्या जलेन छायया वातव्यजनादिना सज्जीकृत्य स्वगृहं नीत्वा मैत्रीं चकार । तावत्यन्तरे समेतं तस्य सैन्यम् । विराटदेशाधिपोऽयं जने विश्रुतं(तः) स **प्रद्युम्नो** नाम राजा । विराटेश्वर(:) स्वगृहं प्रति ययौ । महोपरोधेन हरिश्चन्द्रं विसर्ज्येति चोक्त्वा राजन् ! सखे ! हरिश्चन्द्र ! तवानृणीभवितुं नास्म्यलम् । परं अस्मद्देशे **झाडमण्डल**मध्ये **रत्नापुर**भूमण्डलबद्ध**गन्धमादन**गिरौ **गजकुण्ड**सिद्धायतने **सर्वार्थसिद्धि**नामानं देवं वन्दापयामि त्वं यदि एष्यसि । तथैव चक्रे राजा । ववन्दे च तं देवम् । तत्र स षण्मासांस्तस्थौ नित्यकृतलक्षव्ययधनपूजनः । प्रसन्नो देवः । स वरं ददौ "यत्ते समीहितं तद्वास्ये तुभ्यम्" । राजोवाच-नाथ ! सत्यं मे हितं ममान्तःकरणात् प्राणान्तेऽपि नायातु । तत् सत्यं इति वरं प्राप्य स्वे गृहे गत्वा चिरं चिक्रीड । अपि च स एकदा राजा नृपचर्यया वने गतः विपरीतशिक्षिताश्वेन वने क्षिप्तो भूमौ **पारापतपल्ली**समीपे **चौरवटे** । तत्र च रत्ननिधानं एकं कूपं ददर्श । स च राजा परिभ्रमन् एतावति क्षणे चौरपदप्रमाणेन तत्र **वाहरा** समेता । "चौरोऽयं" भणित्वा स राजा तत्रस्थो बद्धः **सज्जनपुरे**शस्य **नरदेव**नाम्नः पदमूले क्षिप्तः । ततः स राजा नरदेवेन पृष्टः किमपि नोत्तरं ददौ । राज्ञा खेदं गतेन चारक्षकपार्श्वात् सूलायां प्रोतव्योऽयं वधार्थमित्यादिष्टः । स राजा **हरिश्चन्द्रो** न म्रियते केनाप्युपायेन। तथाकृतेऽपि तमेकं देवं[1]

*

(प्रबन्धः १८)

मं पूजानन्तरं देववाणी जाता-भो नृप ! शृणु ! असौ मन्त्रिसूः परभवे भूनागमेकमवधत् दण्डाग्रेण क्रीडया । तत्पातकेन मारिनामा कसरोगः सञ्जातः । ततो राज्ञोक्तं-हे जिनेन्द्र ! अद्य प्रभृति मया प्राणिप्राणातिपातो न कार्यः । विशेषेण चाऽनाथानां कृते मया स्वप्राणा अपि दातव्या इति व्रतं मे । इति स्तुत्वा जगाम राजा देवालयात् स्वगृहं । एकदा च गु(ग)रुडचु(च)ञ्चुपुटत्रोट्यमानं वध्यशिलायां **यमदंष्ट्रा**भिधानायां पातितं पातालदाकृष्य स गच्छन् राजऽपश्यत् नागेन्द्रम् । राज्ञाऽपि च स्वशरीरं मांसपणं कृत्वा स नागनाथो मोचितः । दिव्यवाण्या स्तुतिर्जाता

१. ५६ तमं पत्रं नास्ति अतः पाठः खण्डितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्य जीमूतवाहनस्य-

परप्राणैर्निजप्राणान्, सर्वे रक्षन्ति जन्तवः ।
निजप्राणैः परप्राणानेको जीमूतवाहनः ॥ १ ॥

देवाः **स्वयम्भूनाम**देवस्य भक्तास्तत्र प्रकटीबभूवुः । राज्ञो मांगलिकानि विदधुः ।

अष्टादशप्रबन्धोऽयं, चरिते स्तम्भनप्रभोः ।
जीमूतवाहनकथा, कथिता मेरुसूरिणा ॥

★

(प्रबन्धः १९)

पुराणानि पुराणानि, तृणानीव यदग्रतः ।
एकः स जीयात् सिद्धान्त, एकैकाक्षरमुक्तिदः ॥ १ ॥
दिवि वा भुवि वा ममास्तु वासो,
नरके वा नरकात(न्त)कप्रकामम् ॥
अवधीरितशारदारविन्दौ,
चरणौ ते मरणेऽपि चिन्तयामि ॥

वाणारसे देशे **वाराणस्यां** नगर्यां **कपिल**ब्राह्मणेनाश्वमेधश्चक्रे । सोऽश्वो मृत्वा गौर्जातः । स द्विजोऽप्यन्तजोऽजनि **काला**भिधानः । तेन **काला**भिधानेन जनङ्गमेन सा घोटकजीवगौः कम्बिता । दैवयोगेन स चण्डालस्तन्मांसादनात् विभावर्यां ममार । शुभमनुष्यानुपुर्वीसमुदयेन लेश्यावशात् समुपचितमनुष्यगतिः सहजसञ्जातकर्मनिर्जराबलात् **बीजउरदेशे महन्तक**पुरे **कालसेनो** नाम राजा जातः । गोजीवोऽपि तस्यैव राज्ञो **महादेव**नामा मन्त्री जातः । परमन्योन्यं महाविरोधेन राज्यकर्माणि कुरुतस्तौ । एकदा च राज्ञा केनापि छलेन धृतः स मन्त्री सूल्यां दापितो मृतः शुभभावाद्व्यन्तरो जातः । प्रस्तावं प्राप्य स्वं वैरं विधातुं लग्नः स पातकी व्यन्तरापसदः खादयितुं लोकान् । ततो देशे डिण्डिमो दापितो राज्ञा-यो जानाति मान्त्रिको मन्त्रवादं विधातुं एनं स व्यन्तरं वशीकरोतु । इत्यर्थे मदीयादेशोऽस्ति । ततो मण्डलमुद्धृत्य स बलादाकृष्टः नस्तिततवृष इवाययौ । मान्त्रिकैश्च छलेनाक्रम्य वाक्त्रितयेन बद्धः नित्यं मनुष्यमेकं तुभ्यं देयं इति पणे स्थापितः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्थं दिनेषु गच्छत्सु **सर्वेश्वर**नामा सूरिरवधिज्ञानी तत्रागतः । राजापि च तं वनपालपर्धावनिकाद्वारेण तत्र समवसृतं ज्ञात्वा समेत्य च नत्वा च पप्रच्छ तत् तद्व्यन्तरमारिकारणम् । गुरुणोक्तं तत्सर्वं पूर्वभववक्तव्यं, कथान्ते च सोऽप्यागतः । तत्रोपविष्टयोरुभयोर्मिथ्यादुःकृतं जातम् । गुरुदृष्ट्या क्षमामृतवर्षिण्या तयोः कोपप्रलयोऽभवत् । अत्रान्तरे तस्य सूरेरपि केवलज्ञानं प्रादुरास सकल-घातिकर्मक्षयात् । ततो देवैः केवलमहोत्सवश्चक्रे । ततः सर्वप्रत्यक्षं तेन **भूतानन्द**नाम्ना व्यन्तरेण पृष्टं गुरुसमीपे, कथमहं निःपापो भवेयम् ? । गुरुरपि चाह-अवि-रतिगुणस्थानक्यपि भवान् सम्यग्दष्टिर्भवतु । **सर्वपापापहार**नामानं देवं आनीय स्थापयित्वाऽत्र नगरे समाराधय पूजया । तेन चोक्तम् - क्वास्ते तद्देवबिम्बम् ? । **महाकुरल**देशे **मानससरः**समीपे **कालकूटगिरौ मदनोन्मादकुण्ड**तीरस्थ-स्याशोकवृक्षस्याधः । पुनस्तब्दिम्बं **कामकुञ्जर**नाम्ना कामकेलिदुर्ललितेन ग्रस्तं देवेनाऽस्ति । अन्यच्च सोऽपि **कामकुञ्जर**नामा देवो विहितपरदारस्वीकारविकाराद् हतौजा **बाहुबलि**नामदेवेन तदपहृतस्त्रीपतिना स्व(श्व)स्तनदिने प्रभाते 'युद्धं देहि मे रे पाप !' इत्युक्तः स्कन्धलगुडाहतो लुलितदृष्टिर्गतिस्खलितो भविष्यति । तस्मिन्नवसरे हे भूतानन्द ! व्यन्तरेश्वर ! तत्र गत्वा बुद्धिसूत्रेणैव तद्बिम्बमत्रानय, श्री जिनशासनप्रभावनां विरचय । एतन्निशम्य तेन तत्कर्म तथा कृतं बिम्बमुत्पाट्यानीतं **पादुकायुगं अग्रस्थं तत्रैव स्थाने तस्थौ । अद्यापि तत्र देशे सर्वपापहरपादुकायुगं सर्वलोकदैवतं प्रसिद्धं अस्ति** । राज्ञाऽपि च श्रावकत्वं प्रपेदे । व्यन्तरस्तु राज्ञः सखा जातः । राज्ये(ज्यं) कुर्वन् काले मृत्वा दिवं ययौ ।

एष कृष्णमहीपालप्रबन्धः कथितो मया ।
एकोनविंशतिमितः, चरिते स्तम्भनप्रभोः ॥

★

(प्रबन्धः २०)

विराजन्ते न शास्त्राणि, सत्तत्त्वार्थोज्झितानि च ।
अजलानि सरांसीवाऽजीवानीव वपूंष्यपि ॥ १ ॥

मालवदेशे **अवन्त्यां त्रिविक्रमो** राजा । **रत्नादेवी** प्रिया । तस्य पुत्रः **शार्दूल**नामा सर्वव्यसनाकरो जातः । राज्ञा निर्वासितः स्वदेशात्स पुत्रः । रुलन् गजपुरे स गतः । तत्र द्यूतादिसप्तकुव्यसनकोटिभिः कदर्थ्यमानो लब्ध**व्यसनाकरा**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परनामा निर्गत्य गतो देशान्तरं अन्यत् । ततो **मलयाचलं** प्राप्त: तत्र परिभ्रमन् **हंसं** सरोऽपश्यत् । जलं पीत्वा पालिविश्रान्त: अकस्मादागतं तत्र कुरङ्गीद्वयं शृङ्गाभ्यां तं घ्नत: । तेनाप्युक्तं यदीत्थं रमणीद्वयं मदङ्गं स्तनाभ्यां स्पृशति तदा तत्सुखाकरोति वचनान्ते तदिन्द्रजालवद् विलीनम् । तत: प्रोत्थाय लग्नोऽग्रे गन्तुम् । विवरं विलोक्य प्रविष्ट: । ततोऽग्रे चलितो युवतीद्वयं शिरोधुतिकारकं स्तनाभ्यां हन्तुं लग्नं तं प्रति । कथितमिति च तेन युवतियुगलेन "भो **व्यसनाकर**! यत् प्रार्थितं त्वया क्षणार्धात् पूर्वं तल्लब्धम् । तत: स जगाम शीघ्रपदम् । तथा क्रीडाकदर्थितोऽग्रे **अजगिरिणा**ऽत्तुमारब्ध: नंष्ट्वा तरुमधिरुढ: । पुनरुत्तीर्य गन्तुंम् प्रवृत्तो हस्तिना-ऽऽक्रान्त: । हस्त्यपि च पुर: समुत्थित:(त)सिंहभयात् त्रस्त: । सिंहोऽपि च तमग्रे दण्डवत् भूपतितं विलोक्यं धूर्ततया च "मां खाद मातुल हे!" इति भणन्तं शिरसा प्रणमन्तं च 'एककवलमात्रमसि मे, तव घाते मे पराक्रम: समरसण्टङ्ककोटिटीकां नाटीकते' । अन्यच्च

उत्कटकरिकरटिकटस्फटपाटनसुपुटकोटिभि: कुटिलै: ।
खेलेऽपि न खलु नखरै: उल्लिखति हरि: खुरैराखुम् ॥ १ ॥

अपि च

सिंह: करोति विक्रममलिकुलझङ्कारसूचिते करिणि ।
न पुनर्नखमुखविल(लि)खितभूतलविवरस्थितेनकुले ॥

ततो राजकुमारो गिरिशिखरं गत: । राहुमुखमुक्तो दिनपतिरिव उदयाचलचूलावलम्बी तत्रस्थ: किञ्चिन्मनुष्यादिकं न पश्यति यावत्, तावद् गिरिपातेच्छुर्जात: । निषिध्दस्तु **चारुदत्त**नाम्ना मुनिना गह्वरस्थेन वारत्रयं "मा पतेति" । ततो भ्रान्त्वा विलोकितो वन्दितश्च स: । देशना कृता तस्याग्रे । आलाप: सञ्जात: । मिथो धर्मगोष्ठीरस: प्रवृत्त: । "भगवन्! कस्माद्रक्षितोऽहं मरणं कुर्वन्? किं कोऽपि दास्यति मे राज्यम्?" । मुनिनोक्तम् - "**काञ्चनतारण**नाम चैत्यै **पारगतेश्वरं** पथाऽनेन गत्वा समाराधय" । तुष्टो देव: सप्तोपवासै: । तद्देवभक्तैरुत्पाट्य सुप्त: सन् निशि नीतोऽवन्त्याम् । पितरि रात्रिमृते प्रगे पट्टेऽभिषिक्त: । काले जातो महाविक्रमी श्रावकश्च गृहीतव्रतो मृतश्च माहेन्द्रे देवो जात: । **नरशार्दूल**नाम दत्तं देवैस्तस्य राज्यं कुर्वत: ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरशार्दूलमहीपप्रबन्ध एष प्रभावपरिपूर्णे ।
श्रीमेरुतुङ्गलिखिते, स्तम्भचरित्रे द्विदशकम(मि)तः ॥ १ ॥

★

(प्रबन्ध- २१)

धर्मागमार्थयुक्तेभ्य सज्जनेभ्यः सदा नमः ।
नमो मे दुर्जनेभ्योऽपि, यत्प्रसादाद्विचक्षणः ॥ १ ॥

कास्मीरदेशे **उत्पलभट्टा**नगरे **नरवाहनो** नाम विशांपतिरभूत् । तस्यान्तः-पुरीमल्लिका **वनमाला**ऽभूत् । तयोरङ्गजो **मेघरथो** दौर्भाग्येन भोगान्तरायनामकर्मणा च सहस्रवारं यावत् मेलितपाणिग्रहणोऽपि न परिणीतः । ततो लोकलज्जया निशि मरणोद्यतः प्रतस्थे । जगाम क्वापि महारण्ये । आरुरोह **भीमभीषण**नामानं गिरिम् । निधनार्थं झम्पां दातुमनाः निषिध्दो देवाधिष्ठायकेन । शब्दानुसारात् यावत् सर्वा दिशो विलोकयति तावत् पुरः प्रादुरासीत् दिव्यदेहो नरः । तेन च स ददृशे । तत इत्यवोचत् कुमारः स तं प्रति - "भो महाबाहो ! वृन्दारकोत्तम ! किमर्थं त्वयाऽहं निषिद्धः पञ्चत्वं स्वस्य तन्वन् ? त्वं किं मह्यं ददासि मनोगतम् ?" इत्युक्ते बभाण सोऽमरः कुमारं तं - "तुभ्यं मनीषां पूरयिष्यति देवोऽयं **प्रभावसागर**नामा शिखरिशिखरमध्यमध्याधिरूढः, तस्मान्मया साकमेहि देवायतने, देवं वन्दस्व" । ततः स कुमारस्तत्र गतः । ववन्दे देवाधिदेवम् भग्नान्यन्तरायाणि । भोगोपभोगस्य परिणामविशेषभक्तिशक्त्या समाराधनबुद्ध्या च तुतोष स प्रभुः । वैयावृत्त्यकरमुखेन ददौ वरं **इच्छारूप**नामानं **परकायाप्रवेशं** च । ततः कतिचिद्दिनानि तत्र तस्थौ देवोपास्तिपरायणः । अत्रान्तरे **गौडदेशेशो गङ्गाधरनामा रत्न**पुरात् तत्र गिरिसमीपे उपत्ति(त्य)कायां कटकनिवेशेनावधिष्ठितः **महाराष्ट्र**देशाधिप**तैलपदेव**स्य पुत्रीं **विश्वविभ्रमां** नाम परिणेतुमनाः । निशीथे च दैवात् ममार स राजा । **मेघरथस्तु** देवाधिष्ठायकसमादेशेन वृत्तान्तमेनं परिज्ञाय मृतां राजगङ्गाधरतुनं(तनुं) वरविद्याबलेन प्रविश्य स्वां तनुं च तस्यैव **देवस्याग्रे** देवं वन्दमानां विमुच्य तां कन्यां परिणीय **गौडदेशे रत्नपुर**नामनगरे गत्वा राज्यं चकार । प्रस्तावे च **प्रभावसागरं** देवं वन्दित्वा पूर्वमुक्तां देवं वन्दमानां निजां तनुं प्रविश्य **गङ्गाधर**तनुं च तत्र मुक्त्वा **मेघरथः** स्वनगरं ययौ । पित्रा च राज्यं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दत्तं द्वात्रिंशत्कन्या राजभिरपरैर्दत्ता । इत्थं कृतवान् राज्यं चिरम् । जिनायतनमण्डनमण्डितां समुद्रकान्तां कृत्वा काले सद्गुरुश्रीधर्मशेखरपदपङ्कजमूले श्रितसंयमः पञ्चत्वं प्रपन्नः पञ्चमगतिं शिश्राय केवलात्मैव बभूव ।

एकादशदशसङ्ख्यः स्तम्भनचरितान्तरे प्रबन्धोऽयम् ।
नृपतेर्मेघरथस्य प्राभृतवस्तूपमे च सङ्घस्य ॥

★

(प्रबन्धः २२)

वचनानि मदुक्तानि प्राज्ञाज्ञप्रियविप्रियाणि सहजेन ।
दिनकरकिरणानि यथा सुकमलकुमुदव्रजस्य संसारे ॥ १ ॥

विश्वान्यमूनि विश्वानि येन सृष्टानि शक्तितः ।
अनादिनिधनो देवः स्वयं सिद्धो मुदेस्तु वः ॥ २ ॥

सुराष्ट्रामण्डले **उषामण्डला**धिपतिः **सुमित्रा**प्राणनाथो राजा **सुमित्रो** नामाऽभूत् । तत्पुत्रश्च मुञ्जलक्षणो **मुञ्जघोषा**भिधानो निजराजकेलिकलाविकलः सकलकुलकलङ्कशीलः सर्वकुलक्षणकोशागारतया निर्वासितो राज्ञा महत्यरण्ये पपात । पिपासापिशाची सङ्क्रान्ता वपुषि । अत्रान्तरे हंसमिथुनेन स्वपत्रच्छाया चक्रे तस्योपरि छत्रवत् । पक्षव्रजेन चामरलीलाप्यनुचक्रे । शीतलोपचारार्थं च जलभिन्नपतत्रविगलद्वारिबन्दुजलपानेनापि च क्षणान्मधुरेण निजेन कलरावालपितसुखोदयकर्णश्रुतिपातेन स्वस्थीकृतः नीतस्तेन राजहंसयुगलेन स्वाश्रयवृक्षकुलायं स राजकुमारः । **शर्करा**नामवटमूले मुक्तः ताभ्यां द्वाभ्यां निजात् पृष्ठादुत्तीर्य **माणिभद्र**सरस्तीरे । ततः कमलकन्दैः शर्करावटफलैरपि अन्यैरपि च नीवारतुंदलैर्विविधरसपेशलैर्बुह(र्बहु)लैः फलै सुखीकृतः । क्रमेण च ताभ्यां तत्पृष्टियुगलाधिरूढः पृथ्वीं पर्यटति । सर्वत्र पश्यति नानाश्चर्याणि । एकदा च स **ऊर्मिलन**नामा राजहंसः स्वप्रिया**धम्मिल्ला**नाम्नो राजहंस्या दोहदपूरणाय प्रतस्थे स्वर्णकमलसम्बलसबलः । ततो मार्गे गच्छता पृष्टं **मुञ्जघोषेण** "भो ! मित्राद्य क्व गम्यते गगनाध्वना ?" हंसेनापि चोक्तं-देवस्योपयाचितं देयं अस्ति, यत्प्रभावादावां मानवीं भाषां ब्रुवन्तौ वर्तावहे; तस्य पूजयाऽद्य दोहदः सम्पूर्णो भविष्यति । इति कथनवसाने ते प्राप्ता **नीलगिरिं कुमारसागर**तटयकान्तिके तालीवने । तत्र **प्रभावाकरं**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम देवं वन्दित्वा गतं हंसमिथुनं तत् । तत्रैव स **मुञ्जघोषः** स्थितो देवाराधनार्थं महादुःखार्दितः । चतुःषष्टिउपवासैः कृतैर्लाभोदये समुद्घटिते तुष्टो देवः । वरो लब्धः - "राज्यं प्राप्नुहि भो भक्त !" एवं स सुखी जातः । तेन हंसेन पूरिताः पूजोपहाराः । सान्निध्यं च कृतम् । हंसबलेन गतः स्वं देशम् । पित्राभिषिक्तः पट्टे स्वे । तेन राज्ञा हंसमिथुनं आत्मवत् आत्मसमीपे स्थापितम् । प्रत्यहं हंसयुगलासनवाहनेन देवं वन्दयितुं गगने गच्छन् **हंसासनो** नाम राजा जातः । कालेन तत् मिथुनं मृत्वा हंसस्य तस्यैव मुञ्जघोषस्य राज्ञो गृहे पुत्रद्वयं जातम् । कालेन तद्युगले ज्येष्ठं **अभयशेखरं** नाम पुत्रं राज्ये निवेश्य स्वयं जग्राह दीक्षां जैनीं जैनाचार्यान्तिके । कृतसंलेखनः प्रपन्नोऽनशनं समाश्रितसंस्तारकः कृतदुःकृतगर्हः सुकृतानुमोदनाप्रधानः प्रदत्तसर्वजीवमिथ्यादुःकृतः अशुभकर्मक्षयाकाङ्क्षी अन्तःकरणेन प्राप्तकेवलः शैलेशीं अवस्थां गत्वा चतुर्भिः समयैः कर्माणि हत्वा चतुर्दशमान्ते सिद्धिं गतः ।

द्वाविंशतिसङ्ख्योऽयं, मेरुतुङ्गेण सूरिणा ।
प्रबन्धो मुञ्जघोषस्य, स्तम्भेशचरिते कृतः ॥ १ ॥

★

(प्रबन्धः २३)

धन्यानां ते नरा धन्या, ये रता जिनशासने ।
तद् द्विषन्ति पुनर्ये च, का तेषां भाविनी गतिः ॥ १ ॥

जालन्धरदेशे **चन्द्रवटे** पुरे **रुक्मिणी**पतिः **मेघनादो** राजा । अन्यदा स राजा चौरं व्यापादयितुं दत्तवानादेशं नगररक्षकाय । चौरेण मार्यमाणेन च विद्याद्वयं दत्तं राज्ञे । ततो मुक्तश्चौरः । **पद्मिनी**नाम तस्य प्रियाऽस्ति । लक्षणेनाऽपि पद्मिनी । सा राज्ञो विद्याराधनकाले अग्नौ आहुतीर्दत्तवती । तुष्टा विद्या । एकदा च तस्य राज्ञो जलक्रीडां कुर्वतो नद्यां शबमागतम् । निर्विषीकृत्य परिणीता सा कुमारी दक्षिणकराङ्गुलीन्यस्तमुद्रालिखितनामप्रमाणेन सर्वं व्यतिकरं ज्ञात्वा तया सह ससैन्यो गतो नेपालदेशे **हरिचन्द्र**पुरीश्वरे**ऽमृतचन्द्रा**प्राणनाथवेष्टितः । जातं युद्धम् । रणे जितः स्वसुरः । प्रदत्तं च राज्यम् । व्रतं गृहीतं **नरसुन्दरेण** । मोक्षं गतः । **मेघनादो**ऽपि नरसुन्दरपुत्र्या तया **चन्द्रलेखया** पट्टराज्ञ्या शुशुभे ललाटस्थया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रकलया तारकेश्वरकिशोरशेखर इव । स **मेघनादो** राजा एकदाऽरण्यानीं नीतो विपरीतशिक्षितेनाश्वेन विश्रान्तस्तापसाश्रमे तैः सार्धं गतः स राजा **कृपाकोशागार**नाम देवं वन्दितुम् । स तस्थौ राजा तद्देवाग्रे यावत् योजिताञ्जलिरेव - "गगनगमने शक्तिरस्तु ते" इति तुष्टेन देवेन वरो दत्तस्तस्मै । स च जगाम स्वगृहं गगनमार्गेण । जातं माङ्गलिकम् । राज्यं च वैरिभिराक्रान्तम् । नगरबाह्य एव पारणकविधिश्चक्रे । ततस्तद्देवप्रभावेण सर्वेप्यरातयः पदातयः समभूवन् । नश्यन्तो न पश्यन्ति पदौ न चलतः । वैरिराजानो जीवितयाचितारो जाताः । ततः स सम्राट् जातः । नित्याभिनवविमानरचनया वर्षलक्षं यावद्देवमित्थं ववन्दे । स मृतश्च माहेन्द्रे देवो जातः ।

अयं त्रयोविंशतिमप्रबन्धः, श्रीमेघनादस्य गुरूपदेशात् ।
श्रीस्तम्भनाथप्रभुसच्चरित्रे, श्रीमेरुतुङ्गेण मुदा प्रबद्धः ॥

★

(प्रबन्धः २४)

पदवाक्यप्रमाणानि, विद्यन्ते कस्य नानने ।
नमोऽर्हते वदत्युच्चैर्यदास्यं तद्वयं स्तुमः ॥ १ ॥

हीमउरदेशे हीरपुरे हरिदत्तो राजा । **हरिकान्ता** नाम प्रिया । एकदा च स नृपो निशीथे बालामेकां रुदतीं श्रुत्वा स्वाश्रयात् सहसा समायातो बहिः तस्याः समीपे । पृष्टवान् राजा स्वरूपं - "हे कल्याणि ! कल्या(नि) तवङ्ककानि ?" सा प्राह तं च प्रति - "हे महाभाग ! अहं **कोङ्कण**देशस्याधिपतेः **कुमारेश्वर**स्य पुत्री **भवनमञ्जरी** नाम **हरिदत्ता**नुरागिणी सती **गदाधर**नामविद्याधरेण अत्राहमानीतास्मि । स चाद्य सन्ध्यायां सिद्धविद्यो मां परिणेष्यति" । इति श्रुत्वा तेन **हरिदत्तेन** वंशीजालमध्यो विद्यां साधयन् गदाधरो लब्धः । जातमुभयो रणम् । रणे जितो **गदाधरः** । **हरिदत्ते**नापि सा परिणीता तत्रैव । ततो दम्पती तौ गृहं जग्मतुः । सोऽपि **गदाधरः** सञ्जातो विलक्षः प्राप्तः स्वसद्म । अन्यदा च स हरिदत्तःस्वप्रासादचन्द्रशालासिंहासनगतो विद्याधर्या चैकया समुत्पाट्य नीतो **वैताढ्य**गिरौ **नागपुरं** नाम नगरम् । तन्नगरेशेन **विद्युन्मालि**नामविद्याधरेश्वरेण परिणायितो **नागदत्तां** निजां पुत्रीम् । कतिचिद्दिनान्ते **विद्युन्मालिना** स जामाता **हरिदत्तो** राजा महत्या विभूत्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुरङ्गदलसबलः **गगनपुरेशस्य रत्नचूडस्य** विजयार्थं दक्षिणश्रेण्यां प्रहितः । **हरिदत्तेन** रणे स्वशक्त्या पराजितो **रत्नचूडः** । ततो **रत्नचूडे**नापि कन्याशतं **हरिदत्तो** विवाहितः । करमोचने प्रज्ञप्ती नाम महाविद्या दत्ता राज्ञा हरिदत्ताय । सहस्रं च हस्तिनां वाजिनां च लक्षं पदातिकोटिं च अयुतं ग्रामाणां च प्रयुतं च दासीनां अर्धप्रयुतं च दासानाम् । इत्थं परिणीय **नागपुरं** पुनरायातः । तत्र महासुखं कियन्त्यहानि स्थित्वा सबलवाहनः प्राप स्वगृहं विमानेन । अपि चेत्थं राजसुखं भुञ्जानस्य तस्य जलशोषोऽग्निनाशश्च भाग्यक्षयात् यज्ञे(जज्ञे) देशमध्ये । कल्पान्तकालोपमा जाता । ततो हाहाकारे प्रसरति बुम्बारवेण रोदसी विवरं दलायति (?) । पूत्कारभारनिर्भरं भवनान्तरं प्रसरति कृतस्नानः कृतदेवगुरुस्मरणस्तुति मन्त्रपाठपरायणः समावर्जितदेवव्रजः समाह्वाननपूर्वं समाकर्षितदेवीवृन्दः कृतश्वा(स्वा)ङ्गरक्षः स्वां कुलदेवीमाराधयामास । ततस्तस्या आदेशेन "**कुरुक्षेत्र**मण्डले **पञ्चह्रदा**ददूरवर्तिनि **विचित्रकूट**गिरौ **त्रिकूट**शृङ्गे स्थितं **परमेश्वर**नाम जिनबिम्बं आनीय महाशान्तिकार्थकृतस्नात्रजलधारया सर्वं लोकं सुखीकुरु" । कृतमित्थं च तेन राज्ञा । इत्थं शरदां लक्षं यावद् भक्त्या पूजितः । इत्थं धर्ममनेकधा विधाय सुराङ्गनानां नयनातिथिर्बभूव ।

हरिदत्तप्रबन्धोऽयं द्विदादशतया मितः ।
स्तम्भनेन्द्रचरित्रेऽस्मिन्नघौघघस्मरापहे ॥

*

(प्रबन्धः २५)

निरञ्जनो निराकारो, मुक्तिस्थोऽपि हि सर्वगः ।
अग्राह्यश्चेन्द्रियाणां यः स देवो हृदि मे सदा ॥१॥

हस्तिनागपुरे कामसेनो राजा । **कामपताका**नामवामाङ्गलक्ष्मीः चास्य । तत्पुरे अष्टौ सहस्राणि नैगमानां अष्टासु दिक्षु व्यवसायार्थं प्रसरन्ति यस्य स **कार्तिक**नामा धनद इव धनदो निवसति महाश्रेष्ठी । गरीयः सुगरिष्ठः **श्रीमुनिसुव्रतस्वामि**चरणाम्भोजभृङ्गराजः परमार्हतः विशुद्धसम्यग्दर्शनः । अन्यच्चोच्यते अस्य-**कार्तिक**श्रेष्ठिमित्रं **गङ्गदत्त**नामा संसारविरक्तकर्मलाघवतया संयमं जग्राह । स च **कार्तिक**नामा तेन गङ्गदत्तेन षण्मासीं यावद्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महासंवेगरसोदाहरणैर्नित्यवैरिभिः अनेकैश्च निर्वेदजनकैः श्रीभरतादिकथाप्रपञ्चैः प्रतिबोधितोऽपि संयमभारधुरं उद्वोढुं न प्रोत्सहते पदमेकमपि गौर्गलिरिव प्रनोददुर्विनोदतोदविडम्बितोऽपि महालस्यविषयलालस्यदुर्ललिततया। **गङ्गदत्तो**ऽपि निरतिचारं चारित्रं समाचचार। त्रिदिवविमानवासं ववास काले पराशुः(सुः) सन् मरणाराधनया च **गङ्गदत्तो**ऽपि। **कार्तिक**श्रेष्ठी सावद्यं सोपक्लेशं सम्बन्धं बहुसाधारणकामभोगं असातबहुलं गृहस्थवासं समासाद्य विवर्तमानो व्यवहारमार्गं यावदस्ति तावदन्तरे राज्ञासो परोधमभ्यर्थितः श्रेष्ठी - "असौ महर्षिः पारणकदिने अङ्गुनिकास्थाने तव पृष्ठे स्थालं दत्वा भोजनचिकीरस्ति। दैवात् मयापि स्वीकृतमेतदुक्तम्। अधुना सा वेला। हे महाश्रेष्ठिन्! कृतार्थय। चेदन्यथा करिष्यसि मदुक्तं तदाऽसौ कोपवान् शापमपि दास्यति।" श्रुत्वेति कार्तिको राजोक्तं तत् तथा चकार। "रायाभिओगो य गणाभिओगो" इत्यागारं जिनोक्तं राजादिसङ्कटं पतितानां हृदि स्मरन्। ततो गतो गेहं विचिन्त्य सर्वं परिग्रहमुत्सृज्य नैगमसहस्राष्टकपरिवृतः **श्रीमुनिसुव्रत**पार्श्वे गृहीतव्रतो जातः। मासं यावत्कृतकायोत्सर्गः काकादिदुष्टपक्षिव्यूहैस्तत्तापसभिक्षुकृततप्तक्षैरेयीभाजन-तलदग्धस्फटितमांसभक्ष्यमाणपृष्टपीठफलकः श्रद्धासोढमहोपसर्गो मृत्वा जातः सौधर्मे शक्रः। सोऽपि तापसः सतामसोऽज्ञानकष्टेन मृतोऽस्य इन्द्रस्य वाहनं ऐरावणनामा जातः। तेन श्रावकपराभवलक्षणेन पापेन यद्बद्धं नीचैर्नामगोत्रकर्म तत् फलितम्। अन्यत्कारणं शृणु हे भव्य! येन कर्मणा शक्रत्वं प्राप्तं, अश्रुत्वा कोऽपि न विदग्धः स्यात्। यदाहुः श्रीशय्यम्भवस्वामिपादाः मणकनामशिष्यपुत्रं प्रति -

"सुच्चा जाणइ कल्लाणं, सुच्चा जाणइ पावगं॥"

अनेन श्रेष्ठिना दर्शनप्रतिमानाम प्रथमा श्रावकप्रतिमा शतवारं व्यूढा। **श्रीपरमेष्ठिना**मजिनबिम्बे त्रिकालं रचिता पूजा। तेन पुण्योदयेन सौधर्मेन्द्रो जातः। आधुनिक इन्द्रः **श्रीस्तम्भनायक**परिपूजाफलाज्जातः।

प्रबन्धः कार्तिकस्यायं, पञ्चविंशतिसम्मितः।
श्रीमेरुतुङ्गरचिते, स्तम्भनाथकथानके॥ ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(प्रबन्धः २६)

काले गच्छति **हस्तिनागपु**रात् तत् श्रीजिनराजबिम्बं समुत्पाट्य शक्रेण देवलोके नीतं तत्र पूजितभक्त्या पूर्वभववात्सल्यात् इन्द्रस्य महती भक्तिरभूत् ।

अयमेव महाधर्मः इदमेव परं तपः ।
इदमेव परं ब्रह्म यद्भक्तिर्जिनशासने ॥

श्रीरामचरित्रे कथोल्लेखोऽयं – विशेषकार्येण **श्रीरामेण** दण्डकारण्ये गतेन चिन्तितं चेति **सीतया** सार्धम् – "यदि सामग्री स्यात् बिम्बस्य तदा पूज्यते जिनेन्द्रः हे प्रिये ! ।" इत्युक्तेरन्त एव वज्रिणा साधर्मिकगौरवेण अवधिज्ञाने[न] तन्महापुरुषमनोरथं ज्ञात्वा तन्निजं बिम्बं **सर्वदुःखनिवारणं** नाम देवतावसरात् स्वस्मात् आनीयार्पितम् । सप्तमासदिननवकं पूजितम् । व्याघुट्य जिगमिषातरलतया **श्रीरामेण सीतया** च समर्पितं इन्द्रस्य । सीताऽपि तृतीये दिने तद्दिनाद् **रावणेन** जह्रे ।

श्रीरामस्य प्रबन्धोऽयं, द्वित्रयोदशसंख्या ।
स्तम्भनेन्द्रपुराणेऽस्मिन्, सर्वोपप्लवहारिणि ॥ ॥

*****

(प्रबन्धः २७)

बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः ।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वन्दमानस्य ममास्तु देव ! ॥ १ ॥

द्वारकानाथस्य चरित्रोल्लेखो ज्ञेयः । तथा च **कृष्णो** राजा नवमो वासुदेवः नवमप्रतिवासुदेवरणे सञ्जाते सति स्वसैन्यजीवनार्थं **शक्रा**देशेन **चमरेन्द्रेण** समर्पितं **कृष्ण**महाराजस्य **पार्श्वनाथ**बिम्बम् । आसनं च कृत्वा स्थापितम् । तस्य स्नानाम्भसा नीरुक् समजनि सर्वं यादवेन्द्रसैन्यम् । **गूर्जरदेशम**ध्ये तदा प्रभृति शङ्खेश्वरनगरं प्रतिष्ठितम्, यत्र भूमौ स्थित्वा **जरासिन्धु**चक्रेणैव प्रतिमुक्तेन **जरासिन्धु**शीर्षं छिन्नं **नारायणेन** । जाते जयवादे हरिणा पूर्वं **करचटितः** पाञ्चयज्ञः(जन्यः) पूरितः । जिते सति **कृष्णेन द्वारकायां** पुरी आत्मसमं नीतम् । तत्र प्रासादे पूजितम् । मूलस्थानकं तत्रैव । स्थटकं सपादुकायुग्मं तत्रैव **पञ्चाल**देशमध्ये स्थितम् । तदद्यापि सर्वलोकस्य दैवतं जातम् । **मूलथाण**नामा देवः कुष्ठादिरोगहन्ता निर्मलदेहदाता प्रथितः श्रूयते ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपार्श्वनाथबिम्बे हरिणा गृहीतेऽपि दु:स्पर्शद्युतिभ्रंशादिरोगोपद्रुत: सूर्य: समेतस्तत्र मूलस्थानके प्रभुं प्रणन्तुम् । लोकाशा: पूरिता: इत्युक्तं च "स्वामी पार्श्वनाथोऽत्रैव स्थितो मान्य: सर्वै: मम देहमनेन प्रियाप्रियं कृतं देवेन च सुरूपं सुखस्पर्शं मृदु, भो लोका: ! विशेषात् तत्त्वमिदं च ममादित्यस्योपदेशेन आदित्यवारे यात्रा विधेया ।" इत्थमस्योपासनेन समुदयो जायते । कुष्ठानि यान्ति । दुष्टानि विलीयन्ते । सूर्य: स्वयं समेत्य तत्र प्रभावनां कृत्वा पादयुगस्य पुरो भक्त्या बद्धाञ्जलि: स्तुत्वा च लोकस्य देवाशाकारकस्य मनोवाञ्छितानि दत्वा ययौ स्वस्थानम् । इत्थं पञ्चसप्तवारमागत्याऽऽदित्येन तीर्थस्थापना कृता । गच्छति काले तत्र सूर्यप्रतिमा निर्माय प्रासादं स्थापिता देवाराधनजातप्रसादविगतकुष्टेन **देवपालदेव**नामराज्ञा पश्चिमाशानाथेन । तत्र **झंझूवाडा**नामा ग्रामो जात: । **कृष्णस्य शल्यहस्तो झंझू**नामा यत्रोत्तीर्णोऽभूत् । कटके अवाधिष्ठिते सति तस्य नाम्ना वाटकं प्रसिद्धिमगमत् सैन्यान्त: । पश्चाद् लोकमध्येऽपि च पाण्डवानामाश्रयोऽभूत् तत्र स्थानके **पञ्चास्त्ररयो** नाम ग्रामो जातोऽद्यापि **पंचासर:** कथ्यते । यत्र च लोकैर्जीवनस्वामीश्रीनेमीश: प्रणम्यते स्म । स्थानके तत्र **पाडला**ग्रामो जात: **जीवच्छ्रीनेमिबिम्बं** लेपमयं प्रतिष्ठितं इन्द्रेण । **धरणेन्द्रे**णापि च पूर्वं पाटला पुष्पमाला कण्ठे न्यस्ता प्रभो: । तदैव भव्या पाटला मालेयं सर्वैर्लोकैरुच्चरतिं मुखेन अत एवायं पाडलाग्रामो जात: । अन्यच्च यदा पूर्वं प्रतिवासुदेवसैन्येन हतान् निजान् क्षत्रियभटान् दृष्ट्वा म्रियमाणान् विधुरो **नारायणो** जयश्रियं दुरापां विचिन्त्य **श्रीनेमिं** व्युपपद(?) ज्ञपयति स्म - "हे प्रभो ! कथं जेतव्योऽयं अविनाश्य स्वसैन्यम् ? ।" तत: **श्रीनेमि**रुपायं जयस्यादिदेश हरे: । "सौधर्माधिपतिना चमरचञ्चायां राजधान्यां चमरेन्द्रस्य पूजार्थं समर्पितं बिम्बमस्ति भाविजिनपार्श्वनाथस्य । तस्मादिन्द्रमाराधय त्रिभिरुपवासैस्त्वम् । इत्थं कृते इन्द्रादेशेन स चमरो भवते दास्यति बिम्बम् ।" इति प्राप्याम्नायं हरिस्तथैव विललास । यत्र सर्वेऽपि यादवा ननर्तु: जयश्रीमदेन तत्र देशे **आनन्दपुरं** जातं तत् नगरम् । जातं च **झीलाणं**दनाम कुण्डं यत्र सर्वेषां मध्यगतानां नृणां स्त्रीणां वा उच्चानां नीचानां वा कण्ठसमं जलं गात्रतश्च भवति, यत्र कुण्डे सर्वे हरिप्रभृतयो यादवा अन्येऽपि च राजानो लोकाश्च क्षत्रिया मिथोऽविश्वसन्ते निजविश्वासोत्पादनार्थं दिव्यं चक्रु: । ये कूटा भवन्ति ते मज्जन्ति । अन्येषां च गलदघ्नमेव जलं स्यात् दिव्यवेलायाम् । यदा च बिम्बं सह नीतं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिणा तदा लोकैरिति कथितं देवो देवेन सार्धं ययौ । पुनरिहैव **मूलस्थानं** तस्थौ । अतोऽस्माकं **मूलस्थान**नामा देव एष जातः । शङ्खेश्वरे यदधुना बिम्बं पूज्यते पुण्यवद्भिः एतत् स्तम्भनायकबिम्बपरावर्तेन हरेरुपरोधेन धरणेन्द्रेण स्वदेवालयात् मुक्तं ज्ञातव्यं तत्त्ववेदिभिः नात्र भ्रान्तिर्विचार्या ।

"**जोणीपाहुडभणिओ संकेओ एस मे नेयो** ।"
इतीदमस्ति मयोक्तं तत्त्वं पुनः केवलिनो विदन्ति ॥

सूरिगणा भूरिगुणा, क्षन्तव्यं दुर्वचो मम ।
उत्सूत्रपातभीतस्य, मिथ्यादुःकृतमस्तु मे ॥ १ ॥

नारायणप्रबन्धोऽयं सप्तविंशतिमोऽजनि ।
गभीरे चार्थगहने, स्तम्भेशचरितेऽन्तरा ॥ २ ॥

*****

(प्रबन्धः २८)

यः परमात्मा परं ज्योतिः, परमः परमेष्ठिनाम् ।
आदित्यवर्णस्तमसः, पुरस्ताद् यः पुनातु वः ॥ १ ॥

सुराष्ट्रादेशमध्ये **द्वारमत्यां** दग्धायां **रामकृष्णयो**र्निर्गतयो**र्द्वारिका**दाघात् जीवमानयोः पुनरब्धिनीरेण द्वादशयोजनप्रमाणायां नगरभूमौ प्लावितायां एकार्णवीभूते भूतले नगरमध्यस्थितराजप्रासादस्थो न जज्वाल देवोऽयं, पयसाऽपि च प्लावितो नासौ देवः । तत्र समये **वरुणः** प्रतीचीपतिस्तं देवं गृहीत्वा स्वगेहे देवालये एकं दिनं अपूजयत् । पुनरपि देवादेशाद् देवालयाद् **द्वारका**पुरीमध्यगते **कृष्ण**कारिते प्रासादे जलान्तः स्वेन करेण मुक्तः वरुणेन । अपि च एनमेव बिम्बं पूर्वं एकादशलक्षाणि वर्षाणां **वरुणः** पूजयामास । अन्यच्च अशीतिसहस्राणि **वर्षाणां तक्षको**ऽर्चितवान् एनं देवम् । षष्टिसहस्रवर्षाणि **पद्मावती** आराधयामास च । दशसहस्राधिकानि षष्टिवर्षसहस्राणि **सुस्थित**लवणाधिपतिः समुद्रस्य नाथः पूजयति स्म परमेश्वरं चैनम् । किं बहुना ? सकलपाताललोके **हटकेश्वरीकलानाथः हटकेश्वरनाम** लिङ्गं चतुरशीतिपत्तनेषु नागमते प्रसिद्धं तत्रापि देवोऽयं समाराधितो नागलोकनिवासिभिः इत्थमनेके पूजाप्रबन्धाश्चास्य प्रभोः ।

न देयं दूषण मह्यं, कदा कोऽपि विपर्ययः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुर्ज्ञेयं चरितं चित्रं, को जानाति महात्मनाम् ॥ १ ॥
निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवः, क्वाहं क्व वा तीर्थपतेश्चरित्रम् ।
तस्य प्रभावोऽयमवेदि तन्मया, निगूढतत्त्वं चरितं त्वदीयम् ॥ २ ॥
वरुणादिप्रबन्धोयं, स्तम्भेशातिशयागमे ।
अष्टाविंशतिमो जातो, बहुभक्तकथान्वितः ॥ ३ ॥

*****

(प्रबन्धः २९)

द्रवः सङ्घातकठिनः, स्थूलः सूक्ष्मो लघुर्गुरुः ।
व्यक्तो व्यक्तेतरश्चापि, यो न कोऽपि स मे प्रभुः ॥ १ ॥

वाराणस्यां श्रीपार्श्वनाम कुमारो राजपाटीं कृत्वा पुनरायातो राजवर्त्मनि राजचतुःपथे पारतीर्थिकं **त्रिपरुषप्रासादे** पञ्चाग्निनाम तपस्तपस्यन्तं ददर्श चैकं तपस्विनम् । चतुर्षु दिक्षु चत्वारि स्वाहापतिकुण्डानि ज्वलन्ति । पञ्चमं कठोरकिरणमण्डलं उपरि ज्वलत्कुण्डं अधोमुखः ऊर्ध्वपादः ज्वालाज्वाल कवलनविह्वलः अज्ञानक्रियः पापाधिकरणसञ्चरणप्रवणचणः मिथ्यादृष्टिः सत्यद्वेषी गाढकषायः दुष्कर्मकर्मठः **कमठ**नामा शैवः धूर्ततया सर्वं जनपदं वशीकर्तुं अनुरञ्जयितुं लग्नोऽस्ति । तदग्निकुण्डज्वलत्शुषिरमहाकाष्ठस्थं पन्नगं गतप्राणप्रायं श्रीपार्श्वः किङ्करैर्लब्धादेशैराचकर्षः । स सर्पश्चन्दनादिना स्वस्थीकृतः प्रतिबुद्धः सुधासोदरया जगद्गुरुगिरा प्रपन्नसमरसः सम्यक्त्वं प्रतिपद्य सर्वां तद्वेलोचितां क्रियां संलेखनादिसंस्तारकाराधनपूर्वं अनशनप्रतिपत्तिं सर्वसंसारनिस्तारव्यापारकारिणीं निष्केवलं त्रिधा विश्रान्तां महाभक्तिं चार्हतीं स्वीकृत्य शुभलेश्यारसेन मृत्वा **पद्मावतीपतिर्धरणेन्द्रो** जातः । तदा प्रभृति स पूजयामास एनं द्वारकाजलमध्यस्थं विज्ञायावधिना बिम्बं **पार्श्वनाथ**नाम्ना अनागतनिःपन्नं भवनपतीन्द्रः । अहो ! अज्ञानिनां असत्क्रियाकाण्डताण्डवाडम्बरः पाखण्डडिण्डिमबिधिरिति (?) तत्त्वशून्यहृदय रोदसीस्फोटकानां इति तत्र क्षणे सर्वैरास्तिकलौकैः श्रीपार्श्वदर्शितजीवदयाधर्मोदयेन त्रुट्यत्कर्ममर्मभिः महता रवेण समुच्चरितं - आः । कोऽयं धर्मः ? यत्र दर्शने देवोऽप्यज्ञानी विद्यते । एतदपि न ज्ञातं तेन यद् इत्थं तपसि प्रपञ्चिते कुवणिजानामिव नीवीहानिर्भविष्यति ? । मुमुक्षूणां कुतो देहव्यये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपुनर्भवपदफललाभः स्यात् अनेन व्रतेन जीवहिंसानृशंसेन तपसाऽपि च ? । अथवा - अहो ! देवा अपि खण्डज्ञानतया जनं भक्तं विप्रतारयन्ति, तदा किं भक्ता तद्देवाश्रवाः सन्तो विवेकविकलाः ? । अथवा किमनया कथया ? सर्वं सदेवमनुजासुरं विषयविडम्बितं कामदेवकारागारस्थं कामिनीकिङ्करं तावत् पूर्वं श्रवणशीताशनं उच्यते वचनम् । स्वामी तं श्रीपार्श्व उदासीनतया तत्कमठप्रतिबोधवचनं स्वभावमृदूक्त्वा तदग्निदग्धतद्भुजगसद्गतिकारणं धर्ममुपदिश्य च पुरस्थान् जनान् अमृततरङ्गिण्या दृशा क्षीरास्रवमुचा वाचा च विलोकयन् जल्पन् सुखासनासीनो यावदास्ते तावदेके सभापतयो भूत्वा पक्षं स्वीकृत्य तर्कसम्पर्कं वृन्दारकवाण्या आरेकाकन्दकृपाण्या उपन्यासाभ्यासेन स्पृशन्ति स्म । केचनाऽपि च सभ्या भूयः शृण्वन्ति स्म । "भो ! भो ! तत्त्वातत्त्वविचारचतुरा ! अनातुरा ! हिंसारसाव्यापृताशयाः ! शुभाशयाः ! विशुद्धवृषवासना ! नव्यनव्या ! महाभव्या ! हृदयदेवालये भावनाप्रदीपे अस्मद्वचनं सुरचनं मूलनायकतां नेतव्यं यदि चेतनाः स्थ यूयम् । 'नद्यास्तीरेऽद्य प्रगे गुडशकटमुत्कटपर्यस्तं धावत धावत डिम्भका' इत्यादि विप्रतारकपुरुषवचनश्रवणात् प्रवर्तमाना विप्रलम्भभाजो जायन्ते तथेदमस्माकं वचनं नाऽङ्गीकार्यम् । यूयमपि श्रोतारस्तादृशा न स्थ ! वयमपि वक्तारो न तादृशाः स्मः । अन्यच्च -

अन्येषां खण्डदृष्टीनां, सर्वज्ञवचनादृते ।
वचनेषु न विश्वासो, विधेयो मोक्षमिच्छुना ॥ १ ॥

अत्रान्तरे प्रत्यूहकारः पक्षे सम्प्रति चकाराऽऽक्षेपं "हं हो ! सुविचारसभाशृङ्गार ! उदारवचनव्यापार ! कृतप्रत्यक्षपरोक्षनामप्रमाणयुगलीस्वीकार ! यत्त्वया पक्षोऽयं स्वीकृतः कृतज्ञ हे ! श्रीसर्ववेदी स्यात् देवाधिदेवः सर्ववेदित्वात्, परमात्मवत् । तस्मादयं प्रपञ्चः सर्वः । किं हे सर्वग्रन्थपन्थपथिकदेवाः । पञ्च पूर्वं तदादिष्टानि दर्शनानि, पञ्च तदाश्रवा दर्शनिनः, पञ्च तदुक्तानि पञ्च शास्त्राणि।" मूलवाग्मी प्राह - "भो ! आन्तरमयं चक्षुः समुन्मील्य अनाद्यविद्यातिमिरभरध्वस्ततेजः प्रसरं नवप्रबोधकृतमद्वाक्यदिनकरोदयस्पृष्टं विलोक्य अनेन धूर्तपञ्चकेनालम् । एतावतैव प्राप्ताऽस्माभिर्जयश्रीः तावकीनपञ्चकप्रपञ्चनेन धृतोऽसि रे बाहौ मया । सभ्याध्यक्षं क्व गमिष्यसि ? । पदमेकमपि वक्तुं न शक्तः भारतीभूरिप्रसादप्रभावेण त्वं मया वचननिगडेन निविडं निबद्धोऽसि । विचारय, यदि ते पञ्च देवाः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्वमतप्रतिष्ठातार, तदा ते मिथो विभिन्ना:, नो चेत् पञ्चापि मे एकाध्वादिष्टारस्तर्हि निजेन पञ्चकत्वेन लज्जिता आपा(अपि) पञ्चानामेकत्वं प्रत्यक्षविरुद्धं बम्भण्यते। वेषेण आचारेण ग्रासग्रहणेन तत्त्वोपदेशेन मुक्त्वापि च प्रतिदर्शनमेवं द्वात्रिंशता भेदैर्वैभिण्यं(न्न्यं) परिस्फोरीति । अत एव निजेच्छाजल्पनात् पञ्चकत्वं प्रसिद्धं पञ्चत्वं तेषां स्वप्रतिष्ठापञ्चत्वाय बभूव । येन देवेन यावन्मात्रं यावत् स्वेन ज्ञानेन दृष्टं ज्ञातं च तावन्मात्रं स्वशिष्येभ्य: समादिष्टम् । अत एव ते नैकमता नैकाचारा नैकसिद्धान्ता नैकवेषा नैकदेवा नैकतत्त्वा नैकप्रमाणा नैकभिक्षारीतय: नैकरीतिदेवोपासना नैकविधिभिक्षाग्राहिण: । अनेन तवोदितेन पञ्चात्मकेन हेतुना सर्ववेदित्वमसिद्धं, सर्ववेदितायां असिद्धायां खण्डज्ञानिनां दर्शनस्वामिनां पञ्चानामपि प्रसिद्धा एतस्यां वपु:स्थायां च पूज्यतादृग्विकलस्य दर्पणार्पणप्रतिमा सम्भाव्यते । खण्डज्ञानितायां जाग्रद्रूपायां अविवेकितैव पदे पदे प्राणिन: प्रादुर्भवति । तदिदं अविवेकिताया मूललक्षणं वर्वर्ति। यत: तै: स्वमते मांसादनं दयावृक्षसमूलोन्मूलनं स्वीकृतं स्वयं च कृतम् । जिनपतिं जिनभक्तं च विहाय सर्वे देवा प्रजापति-कल्पितयज्ञभागा:, अन्यथा च कृतमांसभक्षणनियमा जिनाश्रवाश्च ते ज्ञेया: । यदुक्तं तेषां मते

अत एव पुराकार्यो, वेदपाठ: प्रयत्नत: ।
ततो धर्मस्य जिज्ञासा, स्व:कामोऽग्निं यथा यजेत् ॥ १ ॥

हे ! प्रत्यूहेन तत्त्वं विलोकय, अस्मिन्नेव श्लोके व्यङ्ग्यं दुर्ज्ञेयं स्व:कामपदेनेति क्रतुकर्मणो मुक्तिदातृत्वं अनुचितम् ।

तथा चान्यत्-

उद्गीथ: प्रणवो यासां, न्यायैस्त्रिभिरुदीरणम् ।
कर्मयज्ञ: फलं स्वर्गस्तासां त्वं प्रभवो गिराम् ॥

अत्रापि च फलं स्वर्ग: इति पदोल्लेखेन यज्ञाज्ञाया आचरणेन कृतेन अपुनर्भवपदप्राप्ति: प्राणिनो न स्यात् । एतेन यज्ञादिकर्माणि स्वार्थसार्थप्रतिपूर्तये स्वादिभिर्मिथ्यात्वादिभिर्नास्तिकगुरुभि: पातकमूलानि महारम्भाणि सन्त्यपि समाद्रियन्ते। यथा क्षत्रियैराहवो विधीयते स्वार्थसिद्धये, यथा गृहमेधिभिर्विवाहाद्या क्रिया महारम्भाऽपि सती वल्लभेव वल्लभा स्वीकृता, नास्ति एवं यज्ञक्रिया याज्ञिकैरङ्गीकृता। वेदस्थानां धूममार्गानुभव: सम्भवति, अतो हेतोर्जल्पते चेत्थं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"पञ्च शूना गृहस्थस्य तेन स्वर्गं न गच्छति ।" अतो द्विजानां गार्हथ्यं सम्भाव्यते। तेऽपि यदा शिखासूत्रदूरतरा ज्योतिर्मार्गिगामिन उक्तास्तदा ते भगवन्तो न मांसाशिनः, जटाधरा अपि मांसाशिनो न प्रतीताः । यदि पिशिताशिनस्तेऽपि यज्ञे पुरोडाशमिषेण द्विजा इव तदा नमतिनां च तेषां च किमन्तरं प्रतिभाति । भो ! प्रतिपक्षकक्षादक्ष ! जागृहि, विनष्टं च ते मतम् । दुर्मते ! भवद्दर्शनडिण्डिकगृहमध्यार्धे प्रदीपनं अदिदीपत् । कथं मध्याद् बहिर्भविष्यसि । विलोकय । भो ! ये देवा भवन्मतेऽङ्गीकृताः सन्ति परमाप्तबुद्ध्या तान् निरूपय । यो वे[१]

शघनः केवलात्मा वर्ण्यते तद्ध्यानान्मुक्तिरेव यदुक्तं -

वीतरागं स्मरन् योगी, वीतरागत्वमश्नुते ।
सरागं ध्यायतस्तस्य, सरागत्वं तु निश्चितम् ।

यो भवन्मते दशावतारावतारितोऽपि विष्णुर्गीयते मुक्तिदः प्रतिभवं भवचेष्टया विचरन् विडम्बयति स्म यः स्वं मीनाग्रस्ता बुभुक्षितेन । अन्यद् यदि स विश्वोद्धर्ता दैत्यहन्ता भुक्तिमुक्तिदाता तदा स मीनादिभवेषु स्वं दुर्दशामनुभवन्तं किं न ररक्ष । यानि क्रूरकर्माणि तेन हरिणा दशसु भवेषु कृतानि तानि वयं श्रोतुमक्षमाः । एके पुनः पण्डिताः सभान्तः क्षणे लोकानां पुरः प्रकाश्यतानि हिंसात्मकानि चरितानि देवबुद्ध्या देवपङ्क्तौ देवः संस्थाप्यते । अहो वावदूकानां धाष्टर्यं द्योतते । अहो ! यस्मिन् धर्मे हरितिथौ पक्षद्वये जागरणक्षणे राधादिपारदारिकविलासलीलायितपुष्प-काण्डजयडिण्डिमाडम्बरः कल्प्यते । ननु भो ! अनेन वीतरागत्वेन परस्याप्तान् भवितुं इच्छन्ति ते कामविडम्बिताः । यो भवतामाप्तः परगृहे योषा भूत्वा पुत्रद्वयमजीजनत् । अन्यत् यः कृष्णो महाभारतगोत्रकदननिबन्धनमुच्यते उभयपक्षहिताहितचिन्तनात् "कृष्णो मूलमनर्थानां" इति बालावबोधपाठनात् तस्य सद्धर्ममतिर्न समपादि क्व वीतरागत्वं तादृशां संसारशूकराणां कटपूतना-दिनानामहापातकोद्यतस्य य[२]-

कामकिङ्करेण व्रतं विहाय परिग्रहश्चक्रे स्वस्य **भस्मेति** नाम कृतं यदपत्यं स सेनानी **भस्माङ्कुर** इति प्रसिद्धः यो रुद्र इतिनामा सन् प्रियाप्रीत्यै सन्ध्याद्वये नर इव ताण्डवाडम्बरं वितनोति **लल्लिपल्लि**वचनैः स्वां प्रेयसीमनु[न]यन् जगाल

१. ८२ तमं पत्रं नास्तीति पाठस्त्रुटितः ॥
२. ८४ तमं पत्रं नास्तीति पाठः खण्डितः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुद्रत्वं तस्यान्तःकरणात् ।

इत्थं सर्वे स्त्रीदासा देवाः । यदुक्तं

ये स्त्रीशस्त्राक्षसूत्रादिरागाद्यङ्ककलङ्किता ।
निग्रहानुग्रहपरास्ते देवाः स्युर्न मुक्तये ॥ १ ॥

नाट्याट्टहाससङ्गीताद्युपप्लवविसंस्थुलाः ।
लम्भयेयुः पदं शांतं, प्रपन्नान् प्राणिनः कथम् ॥ २ ॥

कोदण्डदण्डचक्रासिशूलशक्तिधरा अपि ।
हिंसका अपि पूज्यन्ते, देवबुद्ध्या दुरात्मभिः ॥ ३ ॥

इति वदतः पक्षेशस्य सरस्वती सान्निध्यं चकार । वाक्पतिरपि च वचनानुप्रवेशं करोति स्म । अपरे सर्वेऽपि तत्रस्था जना इत्यूचुः - "साधु भोः ! साधु भोः! सत्यमुक्तम् । तेऽपि मिथ्यादृशः प्रतिवादिनः सकम्पाः सस्वेदा मुद्रितमुखास्तस्थुः ।" हतं सैन्यमनायकम् "इति नीतितत्त्वं विचिन्त्य को वादोऽस्माकं यदर्थं वादस्ते देवा मोक्षदातारो न स्युः । अत्रान्तरे धर्मदेवता महतीं प्रभावनां चकार। आकाशदुन्दुभिकुसुमवृष्ट्यादि **श्रीपार्श्व**मूर्धनि तद्भक्तानां च सर्वेषां शिरःसु। सर्वे ततः स्वाश्रयं जग्मुः । सोऽपि कमठः स्वपक्षहानिं निरीक्ष्य विलक्षास्यो दुःखान्यनुभूय मृतोऽजनि **मेघः कुमारः** प्रस्तावेऽवधिना विज्ञाय पूर्वभववैरेण तेन छद्मस्थपर्यायस्थितं प्रभुं श्रीपार्श्वं महावृष्टिजलोपसर्गादिना पीडितं **धरणेन्द्रो** अध आधाररूपेण ऊर्ध्वं छत्राकारफणरुपेण जिनं कायोत्सर्गस्थं सुखाकरोति स्म । सोऽपि च प्रतिबोधितो भगवता । यदाहुः श्रीमानतुङ्गसूरिपादाः -

उवसग्गंते कमठासुरेण झाणाओ जो न संचलिओ ।
सो सुरनरकिन्नरजुवईहिं संथुओ जयउ पासजिणो ॥

इति कमठेनाऽपि पूजितः **पार्श्वनाथ**नाम्ना एष स्तम्भनप्रभुः ।

धरणेन्द्रप्रबन्धोऽयं, चरिते स्तम्भनप्रभोः ।
एकोनत्रिंशत्तमतामाश्रितोऽतिशयाश्रितः ॥ १ ॥

(प्रबन्धः ३०)

जगद्योनिरयोनिस्त्वं, जगदीशोप्यनीश्वरः ।
जगदादिरनादिस्त्वं, जगदन्तोप्यनन्तकः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्यालमालस्तुतिभिः स्तुतोऽनेकैरनेकधा ।
तमेकं परमात्मानं शरण्यं शरणं श्रि(श्र) ये ॥

यदा प्रवर्तमानेषु, प्रबन्धेषु वचोऽनृतम् ।
शोधयन्तु कृपां कृत्वा तद्ज्ञातारः कृतोऽञ्जलिः ॥

द्रविडदेशे कान्त्यां धनेश्वरनामव्यवहारिणो वाहनपञ्चशती परतीरात् निजतीरमागच्छन्ती जलधेरन्तः कुवायुना जलमार्गादन्यत्र क्षिप्ता पर्वतोभयान्तरे स्खलिता सर्वमाकुलं जज्ञे । विललास खेवाणी । "अन्यच्च यक्षकर्दमसम्भृता कचोलिकैका वारिधेरम्भसः प्रकटीजाता । श्रेष्ठिन् ! गृहाण चैनां, पुनर्मुञ्च । समुद्रे यत्र पतति दोरकेन सह स्वेन हस्तेन तस्माद्बिम्बमुद्धृत्य सुखेन वाहनैः सार्धं कान्त्यां व्रज । अस्या**ऽप्रतिमल्लनामपार्श्वस्य** पूजया पुत्री (त्रो ?) भविष्यसि ।" तथा जातं पुत्रवर्धापनकदिने देववाणी जाताऽन्तरिक्षे तव हस्तान्मां कोऽपि गृहीत्वा यास्यति । तत्र देशे विख्यातं जातं तीर्थम् ।

धनेश्वरप्रबन्धोयं, सञ्जातो दशभिस्त्रिभिः ।
सर्वपापापहाराय, श्रीस्तम्भचरितस्तवे ॥ ३० ॥

(प्रबन्धः ३१)

मालवदेशे सारङ्गपुरे जयपालनामा । तस्य पुत्रः **सिंह**नामा सिंहस्वप्नसूचितः **जयनश्री**कुक्षिसम्भूतः सिंह इव पराक्रमी । पित्रोः परिवारस्यापि भयङ्करः । ततः पित्रा भयेन ग्रामस्त्यक्तः । तत्रापि राजहस्ती वशीकृतो यत्र गतोऽभूत् । एकदा च **सिंहेन** सिंहो मारितः पापर्द्धिरसेन सर्वजनसमक्षं पित्रा कालाक्षरितः त्यक्तश्च । निर्गतो देशान्तरं भ्रमन् **कनकगिरि**नामयोगिनः शिष्यो **नागार्जुन**नामा जातः । शिष्यपञ्चशतीमध्ये सर्वगुणोत्कृष्टः उत्कटश्च । एकदा गुरुणा "समूलं वटमानयन्तु हे शिष्याः ।" इत्यादेशं प्राप्य छित्त्वा समूलो वटः समानीतः शिष्यैस्तैः सर्वैः सम्भूय । नागार्जुनेनापि च वटबीजमेकमानीय दत्तं गुरवे । इति विज्ञप्ताः पूज्यपादाः "हे आदेश्यपादाः ! समूलोऽयं वट" इति विचार्य गुरुणा तद्वचः श्रुत्वा इदं मीमांसितं अतीवान्तर्मुखं च क्षोदक्षमं च एतस्याहो वचः । महायोगीन्द्रो भविताऽयम् । काले अन्यदा "शाकं मधुरमानय रे !" गुरूक्तं श्रुत्वा नागार्जुनो ययौ भिक्षायां । अन्धाया वेश्याया गृहे शब्दः क्षिप्तः । सा अक्का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वाराग्रहस्तिनीस्था अन्धा भिक्षां अचीकरत् साधुकिङ्कर्या। योगिनाऽपि स्वार्थलोभिना शाकं ययाचे। कुट्टिन्या प्रोक्तं हे योगिन्! तव मनोरथमहं पूर्णीकरिष्यामि। त्वमपि ममोनं यत् तद्देहि। एकनेत्रमूल्येन शाकं दास्ये। गृहीतं नेत्रं, दत्तं योगिना, निजायाश्चेटाङ्गुल्या स्वनेत्रात् कनीनिकां निष्काश्य नखाग्रेण शाकं प्राप्य दत्तं गुरोः। गुरुणा प्रोक्तं "पुनरप्यानय हे शिष्य! मधुरमिदं शाकम्"। सोऽपि गतस्तस्या गृहे। तथैवानीयार्पितं शाकं बालिकहस्ताग्रलग्नं दष्ट्वाऽचिन्तयदिति गुरुस्तं शिष्यम्। "किमिति" गुरुरुवाच "हे शिष्य! किमिदममङ्गलं तव दृश्यते"। शिष्य उवाच - "हे गुरो! वारद्वयं शाकमानीतवान् निजनेत्रद्वयं दत्वा अन्धायै एकस्यै अक्कायै। गुरुप्रीत्यर्थं कर्णेन जङ्घायां वज्रतुण्डकृमिव्यथा सेहे। भगवन्! नेत्रयोः का कथा? शिरोऽपि तृणमात्रं तस्मात्"। "त्वं वत्स! चलितुमशक्तोऽसि तिष्ठाऽस्मिन् **गिरनार**गिरौ। काले त्वं च दिव्यलोचनो महापात्रं भविष्यसि"। स स्थितस्तत्र सहाजाभ्यासयोगसिद्धिसमृद्ध्या समुत्पन्ने दिव्ये नेत्रे तेनाऽपि च **नागार्जुनेन** **श्रीपादलिप्ता**चार्याराधनप्रसादात् आकाशगामिनी विद्या प्राप्ता। अपि चाग्नेयदिशि **हंसरसाल**देशे **हंसकूट**पुरे **तिन्दूसक**वने **अमर**गुफायां **चिर्पटिनाथ**प्रसादात् प्राप्ता **धूम्रवेध**विद्या। **चिर्पटि**नामरससिद्धिर्नागार्जुनेन येन **चिर्पटिनाथ**नाम्ना योगिना **कुक्कुटेश्वर**पुरे **हंसशेखर**राजा कौतुकार्थं काष्ठग्रावमृत्स्नासप्तधातुनिर्मितमण्डपा द्वादशद्वादशयोजनप्रमाणा दश मण्डपा एकचिर्पटिधूम्रवेधयोगेन कल्केन सुवर्णराशयः कृताः। ततो **मयूरगिरि**पर्वते साऽभ्यस्ता नागार्जुनेन विद्या। पुनर्न सिद्धा। रसः सण्डो जातः। ततो जातविषादः **श्रीपादलिप्ताचार्य**पादयोः पतित्वा रुरोद। पृष्टः कारणं। कथितं अरससिद्धिलक्षणण्। ततो गुरुप्रसादप्राप्तादेशः **कान्ती**पुरात् **श्रीपार्श्वनाथ**बिम्बमानीतं गगनमार्गेण। मुक्तः प्रभुः **महीय**देशे **महेन्द्री**नामनदीतटे **सेडन**दीतीरे च पुरग्रामसमीपे तस्य बिम्बस्याग्रे योगी रसं साधयितुं लग्नः। प्राचीपति**नक्तमाल**पत्न्या **सौभाग्यमञ्जरी**नाम्ना **वीरकान्त-वीरधवल**जनन्या पद्मिनीस्त्रिया सर्वमौषधं वर्तिनं उपहारा मृदादयः कृताश्च औषधीनां रसा आकर्षिताः। निष्पन्नो रसः। षण्मास्यन्ते तत्पुत्राभ्यां "व्यापादितः स योगी" इति जल्पन् सन् हे कल्याणि! अतीवसलवणमद्यमन्नं हे कल्याणि! कल्याणसिद्धिगुरू-पदेशकारिके!। तेनाऽपि मार्यमाणेन कूपाः पदाग्रेणाहत्य न्म्पितता भग्नाः ततो ये रसा यत्र भूमण्डले वातवशेन गतास्तेषां वेधस्तत्र समजनि। बिम्बस्य **स्तम्भन**नाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जातम्। ग्रामोऽप्यनेन नाम्ना विख्यातो जातः इति श्रूयते।

आनन्त्यादिह कालस्य, प्रबन्धानामनन्तता।
तथाऽप्यमी प्रबन्धास्तु, द्वात्रिंशत् प्रकटीकृताः ॥

घटितस्त्वं न केनाऽपि, खानिमध्यान्न चोद्धृतः।
स्वयं सिद्धः पुरा पञ्चधनुःशततनून्नतः ॥

वितस्तिमात्रो भविता, श्री पार्श्वः स्तम्भनायकः।
युगप्रधाने **सूरिश्रीदुःप्रसभे** प्रवर्तति ॥

पद्मनाभोदये जाते, पुनर्वपुःसमुन्नतिः।
धनुःपञ्चशतीगात्रः पुनरेष भविष्यति ॥

भरते प्रलयाक्रान्तेऽङ्गुष्ठमात्रतनुः प्रभुः।
कृतमालनाट्यमालाभ्यां, पूजावान्भविष्यति ॥

वार्तेयं घट्यमानापि, दुर्घटा घटतां कथ्।
पद्मावतीप्रभावेण, सत्यं सम्भाव्यतेऽखिलम् ॥

निरवद्या महाविद्याः, पार्षद्याः ! श्रूयतामिदम्।
देवेन्द्रस्तवसङ्केताद्रहस्यं प्रकटीकृतम् ॥

नागार्जुनप्रबन्धोऽयमेकत्रिंशत्तमोऽजनि।
चरिते स्तम्भनाथस्य, सर्वकल्याणकारिणि ॥ ॥

*****

(प्रबन्धः ३२)

अमेयगुण ! वामेय ! प्रभावविभवः(व!) प्रभुः(भो!)।
अदम्भस्तम्भसंरम्भस्तम्भनायक ! पाहि माम् ॥ १ ॥

कलिकालकालियाहिकालकूटामृताकर !
परिभूतमरिव्रातैः, पाहि मां स्तम्भनायक ! ॥ २ ॥

आजन्मामुद्रदारिद्र्यसमुद्रावर्तपातिनम्।
कान्ततीर्थकृतो लक्ष्म्याः पाहि मां स्तम्भनायक ! ॥ ३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभावकपरम्परायां **श्रीचन्द्रगच्छे** श्रीसुविहिंतशिरोऽवंतस**वर्धमानसूरि**नामा **वढवाण**नगरे विहारं कुर्वन्नाययौ । लब्ध**सोमेश्वर**स्वप्नं(प्नः) **सोमेश्वर**नामा द्विजातिः प्रभाते **वर्धमानसूरि**रूप ईश्वरोऽयं साक्षादेष भगवानाचार्यः इति स्वप्नादेशप्रमाणेन प्रतिपद्य स्वां यात्रां सम्पूर्णां मन्यमानो आचार्यान्तिके शिष्यो जातः । पदेऽभिषिक्तः । काले जाते **जिनेश्वरसूरि**नामा तस्य शिष्यः **श्रीमदभयदेवसूरि**र्नवाङ्गवृत्तिकारः । सोऽपि कर्मोदयेन कुष्ठी जातः । **श्रुतदेवता**देशात् दक्षिणदिग्विभागात् धवलिक्कके समागत्य सङ्घ यात्रया **श्रीस्तम्भनायकं** प्रणन्तुं स **सूरिरागतः** । ११३१ वर्षे **श्रीस्तम्भनायकः** प्रकटीकृतः । प्रतिदिन**ग्रामभट्टकपिलया** गवा निजौधस्य क्षरत्पयोधारया सञ्जायमानस्नपनस्वरूपोऽभूत् । तदा च **श्रीमदभयदेवसूरिणा** **जयतिहुयणद्वात्रिंशतिका** सर्वजिनशासनभक्तदैवतगणप्रौढप्रतापोदयात् गुप्त-महामन्त्राक्षरा पेठे । षोडशे च काव्ये स सूरिरशोकबालकुन्तलसमपुद्गलश्रीरजनि । स्वामी च **पलाशवृक्षमूलात्** आविरास । ततः शासनप्रभावको जातः । **१३६८** वर्षे इदं च बिम्बं **श्रीस्तम्भतीर्थे** समायातं भविकानुग्रहणाय । इत्थं कालापेक्षया नानाभक्तैः नानानामग्राहं नाना भक्त्या पूजितोऽयं परमेश्वरः सर्वार्थसिद्धिदाता जातस्तेषाम् ।

द्वात्रिंशता प्रबन्धैर्बद्धं श्रीस्तम्भनाथचरितमिदम् ।
यत्र द्विषोडशोऽभूद्, बन्धोऽभयदेवसूरिकथा ॥

इत्थं अमन्दजगदानन्ददायिनी आचार्यश्रीमेरुतुङ्गविरचिते देवाधिदेव-माहात्म्यशास्त्रे श्रीस्तम्भनाथचरित्रे द्वात्रिंशत्प्रबन्धबन्धुरे द्वात्रिंशत्तमः प्रबन्धः समर्थितः । समाप्तं चेदं श्रीस्तम्भनाथचरितम् ॥

प्रशस्तिः ॥

स्वस्तिश्रीनृपविक्रमकालादेकोत्तरे-कृतिम् ।
चतुर्दशशते वर्षे, रवियोगे त्रयोदशे ॥

कार्तिके मासि राकायां, गुरुवारे स्थितोदये ।
कल्याणकारणं स्तम्भनाथस्य चरितं मुदा ॥

सूरिश्री मेरुतुङ्गेण, वादिहव्यकृशानुना ।
वादिवेश्याभुजङ्गेन, श्वेतवस्त्रांह्रिरेणुना ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येनेदं पठ्यते सर्वसमक्षं राजपर्षदि ।
अङ्गीकृत्य प्रतिज्ञानां, सप्तकं च सुदुर्वहम् ॥

सभायां बाहुमुद्धृत्य, जिनशासनवैरिणः ।
एकया वेलया सर्वे, म्रियन्ते जयवादिना ॥

अन्यच्च –

दम्भप्रोद्भटवादिशेखरमतोपन्यासविन्यासत –
च्छेदाभ्युच्छलदन्धकारपरशुर्वादीन्द्रवेश्यापतिः ।
स्याद्वादर्थविरोधिसिन्धुरशिरःसञ्चारपञ्चाननः,
पत्रालम्बनमातनोति जगति श्रीमेरुतुङ्गो गुरुः ॥
यस्येत्थं कीर्तिर्विलसति विदुषां मुखेषु,

अन्यच्च –

मलधारिगच्छनायक**सूरिश्रीराजशेखर**प्रमुखैः ।
गणभृद्भिर्गुणवद्भिर्ग्रन्थोऽयं शोधितः सकृपैः ॥

अन्यच्च –

इहोत्सूत्रं भवेत् किञ्चित्, प्रमादात्पतितं मम ।
शोधयन्तु कृपां कृत्वा, तदवद्यं बहुश्रुताः ॥

यावल्लवणसमुद्रो, यावन्नक्षत्रमण्डितो मेरुः ।
दिनपतिरुदेति यावत्, तावदिदं जयतु जिनचरितम् ॥

संवत् १४२४ वर्षे भाद्रपदकृष्णतृतीयायां गुरौ श्रीस्तम्भनेन्द्रप्रबन्धपुस्तकं लिषितं **तपश्विगच्छनायकश्रीरत्नाकरसूरि**शिष्यगणिमिश्र**पद्मकीर्तिः** पण्डितमिश्र**साधुमूर्ति**मिश्राणामपरोधेन भक्त्या च ॥ छ ॥

तत्त्वसार्थकसमाधिजन्मभिस्तापसैर्मुनिभिरस्ततामसैः ।
साम्प्रतं च विकले कलौ युगे, शासनं जिनपतेर्विभूषितम् ॥

शारदेन्दुकिरणैकसौदरः, साधुमूर्तिविलसद्गुणाकरः ।
कं नरं विबुधवर्गशेखरं, नो न रञ्जयति रङ्गसागरः ॥

नभ इव नभो विशालं, सागर इव सागरस्तु गम्भीरः ।
श्रीमदभयदेवगुरोः नवतप इव नवतपो जयति ॥

*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष नामो

(१)

कृतिनामो	प्रबन्ध
शंखिनीमत	१
दूषमगण्डिका	,,
भैरवीचरित	,,
विद्याकल्प	,,
मन्त्रसार	,
बिन्दुसारचूला	,,
योनिप्राभृत	१, २७
देवमहिमसागर	१
प्राभृतपटल	१
राजग्रन्थरहस्य	१
षाड्गुण्यग्रन्थाम्नाय	१
देवेन्द्रस्तव	३१

(२)

स्तंभनप्रतिमा-नामो	प्रबन्ध
जगदानन्दन	१
विश्वेश्वर	२
जगज्ज्योतिः	३
अमृतेश	४
जगत्पाल	५
पुराणपुरुष	६
भुवनत्रयतारण	८
सहजसिद्धि	९
लक्ष्मीकान्त	१०
जयपति	११
क्षेमंकर	१२
शबरनाथ	१३
पुरुषोत्तम	१४
निरञ्जन	१५
आदिरूप	१६
तारानाथ	,,
सर्वार्थसिद्धि	१७
स्वयम्भू	१८
सर्वपापापहार	१९
पारगतेश्वर	२०
प्रभावसागर	२१
प्रभावाकर	२२
कृपाकोशागार	२३
परमेश्वर	२४
परमेष्ठि	२५
सर्वदुःखनिवारण	२६
मूलथाण	२७
स्तम्भनायक	,,
अप्रतिमल्ल	३०
पार्श्वनाथ	३१
स्तम्भन	३१

(३)

स्थळनामो	प्रबन्ध
माकन्द (सरोवर)	२
रुक्मिणीवट	२
षड्डोषलिका महाविद्या (?)	४
सिन्दूरगिरि	,,
कुञ्जरराजवटः	८
नक्तमालदेश	१२
मानुषोत्तरपर्वत	,,
सिद्धक्षेत्र	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शत्रुंजय	,,
नर्मदापट्टदेश	१३
तोरणमालपर्वत	,,
उदुम्बर (सरः)	,,
साजण-गाजण (वृक्ष)	,,
तिलङ्गदेश	१४
ढोरसमुद्र (सरः)	,,
गौडदेश	१५
कोलापुर	,,
अवन्ती	,,
गजेन्द्रपदस्मशान	,,
शिप्रानदी	१५
सिद्धवट	,,
मण्डपदुर्ग	,,
मण्डकेश्वरदुर्ग	,,
भद्रगर्त	,,
मणिकर्णकशृङ्ग	,,
शत-सहस्र-लक्ष	
कोटिकोटि-कोटि	,,
बिन्दु (कुण्ड)	
काबेरी-नर्मदासंगम	१६
कपिला नदी	,,
तारापुर	,,
ताराविहार (चैत्य)	,,
षरुलीभूमण्डल	१७
झाडमण्डल (प्रदेश)	,,
विराटदेश	,,
रत्नापुर	,,
गन्धमादनगिरि	,,
गजकुण्डसिद्धायतन	,,
पारापतपल्ली	,,
चौरवट	,,
सज्जनपुर	,,
यमदंष्ट्रा(शिला)	१८
बीजउरदेश	१९
महन्तकपुर	,,
महाकुरलदेस	,,
मानससरः	,,
कालकूटगिरि	,,
मदनोन्मादकुण्ड	,,
मलयाचल	२०
हंससरः	,,
काञ्चनतोरणचैत्य	,,
काश्मीरदेश	२१
उत्पलभट्टानगर	,,
भीमभीषणगिरि	,,
महाराष्ट्र	,,
सुराष्ट्रामण्डल	२२
उषामण्डल	,,
शर्करा-वट	,,
माणिभद्रसरः	,,
कुमारसागरसरः	,,
जालन्धरदेश	२३
चन्द्रवटपुर	,,
हीमउरदेश	२४
हीरपुर	,,
कोंकणदेश।	,,
नागपुर	,,
कुरुक्षेत्रमण्डल	,,
पञ्चह्रद	,,
विचित्रकूटगिरि	,,
दण्डकारण्य	२६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गूर्जरदेश	२७
शंखेश्वर नगर	,,
द्वारिका	,, , २८
पञ्चाल देश	,,
मूलथाण	,,
झंझूवाडा	,,
पंचासरः	,,
पाडलाग्रामः	,,
आनन्दपुर	,,
झीलाणंद-कुण्ड	,,
द्वारमती	२८
सुराष्ट्रादेश	,,
त्रिपुरुषप्रासाद	२९
द्रविडदेश	३०
मालवदेश	३१
सारङ्गपुर	,,
गिरनारगिरि	,,
हंसरसालदेश	,,
हंसकूटपुर	,,
तिन्दूसकवन	,,
अमरगुफा	,,
कुक्कुटेश्वरपुर	,,
मयूरगिरि	,,
कान्तीपुर	३०,३१
महीयदेश	,,
महेन्द्रीनदी	,,
सेडी नदी	,,
वढवाण	३२
धवलिक्कक	,,
स्तम्भतीर्थ	,,

(४)

व्यक्ति विशेष-नामो	प्रबन्धः
मेरुतुङ्गसूरि	१, २, १०, १५, १८, २०, २३.
जरत्कुमारी	४
जरत्कुमार	,,
आस्तीक	,,
परीक्षित	,,
जिन्मेजय	,,
मौलक्य	,,
भारद्वाज	,,
तक्षक	,, , २८
त्रिभुवनस्वामिनी देवी	१२
महादेव	१३
पार्वती	,,
शिववाड (वादित्रोपाध्याय)	१४
शक्तिवाड	,,
हस्तवाणि	,,
मामा (गन्धर्व)	,,
मूमू ,,	,,
निरञ्जनास	,,
रामसागरमुनि	१५
प्रभाचन्द्रमुनि	१६
तारादेवी (राज्ञी, देवी)	,,
चारुदत्तमुनि	२०
तैलपदेव	२१
धर्मशेखरमुनि	,,
राम	२६
सीता	,,
रावण	,,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृष्ण	२७
झंझू	,,
पद्मावती	१, २८
जयपाल(नागार्जुन-पिता)	३१
सिंह (नागार्जुन)	,,
जयनश्री (नागार्जुन-माता)	,,
कनकगिरि-योगी	,,
नागार्जुन योगी	,,
पादलिप्ताचार्य	,,
चिर्पटिनाथ	,,
वर्धमानसूरि	३२
सोमेश्वर द्विज	,,
जिनेश्वरसूरि	,,
अभयदेवसूरि	,,
राजशेखरसूरि	प्रशस्ति

(५)

प्रकीर्ण

नागमत	४, २८
ज्ञानमत	,,
नागपूजन	,,
बौद्धदर्शन	१६
इच्छारूप(विद्या)	२१
परकायाप्रवेश	,,
रामचरित्र	२६
हटकेश्वर-लिङ्ग	२८
आकाशगामिनी	३१
चिर्पटिः (रससिद्धिः)	,,
धूम्रवेधविद्या	,,

(६)

ग्रंथमां मळता विलक्षण शब्द प्रयोगो

रुलन्	(प्र.३)-रोळातो
चिर्भट	(प्र.३)-चीभडुं
स्फिरयिष्यति	(प्र.६)-फरी जशे
फेरणीयं	,, फेरववुं
जबादि जलहराः	(प्र. १४)
बीटिका	,,
सूत्कटी	,,
०जातिटोला	,,-जातिना टोला.
०बोहनिका	,,
०विरदाः	,,
प्रवण्य	,,
प्रतलीकुर्वन्	,,पातलुं करतो.
पल्ययनिक	(प्र. १७) पलाण नार
वाहरा	वा'र-वहार-कुमक मदद
करचटितः	(प्र.२४)-हाथे चडेलो
ल्लिपल्लि	(प्र.२९)-लाड

नोंधः पौराणिक विशेषनामो ग्रंथमां घणां होवा छतां पसंद करेलांनी ज सूचि अहीं आपेल छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री स्तम्भनपार्श्वनाथ-द्वात्रिंशत्प्रबन्धोद्धारः ॥

-सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

नागेन्द्रगच्छीय श्रीमेरुतुंगसूरिकृत "स्तम्भनाधीश प्रबन्धाः"नी एकमात्र उपलब्ध प्रति-आधारित वाचना आ अंकमां आपी छे. आ प्रबन्धोनो संक्षेप करीने थयेल "उद्धार"नी बे प्रति प्राप्त थई छे, जे पाछळथी कोईक अज्ञात अभ्यासीए कर्यो होवानुं समजाय छे.

"उद्धार"नी प्राप्त बे प्रतिओमां प्रथम ६ पत्रोनी, प्रमाणमां घणी शुद्ध अने अनुमानतः पंदरमा शतकना अंतमां के सोळमा शतकना आरंभमां लखाएली जणाई छे. आ प्रतिनी झेरोक्स नकलमां भंडारनुं नाम उल्लिखित नथी, तेथी कया गामना कया भंडारनी छे, ते ख्याल नथी आव्यो. घणा भागे ते छाणीना के वडोदराना भंडारनी प्रति होवानो अंदाज छे.

बीजी प्रति, ८ पत्रोनी, अशुद्ध अने प्रथम प्रतिनी नकलस्वरूप जणाय छे. ते लींबडीना ज्ञानभंडारनी छे.

मूळ प्रबन्धो तथा तेनो आ संक्षेप - ए बन्नेने सरखावी जोवाथी इतिहास रसिकोने कांईक ने कांईक नवुं प्राप्त थशे तो आ प्रयत्न लेखे लागशे. मूळ प्रबन्धोमां क्यांक अंशो त्रूटक छे, ते प्रबन्धो, अलबत्त साव संक्षेपमां पण अहीं पूर्णांशे मळे छे, ते पण महत्त्वपूर्ण छे. जेम के प्रबन्ध ५ तथा १८माना प्रारंभ तेमज प्रबन्ध ८ तथा १३ना अंतभाग मूल प्रबन्धोमां त्रुटित छे, तो आ संक्षेपमां भले संक्षेपस्वरूपे ज, पण, ते अंशोनुं अनुसन्धान मळे छे.

बन्ने कृतिओ एक साथे होवाथी तुलनात्मक तथा भाषाकीय आदि दृष्टिए अभ्यास करवानुं सुगम बनशे तेवी आशा छे.

श्रीस्तम्भनपार्श्वनाथ-द्वात्रिंशत्प्रबन्धोद्धारः ॥

श्रीस्तम्भनपार्श्वस्य मूर्तिः । शक्रेण कारिता । दत्तनाम्ना जिनेन सौधर्मेन्द्राग्रे ३२ तत्प्रबन्धाः उक्तास्ते मेरुतुङ्गसूरिणा सङ्गृहीताः । शङ्खिनीमतात् । दूसमदण्डिकातः । भैरवीचरितात् । कल्परत्नसारात् । बिन्दुसारचूलात् । सोमप्राभृतकर्णिकात् । देवप्रभावपटलाच्च । श्रीसद्गुरुमुखात् । बहुश्रुतादेशाच्च ते चामी । श्रीभरतचक्रिण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकदा दिग्विजये प्रस्थितस्य कथंचित् श्रमापथ्याहारादिना शूलमुत्पन्नम् । इन्द्रागमः । तेन समाधिप्रश्ने युष्मत्प्रसादादिति भरतेनोक्ते तुष्टेनेन्द्रेण हिमाद्रिपद्मह्रदसहस्रपत्र-पद्मकर्णिकास्थ**जगदानंद**नामाख्यजिनबिम्बस्नात्रांभसा त्वं नीरुग्भावीत्युक्ते हरिणैग-मेषिणा तमानाय्य तीर्थजलसहस्रमूलादियुतेन तेन स्नपितं सविस्तरम् । शान्तिर्जाता । श्रीऋषभः शूलहेतुं पृष्टः प्राह । प्राक् बाहुभवे साधूनां दग्धान्नपानदानात् ॥ १ रोगः ॥

सगरपुत्रानीतगङ्गाम्बुना रेलिता भूरिति तद्रक्षणाय चलितो भगीरथश्चिन्तातुरः । खे दिव्या गीः ।"कल्ये माकन्दसरसि रुक्मिणीवटाधो देवकुले वासकं स्थेयं तत्र **विश्वेश्वराख्यो** देवस्ते वांछां पूरयिता" । तथा कृते स्वप्नः । दण्डरत्नेन क्ष्मां विदार्याब्धौ गङ्गां पातयेः । श्रीसगरेण श्रीअजितः ६० सहस्रपुत्राणां समकालमृतिहेतुं पृष्टः प्राग्भवानूचे ॥ २ जलम् ॥

विदर्भदेशे कुंडिनपुरे मान्धातृनृपः, मन्दोदरी राज्ञी, मदनदेवः पुत्रः । राज्ञा देवशर्मद्विजभार्या रूपिण्याख्या सुरूपत्वादपहृता । तद्दुःखेन सोऽग्निं साधयित्वा व्यन्तरः । प्राग्भववैरेण[1] पुरे सर्वं दग्धुं लग्नः । सर्वे आर्ताः । राज्ञा बाह्यालीं गतेन सीमन्धरः केवली पृष्टः । तद्धेतुमूचे । राज्ञा स्वदारसन्तोषव्रतं गृहीतम् । अग्न्युपद्रवशान्त्युपायश्चायम् । मलयाद्रौ चन्दनवने पम्पासरसि सप्तोपवास(सै)**जगज्ज्यो (ज्ज्यो)**तिर्नामबिम्बमाराध्यात्र पुरे निवेश्यं पूज्यं च । तन्महिम्ना स दुष्टदेवः क्षयं गमी । तदवसरे [2]व्याख्याश्रवणार्थागतविद्याधरैर्नृपस्तत्र नीतः । सर्वं तथा चक्रे शान्तिः ॥३ जलणः ॥

वाराणस्यां श्रीऋषभसन्ताने श्रीपार्श्वस्य पूर्वजो वैरसेननृपः । पुत्री जरकारी । तस्यां गर्भस्थायां माता सर्पदष्टा । मान्त्रिकैरहीन् सन्तोष्य निर्विषीकृता । सर्पैर्वरदानम् । नागकुलं ते गर्भस्थपुत्र्याः पितृगृहं, नागेन्द्राः बान्धवः(वाः) । सा जरत्कारऋषेर्दत्ता । अपराधेऽहं त्यक्षा(क्ष्या)मीत्युक्त्वा तेनोदूढा । अन्यदा सूर्यास्ते ऋषिं सुप्तं सन्ध्यावन्दनाय साऽजागरयत् । स निद्राभङ्गाद्रुष्टस्तां त्यक्त्वा वने गच्छि(च्छ)न् तया पृष्टः । मम आधारः कः ? तेनोक्तम् - तवाधाने पुत्रोऽस्ति । स ते पितृगृहानन्ददो भावी । सा तत् श्रुत्वा नागलोकः(कं) पितृगृहं गता । जातः पुत्रः आस्तीकाख्यः[3] । १६ वर्षो जातः वेदादिसर्वशास्त्रज्ञः । अत्रान्तरे पाण्डवसन्ताने अभिमन्युं(यु)पुत्रपरिक्षि

पाठां : १. प्राग्वैरेण । २. व्योम्ना श्रव० । ३. काक्षः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा रणभुवनपुरे नैमित्तिकेन सर्पान्मृति(तिं) श्रुत्वा एकस्तम्भधवलगृहस्थस्तक्षकेन बदरमध्ये भूत्वा प्रातर्नासाग्रे दष्टो मृतः । वलभीतो धन्वन्तरिर्वैद्यो वटपद्रसमीपे दन्तकरोटीग्रामे अन्धवटाधस्थे(धःस्थो) दृष्टः(ट)स्तक्षकेन द्विजरूपेण पश्चाद्गच्छता पृष्टः । कियतीति विषनिग्रहशक्तिः ? । स आह यावद् दृशा पश्यामीति । तक्षकेण वाक्छलेन स पृष्ठौ दष्टः उपचारं कुर्वन् वारितो मृतः । परिक्षिनृपपदे जनमेजयो न्यस्तः । रोषात्सर्पहोममण्डयदग्निशर्मद्विजपार्श्वात् राज्ञो दृष्टौ एकनागकुलं हुतम् । नागा भीताः । जरकारी रोदितुं लग्ना । पुत्रेण पृष्टे उक्तं मम पितृकुलं नागलोकं जनमेजयो जुहोति । त्वं च नागलोकरक्षाकरः पित्रोक्तोऽभूः । तत्श्रुत्वा आस्तीकस्तद्रक्षार्थं चलितः । तावता वातूलेनोत्पाद्य(ट्य) देन्दारुवने ऋष[1]शृङ्गाद्रौ सिन्दूरशिखरे मन्दारादिपुष्पार्चिताऽमृतेशबिम्बाग्रे मुक्तः । खे गीः वरं वृणु, तेन वाक्सिद्धिर्मार्गिता । दत्ता ।नम्रः स उत्पाट्य(ट्य) सपीहा(सर्पहो)मवेद्यां मुक्तः । वेदान् बाढं बाढं पठति । सर्वे द्विजा उत्कर्णो(र्णा) याज्ञिकमाहुरेष पूर्णमनोरथ(:) क्रियताम् । स पृष्टो मूलाहुतिं ययाचे । तावता मृतिभीत्या मूलाहुतिस्तक्षकः पलाय्येन्द्राग्रे वज्रपंजरिकायां सर्षपमात्रीभूय नष्टः । याज्ञिकेन ज्ञानेन ज्ञातम् । मंत्रं भणितुं लग्नः - ॐ तक्षकाय सेन्द्रायेति । मन्त्रान्तेऽष्टनागकुलवृतस्तक्षको भयद्रुतः खे आगतः । तावता पुनस्तेन मूलाहुतिर्मार्गिता नो चेच्छापेन वो भस्मीकुर्वे । तैर्भीतैः सर्वे तेऽहय आस्तीकहस्तेऽर्पिता(:) । तेन वन्दनादिना तोषितैस्तस्य वरो दत्तः । य इमां त्वन्नामाङ्कितां विद्यां स्मर्ता तस्य वर्षमस्माकमभीः । सा चेयम् ।

सर्पापसर्प भद्रं ते दूरं गच्छ महाविषः(ष) ।
जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मरः(र) ॥१॥
आस्तीकवचनं स्मृत्वा सर्पश्चेन्न निवर्तते ।
शतधा भिद्यते मूर्ध्नि शंसवृक्षफलं यथा ॥ २ ॥
आस्तीकेनोरगैः सार्धं पुरा यः समयः कृतः ।
यदि स समय सत्यो न मां हिंसन्तु पन्नगाः ॥
इति नागकुलाभयदः श्रीपार्श्वः : ॥ ४ विसहरः ॥

ऐरावते देशे धुन्धुमारनृपः । धवलादेवी । पुत्री कुन्तलाः(ला) वने पुष्पावचयेन क्रीडित्वा श्रान्ता स्नातुं वाप्यां प्रविष्टा । तावता दुष्टव्यन्तरेण तदाभरणानि

पाठां. १. ऋक्ष० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पालिस्थान्यपहृतानि । साऽपश्यंती पूच्चक्रे मुमूर्च्छ च । राज्ञा श्रुतं, बहूपक्रमेणा[१]ऽपि नाप्तं पदाद्यपि । पुत्र्या २१ उपवासाः कृताः । तावता खे विमानेन गच्छन् खेचरमिथुनं वार्तयत् श्रुतम् । वैताढ्ये रथनूपुरे मणिचूडाऽर्च्यमान**जगत्पालना**-ख्यबिम्बाऽऽगमेऽस्याः कार्यं सिध्यति । अत्रान्तरे तस्या मातुलः स मणिचूडो मिलनाय तत्रागतो नृपोपरोधात् तद्बिम्बं तत्रानीय चैत्येऽमुचत् तदा आरात्रिकसमये तुष्टतदधिष्ठायकैः स व्यन्तरः शिरःस्थाभरणग्रन्थिर्बद्ध्वा भृशमारटंस्तत्रानीतः । प्रतिबोधितश्च ॥ ५ चौरः ॥

वङ्गदेशे तामलिप्त्यां पुष्पशेखरनृपः । पुष्पवती राज्ञी । सोऽलसत्त्वान्मन्त्रिभिः कर्षितो वने रुलन् काष्टविक्रयेण जीवन् शमीमूलखनने विवरं दृष्ट्वा भूम्यां प्रविष्टो दूरं गतो भोगिपुरे गङ्गापुष्कराख्यतटाके देवगृहे **पुराणपुरुषा**ख्यबिम्बं दृष्टवाऽऽनर्च । राज्यभ्रंशदूनस्य तस्योपवासत्रयान्ते देवैरजरामराख्यं पारिजातपुष्पं दत्तम् । यस्ते नमति न तस्येदं संमुखं क्षेप्यं शिरः पतिष्यतीत्युक्त्वा । तदा देवदत्तं देवप्रसादाख्यमश्वमारुह्य एकेन तर्जनेन स्वपुरे[२] आगत्य सिंहासने निविष्टः । दुष्टान्प्रति पुष्पं मुक्तं शिरांसि दुलितानि प्रणताः सन्तः सज्जीभूताः राज्ञा मुक्ताः । स नृपो जिनधर्मी मृत्वा स्वर्ययौ ॥ ६ अरिः ॥

अन्तर्वेदौ काश्यां त्रिशङ्कुनृपोऽन्यदा निशि वीरचर्यया भ्रमन् शूलिकाप्रोतमृत-चौरयोस्तुम्बीद्वयं जीर्णं मिथो वददश्रृणोत् । एका हसत्येका रोदिति । आद्या हास्यहेतुं पृष्टाऽऽह । अस्मद्वधको राजा तृतीयेऽह्नि दुष्टदेवैर्मारयिष्यते । द्वितीया रोदनहेतुमाह । एतस्य जीवनोपायोऽस्ति । मैष तं ज्ञासीत् । अन्यया क उपाय इति पृष्टे साऽऽह- अमुकस्मशाने सप्तमातृदेवकुलाग्रे महापीठं, तदुपरि पूर्वदिशि पादुकायुगम् तदधस्ताम्रपत्रे खगामिनी विद्याऽस्ति । तद्बलान्मेरौ गत्वा जम्बूवृक्षमूलेन जम्बूदेवेनाऽर्च्यमानं **संसारबोधा**ख्यबिम्बं यद्यत्राऽऽनीयार्चति तदा तद्देवैस्ते दुष्टव्यन्तरा दण्डैस्ताडिताः पलायन्ते । तत्श्रुत्वा राज्ञा सर्वं तथैव कृतम् । प्रातर्देवानां युद्धं लोकाः पश्यन्ति । दुष्टदेवा जिता उचुः । अद्यनवा अपि ग्रहा एकराशिस्था-स्त्रिशङ्कुममारयिष्यन् यद्येनमुपायं नाऽकरिष्यत् । राजा धर्मी चिरं राज्यं स्वः ॥ ७ ग्रहाः ॥

कलिङ्गे काञ्चनपुरे पद्मनाभनृपः पद्मावती देवी । अन्यदा वने केवली

पाठा. १. क्रमेण नाप्तं । २. पुर्यागत्य ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वंदित्वा गमनहेतुं पृष्टः प्राह । हस्तिभुवि नर्मदातटे विन्ध्याद्रिगह्वरे कुञ्जरवटो १२ योजनमानस्तत्र **भुवनत्रयतारणा**ख्यबिम्बम् । तत्तीर्थभूस्पर्शनार्थमागमामः । अन्यदा नृपो वन्येभैः क्रीडन् हस्ती(स्ति) करे पतितः । तत्र नानागजोत्पत्तिवर्णना । तावताऽकालाब्दजलसिक्तभूगंधोन्मत्तगजकुलेनाक्रान्तो भयद्रुतस्तद्गुरुवचः स्मृत्वा कुञ्जरवटेऽधिरुह्य स्वामिन् ! मां रक्ष रक्षेति पूच्चक्रे। तावता हुङ्कारत्रयं निर्गतम् । तेन ते गजा ग्लानीभूतांगाः सर्वे नेशुः । नृपो वटादुत्तीर्य जिनं ननाम । तदा देव एकः कृताञ्जालिर्जिनं स्तुवन्नृपमाह । वरं वृणु । राज्ञा तत्र तत्पार्श्वात् पुरं निवेशितं, वटपरिसरे तत्र प्रासादे तं जिनमानर्च । मृत्वा १२ स्वर्गे अगात् ॥ ८ गजः ॥

कोसलायां साकेते जनवल्लभः कुटुम्बी क्षेत्रं कर्षन् जैनमुनिपार्श्वे प्राप्तसम्यक्त्वः **सहजासिद्धा**ख्यं बिम्बं पूज्यमिति मुनिनादिष्टः । अन्यदाऽपुत्रे नृपे मृते स पञ्चदिव्यैः पट्टे न्यस्तः । कोऽप्याज्ञां न मन्यते । सीमालेर्वेष्टिता पूः । नृपो व्याकुलः खे गच्छन्तं विद्यासागराख्यं चारणर्षिं पप्रच्छ । स आह **सहजसिद्धेश्वरं** शरणं भज । राजा तद्ध्यानं चक्रे । तावता साधनकूपात्वातोलीधूमज्वालादिक्रमेण सुरकोटिसेव्यमानं **सहजसिद्धेश्वर**बिम्बमाविर्भूतं राज्ञाऽर्चितं महामहैः । ततो वैरिसैन्यं सत्यपुरि(री)यश्रीवीररीत्या हतप्रहतं पलायितुं लग्नम् । अन्धा इव जाताः किमपि न पश्यन्ति । ततस्तमेव देवं शरणं श्रिता नानोपदामिः । स नृपो देवादेशान्-मार्तण्डाख्योऽभूत् ॥ ९ रणभयं ॥

सौवीरे वीतभयपुरे वीरसेननृपः । इन्दुमती देवी । श्रीनिवासाख्यो दरिद्रः श्रेष्ठी घृतकुतपिकां वहन् मार्गे सायं देवकृतप्रासादे **लक्ष्मीकान्ता**ख्यं बिम्बं दृष्ट्वा नत्वा स्वाज्येन दीपं कृत्वा पद्या तद्वर्तिं च कृत्वोपवासत्रयेणाऽऽराधयत् । तुष्टेन्द्रेण सोऽब्धितीरे मुक्तः । तत्र श्रमात्सुप्तं तं प्रथमकल्लोले श्रीरालिङ्गत् । द्वितीयकल्लोले गजा(ः) । तृतीये अक्षयकोशः । तत उत्पाट्य स्वपुरे नीतस्तत्र राज्ञा राज्यं तस्य दत्तं स्वयं दीक्षा । तेन नव्यचैत्यं कृत्वा तत्र स जिनो यावज्जीवमार्चि अन्ते दीक्षया स्वः ॥१० श्रीः ॥

मगधे राजगृहे नरकान्तनृपो रोगैरकिञ्चित्करः । अन्यदा गङ्गायां सायं स्नाने जलमानुषमिथुनं मिथो वार्तयद् अश्रृणोत् । नर आह - प्रिये ! अस्य पुरस्येशो रोगार्तोऽरिभिर्मारियिष्यते । ततः तया कथं चेत्सीति पृष्टे प्राह । नन्दीश्वरेऽष्टाहिकां कृत्वा वलमानसुरगणैर्जलकेलिं कुर्वद्भिरिदमूचे । पुनः साऽऽह - कोऽपि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयविधिस्तैरुक्त: ? । स प्राह ओं ! परं मध्यरात्रे वक्ष्ये, अधुना जना(नाः) शृण्वन्ति । तावद्राजा सरःपालौ वटगह्वरे स्थितो निशीथे तदुक्तिं सु(शु)श्राव । अस्य वटस्याधः पुरुषत्रयं खनने मणिरस्ति । तस्मिन्करेबद्धे खगमनशक्तिः स्यात् । तद्बलेन चंदनाचले कंकोलवनेऽग्निशृङ्गशिखरे सिन्दूरकुण्डान्तः सिद्धैरर्च्यमानं जिनबिम्बं यदि गत्वा स्वपुरे नयति तदा नीरुग् जीवति । नृपस्तत्र गत्वा तल्लात्वा यावदेति तावत्पुरं सीमालैर्वेष्टितं पश्यति । बिम्बमुत्पाट्य स्वगृहे सिंहासने न्यस्य यावदर्चितं तावत्सीमाला भयद्रुता नष्टाः । राज्ञः पट्टाभिषेकः । श्राद्धो राज्यं स्वः क्रमात्सेत्स्यति ॥११ जयवादः ॥

नक्तपालदेशे श्रीपुरे भीमसेननृपो गुरुं पप्रच्छ । अहं शत्रुञ्जये यात्रेच्छुरंतरा च भीः, किं कुर्वे ? गुरुराह **श्रीक्षेमङ्कराख्य**बिम्बं मानुषोत्तराद्रौ रत्नप्रस्थे त्रिभुवनस्वामिन्याऽर्च्यमानमस्ति । शासनदेवीमाराध्य तत्र गत्वा तस्यार्हतः प्रसादात् श्रीशत्रुञ्जययात्रामनोरथं पूरयेः तेन साराद्धा । **क्षेमङ्कराख्य**बिम्बमर्चितम् । लब्धो वरः । देवसान्निध्याज्जङ्गमवप्रेण गत्वा श्रीशत्रुञ्जययात्रा कृता । न केनाऽप्यध्वनि पराभूतः । राज्यान्तेऽन्तःकृत्केवली भूत्वा सिद्धः ॥ १२ मनोरथः ॥

नर्मदापाददेशे नंदपुर्यां चन्द्रशेखरनृपश्चन्द्रकान्तिदेवी । पापर्द्धिहतसिंहजीव-व्यन्तरेण तस्य २१ पूर्वजा हताः । सोऽपि पापर्द्धिसक्तोऽन्यदा वने क्रीडन् विन्ध्याद्रिगह्वरे तोरणमालाख्यटूंके आम्रारामे उदुम्बरसरस्यखाते नर्मदाम्बुपूर्णे साज-णगाजणाख्यमुदुम्बरवृक्षद्वयं एकतो मुनिं च दृष्टवाऽपृच्छत् । के यूयम् ? किमित्यत्र ? स प्राह- कर्णाटेशविकटोत्कटनृपसूर्घटोत्कटोऽहं **शबरनाथा**ख्यबिम्बं नन्तुमत्रागाम् । ततः क्वास्तीति पृष्टे मुनिराह - अस्योदुम्बरस्य मध्ये । कुत इत्युक्ते मूलसम्बन्धमाह [1]मुनिः । पुरा शबररूपिणा शिवेनात्र वृक्षमूले शूकरस्य शरो मुक्तो न लग्नः । स विस्मितः । शान्तोऽचिन्तयत् । नूनं क्वापि अर्हत्प्रतिमाऽस्तीति । तावत्प्रादुरासीत् सा । वन्दिता तेन हृष्टेन सता । शबररूपेश्वरेण स्थापित[2]त्वात् **शबरनाथ** इति नाम तद्बिम्बं अस्योदुम्बरस्य मध्ये बीडितमस्ति तेन गच्छता । तावत् नृपो भक्त्या आह-देव ! यदि भक्तोऽहं देहि मे दर्शनम् । प्रकटीभूत देवः तेन हृष्टेन तद्वाण्या पापर्द्धिस्त्यक्ता । श्राद्धः । क्रमान्मुनिर्भूत्वा सिंहजीवव्यन्तरं प्राबोधयत् । मृत्वा सर्वार्थसिद्धिं ययौ ॥१३ पापर्द्धिः ॥

पाठां. १. ऋषिः । २. स्थापितवान् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिलङ्गे हंसपुरे नरवर्मनृपः । नरविभ्रमा राज्ञी । अन्यदा राजपाट्यां गतः क्वचितृषया जलपानाद् ग्रहिलोऽभूत् । बहुधाऽप्यसाध्यः । वैकल्येन भ्रमन् गङ्गातटे चिञ्चाशमीवृक्षयोरंतरे निविष्टोऽहिभेकयोर्युगपन्निर्गतयोः संलापं शृणोति । भेकः प्राह-जना ! हत हत एनं पापिनमहिं, तावदहिराह भो ! भो ! कोप्यास्तेऽत्र यो भेकमिमं हत्वा अस्य निधिं गृह्णाति । एवं क्षणं राटिं कृत्वा तावददृश्यौ । ततो राक्षसमिथुनं तदपि क्षणं युद्ध्वाऽदृश्यम् । ततः खेचरदम्पती खे आहतुः प्रिये गङ्गावेलास्नप्यमानचिञ्चावृक्षमूलाऽधः **पुरुषोत्तमा**ख्यबिम्बं नत्वा तज्जलं यद्ययं पिबेत्तदाऽस्य वैकल्यं याति । ततो राज्ञा जनैः खानितम् । क्रमेण भूमिगृहस्थं सुरपुष्पार्चितं तद्बिम्बं प्रादुरासीत्तत्स्नात्रजलेन स सज्जश्चिरं राज्यम् । सौधर्मे स्वः ॥१४ वैकल्यम् ॥

गौडदेशे कोल्लापुरे नारायणनृपः नरदेवा राज्ञी । तस्यैकेन नास्तिकेन भूताकर्षणविद्या दत्ता । नृपः श्मशाने तां साधयितुं लग्नः । तावता विद्या प्रादुर्भूता । स तां दिव्यरूपां दृष्ट्वा व्यामूढः । विद्या कुपिता । स वैकल्येन भ्रमन् उज्जयिन्यां गजेन्द्रपदश्मशाने सिप्रातीरे सिद्धवटच्छायायां रामसागरमुनिं दृष्ट्वा ननाम । निशि मुनेः केवलज्ञानमुत्पन्नम् । तन्महोत्सवागतदेवैर्मुनिस्तत्स्वरूपं पृष्टः । प्राग्भवे जिनसेवकोऽयम् । ततो मण्डपदुर्गे **निरञ्जना**ख्यं बिम्बमानर्च । तदग्रे निराहारः षण्मासीं स्थितः । ततो लब्धे वरे संज्ञा जाता । बिम्बं स्वराज्ये नीतम् । नृपस्य पट्टाभिषेकः । औषधीकल्पवल्लीचिन्तामणिदिव्यास्त्राणि देवा ददुः । त्रिखण्डे [य]शो राज्यमन्ते स्वः ॥१५ व्यामोहः ॥

पाञ्चाले काम्पील्यपुरे ब्रह्मबन्धुर्नृपः । तारा देवी । क्षायिकसम्यक्त्वती । नगरनिर्द्धमनद्वारे दयासागरर्षिः कायोत्सर्गेण स्थितः । तत्प्लावनभिया पुरदेव्या पुरे वृष्टिर्निषिद्धा । मूढलोकैर्नैमित्तिकात् तत् ज्ञात्वा रुष्टैः सम्भूय स मुनिरेकलोष्टवधः कृतः । राज्ञाऽपि न निषिद्धम् । एका राज्ञी पश्चात्तापं गताः । सम्यग्दृग्देवैर्वृष्ट्या तत्पुरं प्लावितम् । राज्ञी गृहाग्रवटे चटिता । शीलसम्यक्त्वप्रभावादुद्धरिता । तदनु काबेरीनर्मदाकपिलाख्य-नदीत्रयसङ्गमान्तरे स सिद्धवटः ख्यातः । ततो देव्या स्वस्थापिततारापुरे ताराविहारे स्वप्नादेशा**दादिरूपा**ख्यजिनबिम्बमिदं स्थापितम् । तद्वटाधः स्खलनलब्धचिन्तामणिना द्रव्यव्ययश्चक्रे । प्रभावना च । क्रमात् सा तारादेवी तच्चैत्याधिष्ठायिका जाता । क्रमान्मुक्तिं प्राप सा[1] स्वस्थापिततारापुरे

पाठां. १. सा अद्ययावद् बौद्धेषु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यावद्बौद्धेषु प्रसिद्धा । १६ उपसर्गः ।

हस्तिपुरे हरिचन्द्रनृपः स्वप्ने देवेनोक्तः । प्रातर्बाह्याल्यां यस्ते मिलति तेन सह मैत्री कार्या । राजा बाह्याल्यां गतस्तृषार्त्तमेकं सत्पुरुषं भूपतितं तत्पार्श्वस्थसपर्याणाश्वं दृष्ट्वा तं सज्जीकृत्य मित्रं चक्रे । तावत्सैन्यागमे बंदिमुखाद्विराटदेशाधिपः प्रद्युम्ननृपः स ज्ञातः । प्रीत्या कियद्दिनीं तत्र स्थित्वा चलन् स आह हे हरिचन्द्र ! तवाहमनृणः कथं स्याम् ? परं झाडमण्डलदेशे रत्नपुरपार्श्वे गन्धमादनाद्रौ गजदन्तकुण्डसमीपे प्रासादे **सर्वार्थसिद्धि**नामजिनबिम्बं वन्दापयामि यद्येष्यसि । राजा राज्यं मन्त्रिषु न्यस्य तेनैव सहाऽचलत् । गतस्तत्र प्रत्यहं लक्षद्रव्यव्ययेन पूजां कुर्वन् षण्मासीं स्वराज्य इव स्थितः । देवैस्तुष्टैर्वरं वृण्वित्युक्ते स्वामिन् ! सम्यक्त्वं मच्चित्तान्मागादित्येवं वरममार्गयत् । पश्चादागतो राज्यं स्वं प्रपाल्य स्वः ॥ १७ सम्यक्त्वम् ॥

हरिवर्षदेशेऽमरावत्यां जीमूतवाहननृपस्तडागखननलब्धपत्रानुसारेण रत्नकोशं लेभे । एवं वर्षं यावत्प्रत्यहम् । अन्यदा गोविन्दाख्यश्चारणर्षिः खानिस्थानं प्रदक्षिणयन् दृष्टः । निर्ग्रन्थानां सधनभूम्युपरि रागः किमेवमिति पृष्टश्चाह । राजन्नत्र भूमध्ये **स्वयंभू**नामा देवोऽस्ति । महातीर्थमिदं तेन प्रदक्षिणयामि । नृपेण देवः प्रकटीकृत्यार्चितः । अन्यदा मन्त्रिपुत्रो बुद्धिधनाख्योऽमारिरुजाऽचेतनो जातः । उपयाचिते देवस्य दत्ते नीरुक् । किमीदृशं दुष्कर्म तेन प्राक्कृतमिति चिन्तातुरे नृपे खे गीः । अयं मन्त्रिपुत्रः प्राग्भवे हालिकोऽभूत् । तदा दंडाग्रेण एकमलसकं ज्ञात्वा क्रीडया हतम् । तत्कर्मणाऽस्य रोगोऽयम् । तत् श्रुत्वा नृपेण हिंसानियमो गृहीतः प्राणैरपि अभयदानं देयमिति च । ततो नागजीवकृते स्वप्राणा दत्ता जीमूतवाहनेन इति लोकेऽपि श्रूयते ॥१८ अमारिरुग् ॥

सन्दर्भदेशे नन्दिपुरे हरिदेवद्विजेनाऽश्वमेघः कृतः । सोऽश्वो मृत्वा गौः । द्विजो मृत्वाऽन्त्यजः । तेन सा गौर्हता । तन्मांसादनात् सोऽपि मृतः । शुभलेश्यावशाद्बीजउरदेशे महेत्पुरे कृष्णमहेन्द्राख्यो नृपोऽभूत् । गोजीवो मन्त्री शतजीवनामा । मिथो द्वेषः । अन्यदा कस्मिंश्चिच्छले राज्ञा मन्त्री शूलायां दत्तः । पुरे चोद्घुष्टं अन्योऽप्यन्यायी एवं फलं लब्धा । स मन्त्रिजीवो व्यन्तरो द्विष्टः । पुरलोकान् खादितुं लग्नः । मान्त्रिकैर्बलेन वाचा बद्धः । प्रत्यहमेकैकमेवाऽत्ति । अन्यदाऽवधिज्ञानी सर्वेश्वरमुनिस्तद्धेतु : पृष्टः प्राह प्राग्भवम् । प्रबुद्धो नृपो व्यन्तरश्च ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेन पूर्जनानां मिथ्यादुःकृतं दत्तम् । अत्रान्तरे मुनेः केवलमुत्पेदे । भूतानन्दाख्यव्यन्तरेण कथं मे निष्पापता भाविनीति सपश्चात्तापं पृष्टे मुनिराह । **सर्वपापापहारा**ख्यं जिनबिम्बं दुष्टसुरैर्गृहीतम् । महाकुरलदेशे मानससरोऽन्ते कालकूटाद्रौ मदनोन्मादनकुण्डतीरेऽशोकवृक्षाऽधोऽस्ति । तद्बिम्बं बलेनानीयाऽर्चय । ततोऽनेकदेवकोटिवृतः स तत्र ययौ । अत्रान्तरे बाहुबलिनाम्ना देवेन तद्बिम्बमाक्रान्तमस्ति । स च परस्त्रीलम्पटो देवस्य तादृग् भक्तिं न करोति । तं युद्धे जित्वा तद्बिम्बं समहं स्वस्थाने निनाय । औत्सुक्याद्देवपादुके तत्रैव विस्मृतेऽद्यापि सर्वपापापहारपादुकायुगं तत्र देशेऽस्ति दिव्यादिकार्ये प्रसिद्धम् । नृपव्यन्तरौ श्राद्धौ सुगतिं जग्मतुः ॥१९ पापम् ॥

अवन्त्यां त्रिविक्रमनृपसूः शार्दूलाख्यो महाव्यसनी । वर्णनम् । राज्ञा कर्षितो देशान्तरे भ्रमन् मलयाद्रौ हंससरसि जलं पीत्वा विश्रान्तः । तावन्मृगीद्वयं कुतोऽप्यागत्य तेन सह क्रीडितुं लग्नम् । स प्राह – यद्येवं रमणीद्वयं क्रीडति तदा भव्यम् । तावत्तद्गतम् । अग्रे भुवि विवरं दृष्ट्वा वर्णना । [१]भूमध्ये तत्र तरुणीद्वयं मृगीवत् क्रीडति । आह च भो व्यसनिन् यत्त्वया प्रार्थितं तल्लब्धम् । चिरं क्रीडया कदर्थितो मुक्तः । अग्रेऽजगरेण गिल्यमानो नंष्ट्वा वृक्षमारूढः । चिरादुत्तीर्णोऽग्रे हस्तिना रुद्धः । हस्त्यपि सिंहभयाद्गतः । सिंहोऽपि यावत्तं खादति तावत् स आह– भो मातुल ! मा मां खाद । तेन मुक्तः । उक्तश्च । एतद्गिरिशृङ्गे गच्छ । स गतो यावत्तत्र न किञ्चित्पश्यति तावन्मन्युना उल्लंबितुं लग्नः । केनचिन्मुनिना निषिद्धः । प्राह–किमिति निषेध यसि ? जीवतो मे किं कोऽपि राज्यं दाता ? मुनिराह– ओम् । कस्तर्हीत्युक्ते मुनिराह काञ्चनतोरणे चैत्ये **देवाधिदेवा**ख्यबिम्बं ते राज्यं दास्यति । याहि पथाऽनेन । स तत्र गत्वा जिनं ननाम । ३२ उपवासैर्लब्धवरः उत्पाट्यावन्त्यां त्रिविक्रमनृपे स्वर्गते पट्टाभिषिक्तः । देवैर्नरशार्दूलनाम दत्तम् । तद्बिम्बं तत्रानीयानर्च । राजा मृत्वा माहेन्द्रे सुरोऽभूत् ॥२० राज्यम् ॥

काश्मीरे उत्पलपट्टपुरे नरवाहननृपवनमालासूः मेघरथो दौर्भाग्यी । शतवारं मेलितोऽपि विवाहं न मिलति । स उद्वेगान्मृत्यै महारण्ये भीमभीषणाख्याद्रिमारूढो यावज्झम्पांदत्ते तावद् देवेन निषिद्धः । स शब्दानुसारादागत्यं दैवतं प्राह–किं निषिद्धोऽहं मृतेः ? दास्यसि किं मदिष्टम् ? । स आह – एतत् गिरिशृङ्गचैत्यस्थः **प्रभावसागरा**ख्यदेवो दास्यति । तत्र गत्वा तं सिषेवे । लब्धपरकायप्रवेशविद्यः

पाठां. १. अत्र मध्ये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्ताह तत्र स्थितः । तावता गौडदेशे चतुरपुराद्गंगाधरनृपो विश्वविभ्रमाख्यां महाराष्ट्रदेशेशतैलपदेवपुत्रीं परिणेतुं चलितः । तद्गिरेरध आगतस्तावन्मृतः । मेघरथस्तत्तनुं प्रविश्य स्वतनुं जिनाग्रे देवानां भलापयित्वा कन्यां परिणीय चतुरपुरे गतः । तद्राज्यं स्वं चक्रे । पुनः **प्रभावसागर**देवं नत्वा मेघरथदेहं प्रविश्य गङ्गाधरतनुं तत्र मुक्त्वा स्वपुरं गतस्तत्र पित्रा राज्यं दत्तम् । ३२ कन्याश्च नृपैर्दत्ताः । पृथ्वीं जिनमण्डिताञ्चक्रे ॥२१ परकायप्रवेशः ॥

सौराष्ट्रे उषामण्डले सुमित्रनृपसुमित्रासूर्मञ्जुघोषो महादुष्टस्तेन लोक उद्वेजितो राज्ञे व्यजिज्ञपत् । तेन स आकार्य निर्विषयीकृतो गतोऽरण्ये तृषार्त्तो हंसमिथुनेन स्वस्थीकृतः । बृहत्त्वात् तत्पक्षलग्नो भ्रमति । अन्यदाऽध्वनि गच्छन् हंसः पृष्टः । कुत्र याथ । स आह । यत्प्रभावाद्वयं नृभाषां वच्मः तं देवं नन्तुं नीलगिरौ नीलवने कुमारसरसि स्थितम् तत्र गत्वा जिनमानर्चुः(र्च) । हंसः [१]सर्वमपूरयत् । हंसौ तत्र स्थितौ । स च ६४ उपवासैर्वरं लेभे - राज्यं लभस्व इति । हंसी(स)बलेन गतः स्वं पुरम् । पित्रा पट्टेऽभिषिक्तः । हंसमिथुनं तत्रैव स्थापितम् । प्रत्यहं हंसमारुह्य तं जिनं नन्तुं खे गच्छन् हंससेन इति ख्यातः । क्रमात्तद्द्वयं मृत्वा तस्य पुत्रौ जातौ । नृपोवर्षशतमेवं राज्यं कृत्वा क्रमाज्ज्येष्ठपुत्रे तन्न्यस्य स्वः ॥२२॥ खगमनम् ॥

जालन्धरदेशे चन्द्रवटपुरे मेघनादनृपः । रुक्मिणी देवी । तस्य मार्यमाण-चौरेणार्पितं विद्याद्वयं सिद्धमस्ति । अन्यदा नद्यां क्रीडतः स्त्रीशबमागतम् । सा निर्विषीकृत्य परिणीता । तया सह गत्वा नरसुन्दरनृपस्तत्पिता तेन वेष्टितः । रणे बद्धस्तेन राज्यं दत्तं स्वयं संयमं प्रपाल्य मोक्षे । अन्यदा मेघनादोऽश्वकर्षितोऽरण्यानीं भ्रमन् तापसैर्दर्शितं सितकूपाद्रौ वज्रशृङ्गे दुग्धोदधिसरसि बदरि(री)वने पिचुपिताह्व-कुण्डपार्श्वे **कृपाभंडारा**ख्यदेवं वन्दे ३० उपवासैर्लब्धवरो विमानेन खगामीति जातः । गतः स्वं पुरम् । प्रत्यहं विमानेन जिनं नन्तुमेति । एवं वर्षलक्षम् । मृत्वा माहेन्द्रः ॥ २३ विमानम् ॥

हीमउरदेशे हीरपुरे हरिदत्तनृपः । हरिप्रिया देवी । अन्यदा निशि वने बालां रुदतीं श्रुत्वा खड्गसखस्तत्र गतः । सा पृष्टाऽऽह । अहं कोकंणदेशेशकुमारेश्वरपुत्री सौभाग्यमञ्जरी नाम । गौडदेशेशगदाधरेण बलादुद्वोढुमत्रानीता । अद्य स सिद्धविद्यः सायं मां परिणेष्यति । अहं च प्राग् हरिदत्तानुरक्ताऽभूवम् । ततः स विद्यां

पाठां. १. सर्वमयूरवत् ।

साधयँस्तेन रणे जितः । सा तत्समक्षमुदूढा । तौ दम्पती गतौ स्वगृहम् । अन्यदा नृपश्चन्द्रशालातः खेचर्याऽपहृत्य वैताढ्ये नागपुरे नीतस्तत्र विद्युन्मालिना विद्याः प्रदाय जामाता कृतः । नैमित्तिकवचसाऽन्यदा स दक्षिणश्रेण्यां गगनपुरेशगगनचूडं जेतुं प्रहितस्तं जित्वा तत्पुत्रीं परिणीय करमोचने प्रज्ञप्तीं प्राप्य पश्चादागतः । ततः स्त्रीद्वययुतो विमानेन स्वं पुरं गतः । अन्यदा तस्य राज्ये जलशोषोऽग्निनाशश्चाऽभूतां, कल्पान्त इव संवृतः । ततः कुलदेवीगिरा कुरुक्षेत्रे चित्रकूटाद्रौ मरकतशृङ्गे कमलासरसि नागराजकुण्डे स्थितं **परमेश्वरा**ख्यं बिम्बमानीय तत्स्नात्राम्बुना सर्वं स्वस्थीचक्रे । इत्थं वर्षलक्षं स जिनमर्चयित्वा मृतः स्वः ॥ २४ उत्पातशान्तिः ॥

हस्तिनागपुरे जितशत्रुनृपः । जयकान्तादेवी । पुरमुख्यः कार्तिकश्रेष्ठी । तन्मित्रं गङ्गदत्तः । श्रीसुव्रतजिनश्राद्धौ तौ वैराग्यधरौ । अन्यदा सुव्रतेशपार्श्वे गङ्गदत्तेन दीक्षाऽऽत्ता । कार्तिकस्तु तेन, "श्रेष्ठिन् ! बंधे गिहवासे मुक्खे परियाए" इत्यादिना बहुबोधितोऽपि चारित्रमोहनीयोदयात् न सार्धं दीक्षां ललौ । अन्यदा कोष्टिकभिक्षुर्गैरिकाख्यस्तत्रागतो राज्ञा पारणाय निमन्त्रितः । श्रेष्ठिना नृपवचसा परिवेषितमित्यादि प्रसिद्धम् । तद्वैराग्यात् १००८ श्रेष्ठियुतः स दीक्षां लात्वा १२ वर्षे द्वादशाङ्गपाठी मृत्वा सौधर्मेन्द्रः । तपस्वी तद्वाहनमैरावणः । स मन्युतप्तः शक्रेण प्राग्भवकथनात्सुस्थीकृतः । शक्रेण प्राग्भवे सुखगर्भाख्यदेवालये संस्थाप्य **परमेष्ठिनामे**दं बिम्बं त्रिकालमर्चता शतं श्राद्धप्रतिमाः कृताः आसन् । तत्स्मृत्वा तदा नागपुरस्थं तत् **परमेष्ठि**बिम्बमुत्पाट्य स्वसभायां मुक्त्वा देवैः संभूया-**ऽकारणवत्सल** इति कृतनामानं तं ११ लक्षवर्षाणि शक्रः पूजयामास ॥ २५ इन्द्रः ॥

श्रीरामे दण्डकारण्ये गते सीताया जिनपूजाहर्षपूर्त्यै मातलिसारथिसनाथे रथे प्रस्थापितस्तत्र तया ७ मासान् ९ दिनांश्चार्चितः । अन्यदाऽपहरणे भाविनि सीतायाऽचिन्ति । पुष्पाद्यभावादत्र स्वामिनः पूजने प्रत्युताऽऽशातना । ततः स्वामी स्वर्गे प्रेषितः । ततः सीताऽपहारोऽजनि इत्यादि रामचरितं प्रसिद्धम् ॥ २६ श्रीरामः ॥

जरासंधभिया यादवा द्वारिकायां गत्वाऽस्थुः । अन्यदाऽरण्येजरासन्धेन कृष्णसैन्यं जरयोपद्रुतम् । श्रीनेमिर्हरिणा विज्ञप्तः प्राह । ३ उपवासैः शक्रमाराध्य तद्बिम्बं याचस्व । तत्स्नात्राम्बुना सर्वो नीरुग् भावी । हरिणा तथाकृते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिभुवनतिलकाख्यं तद्बिम्बं रथस्थं मातलिना शक्रः प्रापयत् । सर्वं सुस्थीभूतम् । बिम्बं चानीय झंझूमित्रस्य पाटके मुक्तम् । ततस्तद्ग्रामस्य झंझूवाडानामा महातीर्थं जातम् । रणे निवृत्ते पुनस्तद्बिम्बं हरिणा द्वारिकायां नीतं ७०० वर्षाणि पूजितम् । मूलासनं तत्रैव स्थितम् । तदनु यात्रिकाणामभिग्रहा मूलासने एव पूर्यन्ते । तत्रापि मनीषितािप्तः । तत्रापि कृष्णः पुनः पुनः यात्रार्थमेति । तेन तस्या**दित्यावतारः** **मूलथाण**मिति च नाम्नी । कृष्णेन तत्र मज्जनार्थं झीलानंदकुण्डं कारितं साधिष्ठायकम् । तदम्बु सर्वेषां गात्रे गलसमं जायते । एवं झंझूवाडा-मूलथाण-झीलानंदेति तीर्थत्रयं कालेन मिथ्यात्वगतम् ॥२७ श्रीकृष्णः ॥

द्वारिकायां दग्धायां जिनं निरुपद्रवं दृष्ट्वा विस्मितो वरुणः पश्चिमदिग्पालः स्वस्थाने नीत्वाऽऽनर्च **हट्टकेश्वर**नाम । तत्र तक्षकेण ८० सहस्रवर्षाणि, पद्मावत्या ७० वर्षसहस्राणि, लवणसमुद्रेशसुस्थितदेवेन ६० वर्षसहस्राणि चर्चितः स्वस्वस्थाने नीत्वा एवं सर्वेषां पातालवासिनां देवतावसर इव जज्ञे ॥ २८ वरुणादयः ॥

श्रीपार्श्वकुमारेण कमठपञ्चाग्निकाष्ठादहिर्जीवन् कर्षितो नमस्कारे दत्ते धरणेन्द्रो जातस्तेन **पार्श्वनाथ**-इतिनाम्ना पाताले तद्बिम्बमर्चितम् । यदा कमठेन प्राग्-वैराद्दीक्षास्थो जिन उपद्रोतुमारेभे तदाऽवधिना प्राप्तधरणेन्द्रेण पार्श्वनाम्ना तुष्टेन सान्निध्यं कृतं कमठोऽपि प्रबुद्धः । संघस्य प्रत्ययानपूरयत् ॥ २९ कमठः ॥

कान्त्यां धनेश्वरश्रेष्ठी सागरदत्तापराख्यः । ५०० वहनान्यापूर्याऽब्धियात्रां कृत्वा वलमानः समुद्रमध्यं गतः तावद्विषमवातोल्लालितानि वहनानि गिरिद्वयान्तरावर्ते पतितानि । षण्मास्यां खे गीः । **अप्रतिमल्ला**ख्यं श्रीपार्श्वबिम्बं इतः स्थानात्कान्त्यां नय यथा तवेष्टाप्तिः स्यात् । श्रेष्ठ्याह - स्वामिन् क्व तत्स्थानं न वेद्मि । तावता समुद्रजलोपरि यक्षकर्दमपुटी निर्गता । खे गीः -श्व एनां स्वहस्तेनाब्धौ मुञ्च । यत्रेयं पतति तत्राहमस्मि । ततस्तथाकृते लब्धम् । आनीतं बिम्बम् । वाहनानि मार्गे पेतुः । सुवायुना कान्त्यां प्राप्तः । श्रेष्ठी स काञ्चनतोरणं चैत्यं कारयित्वाऽऽनर्च । तस्याऽपुत्रिणः पुत्रोऽभूत् कुलमण्डनाख्यः । तस्य वर्धापनके दीयमाने खे गीः । भोः भोः त्वयाऽहं भव्यं रक्षणीयः । तदनु तत्राङ्गारक्षाः प्रतीहाराश्च कृताः ॥३० वाहनानि ॥

मालवके सारङ्गपुरे अजयपालः क्षत्रियः । जैत्रश्रीसूः सिंहस्वप्नसूचितः पुत्रः स भृशं धीरोद्धतो गजसिंहादिभिः समं क्रीडति । पित्रा नृपभीतेन गृहात्कर्षितः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पराभूत्या कणयरीपापार्श्वे (कनकगिरिपार्श्वे ?) योगी जातः । गुरुर्गुणै रञ्जितः । अन्यदा परीक्षार्थं गुरुणा ५०० शिष्या आज्ञप्ताः । भो ! वटमेकं समूलमानयत । सकृत् नागार्जुनाख्यो वटबीजमानीयाऽऽर्पयत् । शेषैः संभूय समूलो वट एकश्छित्त्वाऽऽनीतः । तुष्टो गुरुर्नागार्जुनोपरि स्वचित्तोपलक्षणात् । अन्यदा शाकार्थं वेश्यागृहे प्रहितः । रम्यं किमपि शाकमानीयाऽर्पितम् । गुरुर्हृष्टः प्राह-भव्यमिदं परं स्तोकम् । स आह पुनरानयामि । गतः । याचिता वेश्या-पुनरिदं देहि मद्गुरो रोचते । सा स्मित्वाऽऽह - रम्यं याचितं किं लभ्यते ? स आह - ओं, तर्हि मह्यं स्वचक्षुरेकं देहि । तेनोत्खाय दत्तं, तया विस्मितया शाकं दत्तम् । तेन च गुरवे । गुरुर्वस्त्रादिरक्ताक्तं दृष्ट्वा निर्बन्धेन पप्रच्छ । तेन सम्यगुक्तेऽश्रद्दधानेन गुरुणा द्वितीयं चक्षुर्याचितं , तेन सात्त्विकेन तत्क्षणं दत्तम् । ततः सपश्चात्तापेन गुरुणा सोऽन्धो गिरिनारादौ मुक्तः । तत्राऽद्यापि कणयरीपामठी प्रसिद्धा । स तत्र तिष्ठन् योगाभ्यासाद्दिव्यनेत्रोऽभूत् । अन्यदा श्रीपादलिप्ताचार्यः पादलेपविद्यया पञ्चतीर्थी सदा नमस्कुर्वन् रैवतमागतस्तेन दृष्ट्वा ववन्दे । विनयेनाऽऽवर्जितः । पादक्षालनजलेन १०७ औषधेषु ज्ञातेषु खण्डितविद्यया पतनोत्पतनानि कुर्कुट इव कुर्वन् गुरुणा षाष्टिकतंदुलजलाम्नाये सिद्धखगामिलेपो जातः । सोऽन्यदा खे भ्रमन् ईशानदिशि हंसरसाचेलदेशे हंसकूटपुरे तिंदुसकवनेऽमरवीरगुफायां चिर्पटनाथं रससिद्धि-धूमवेधाम्नायार्थं सिषेवे । येन चिर्पिटनाथेन एकचिर्पिटीमात्रकल्केन हंसशेखरनृपस्य दृषत्काष्ठताम्रादिसप्तमण्डपाः १२ योजनमानाः कौतुकेन हैमाः कृताः । स १२ वर्षसेवया तुष्टस्तस्य रसविद्यां ददौ । तेन मयूरादौ ३२ वारान् रसः साधितः परं स्त्यानः कथमपि न स्यात् मण्ड एव स्यात् । स खिन्नः पादलिप्तं पप्रच्छ । रसस्त्यानतोपायं तैरूचे । कान्त्यां धनेश्वराऽर्च्यश्रीपार्श्वाऽग्रे महीअडदेशे पुरग्रामसमीपे सेडीनदीतीरे रसस्ते सेत्स्यति । स खगामी हृत्वा ततस्तद्बिम्बं आनीय तत्र मुमोच । पूर्वदेशशमकूआणापत्न्या सौभाग्यमञ्जर्या पद्मिन्या हेमरससिद्धौ औषधपीषणं कृतम् । क्षारान्नमद्येति वचसा रससिद्धिस्तया ज्ञाता । स्वपुत्रवीरघोषवीर-कान्तयोर्ज्ञापिता । ताभ्यां रसलोभात्स मारितोंऽह्रितले कुश प्रहारेण । तेनापि पतता पादप्रहारेण त्रयो रसकुम्भा भग्नाः । तेन रसेन भूमध्यगतेन आरासनग्रामे अंबाविखानौ निर्गतेन सप्तधातुखानयः कृताः । अष्टमी आरासनीयदृषत्खानिः । रसस्योद्गारवातेन किञ्चिद्वेधात् ब्रह्माणग्रामे किञ्चित्कर्बुरिता दृषत्खानिर्जज्ञे । हेमरसस्तम्भनात् श्रीपार्श्वस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्तम्भननाम । नव्य चैत्ये पूज्यते । तत्र स्तम्भनकग्रामो जातः ॥ ३१ रससिद्धिः ॥

श्रीवर्धमानसूरयो वढवाणे गताः । रात्रौ स्वप्नः – प्रातरेकः कार्पटिकः प्रहरैकसमये समेति । स प्रतिबोध्य शिष्यः कार्यः । कार्पटिकस्याऽपि स्वप्नः । अरे अत्र किमर्थ गच्छन्नसि ! अहं सोमेश्वरः श्वेताम्बरश्रीवर्धमानसूरिशरीरेऽस्मि । त्वं तत्र गच्छ । तद्दर्शने ते यात्रा भाविनीति । तेन तथाकृतम् । प्रतिबुद्धो दीक्षितः । स जिनेश्वरसूरिर्जातः । तच्छिष्यः श्रीअभयदेवसूरिर्नवाङ्गवृत्तिं चक्रे । सोऽन्यदा कुष्टी जज्ञे । खेदादनशनेच्छुर्देवतयादिष्टः । मैवं कुरु, अद्यापि त्वं महाप्रभावको भावी । अन्यदा श्रीपद्मावत्यादेशात् स्तम्भनकग्रामे ससङ्घः सुखासनासीनोऽग्रतः पृष्ठतश्च धरणेन्द्रक्षेत्रपालाभ्यां दत्तस्कन्धः खंषपलाशमूलस्थं श्रीपार्श्वं ३ वृत्तस्तुत्या प्रकटीचक्रे । संवत् ११३१ वर्षे । श्री अभयदेवसूरिर्दिव्यदेहोऽजनि । तदा निरन्तरं पूजा ॥ ३२ नवांगदायी ।

इति श्रीमेरुतुङ्गसूरिप्रकटिताः श्रीस्तम्भनस्य ३२ प्रबन्धाः ॥

भूमिं नाभिसुते पवित्रयति यः षट्खण्डयात्रागतः
श्रीनाभेयसुतस्य कुक्षिरजरजः स्नात्राम्भसा संहतिम् ।
चक्रे पंचशतीधनुर्मिततनोः कैलाशशैलाहृतो
विश्वानन्दनसंज्ञकः स कुरुतात् श्रीस्तम्भनेशः श्रियम् ॥ १

द्वैतीयै(यी)कजिनेन्द्रबान्धवसुतैरष्टापदेखातिका
पातात् शेषरुषा मृतेस्त्रिपथगातौयें प्लुतिं कुर्वति ।
तुष्टे जह्नुसुताय नीरहरणोपायं तदाऽऽख्यातवान्
श्री विश्वेश्वरसंज्ञकः स कुरुतात् श्री स्तम्भनेशः श्रियम् ॥

मांधात्रा देवशर्मद्विजवरवनितापाहृता तद्वियोगाद्
विप्रो मृत्वाऽग्निदेवः समभवदनलोपद्रवं तत्र कुर्वन् ॥
रुद्धो यत्स्नात्रतोयान्मलयगिरितटाकाहृतस्तेन राज्ञा ।
विश्वज्योतिर्जनानां दुरितभरहरः स्तम्भनेशः स भूयात् ॥३

यज्ञे जन्मेजयस्याहुतिगतमखिलं नागलोकं विमृश्या-
ऽऽस्तीकस्तन्मोचनायाऽचलदनिलभरोत्पाटितो र(ऋ)क्षशृङ्गम् ।
नीतस्तत्रामृतेशाह्वयजिनवरतो मोचयन्नागवर्गं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्सान्निध्यं जिनेन्द्रो वितरतु स सतां वाञ्छितं स्तम्भनेशः ॥ ४

क्रीडारामं भ्रमन्ती कुसुमचयकृते कुन्तला राजपुत्री

यावद्वापीं प्रविष्टा तनुशुचिविधये मण्डनं तत्सुरेण ।

आत्तं यस्यैव भक्त्या पुनरपि वलितं तत्पिताऽपि प्रबुद्धः

श्रीपार्श्वः सप्रभावो वितरतु स सतां वांछितं स्तम्भनेशः ॥५

इति श्रीमेरुतुङ्गसूरिविरचिते प्रकटितात(टित)द्वात्रिंशत्प्रबन्धानां किञ्चिदुद्धारः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बे भास

सं. मुनि जिनसेनविजय

विहार करतां करतां अमे थोडा समय पूर्वे लींबडी गया, त्यांना ज्ञानभंडारमांथी गौतमगणधरनो भास तथा सुधर्मस्वामी गणधरनो भास लखेल एक प्रकीर्ण पत्र जोवामां आवतां तेनी नकल करेली जे अहीं छपाय छे. बन्नेमां क्यांय कर्तानुं नाम नथी. पण प्रमाणमां अर्वाचीन एटले के बहु प्राचीन नहि एवी आ कृति छे एम लागे छे.

श्री गौतमगणधर भास

राजगृही रळियामणी जिहां गुणशीलचैत्य सुठाम साजन मोरी मोरी हे.
आवो सवाई गुरु भेटवा कांई मेटवा कर्म कठोर सा०
मुनिगण तारामां चंद्र ज्युं आव्या गणि गौतमस्वाम सा० ॥ १
पांचे इंद्रिय वश करे वली पाले पंच आचार सा०
सुमति-गुपतिधारी परिवहै पंच महाव्रतभार सा० ॥ २
नववाडि ब्रह्म धरै सदा वली परिहरे चार कषाय सा०
लब्धि अट्ठावीशनो धणी ज्यों आठ प्रभाव कराय सा० ॥ ३
पहेरी पीत पटोलडी उपरि नवरंगो घाट सा०
कुमकुम घोळशुं साथिओ करी अक्षत पूरीशुं घाट सा० ॥ ४
लळी लळी कीजे लूंछणा लेइ रजत कनकनां फूल सा०
करो जिनशासन परभावना वजडावो मंगलतूर सा० ॥ ५

श्री सुधर्मगणधर भास

ज्ञानादिक गुणखाणी राजगृही उद्यान गणधर लाल
सोहमस्वामी समोसर्याजी ॥ १
कंचन गौर शरीर वाणी गंगा नीर गण०
त्रिहुं पंथ पसरे सदाजी ॥ २
अंग अग्यार उपांगह बार दशविध रुचिनो धार ग०,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुगविध शिक्षा उपदिशैजी ॥ ३

तेर क्रिया व्रत बार गिहि पडिमा अगीयार ग०,

श्रावक गुण एकवीस भेद सिद्धना जी ॥ ४

विनय वैयावच्च कल्प धरे दशविध छ अकल्प ग०,

वंदन दोष बत्रीस विकथा चार तजेजी ॥ ५

कुमकुम घोळ कचोळ गहूंली रंगमरोळ ग०,

अक्षत श्रीफल उपरेजी ॥ ६

मगधाधीपनी नारी सोल सजी शिणगार ग०,

लळीलळी करती लूंछणाजी ॥ ७

जोती गुरुमुख चंद पामती परमानंद ग०,

चतुर चिकोरी गोरडीजी ॥ ५

सुरवधु नरवधु कोडि मिली मिली सरखी जोडी ग०,

गावे जिनशासन धणीजी ॥ ९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सुधर्मस्वामीनो रास ॥

सं. साध्वी दीप्तिप्रज्ञाश्री

भूमिका : गौतमस्वामीना गुणकीर्तननी कृतिओ प्रसिद्ध छे, पण भगवान श्रीमहावीरस्वामीना पांचमा पट्टधर शिष्य सुधर्मस्वामीना गुणो वर्णवती कृति भाग्ये ज जोवा मळे छे: खास करीने गुजरातीमां ६ ढाल अने ७२ कडीमां पथरायेली प्रस्तुत रासरचना , आ संजोगोमां बहु महत्त्वपूर्ण गणाय. आ रास, तेना अंतभागमां वर्णवाया मुजब, विधिपक्ष(अंचल)गच्छना श्रीपुण्यरत्नसूरिए पेटलाद्र (पेटलाद)मां, सं. १६४० मां रचेल छे. आनी एक मात्र प्रति भावनगरस्थ श्रीआत्मानन्दसभासत्क पं. भक्तिविजयग्रंथसंग्रहमांथी उपलब्ध थतां, तेनुं संपादन करीने ते अहीं आपवामां आवेल छे. संपादननो आ प्रथम ज प्रयास होवाथी क्षतिओ रही होय तो विद्वानो दरगुजर करशे तथा सुधारशे तेवी आशा छे.

वीरजिननइं करुं प्रणाम । सरसति भति आपु अभिराम ।
गाउं गणहर सोहम्मस्वामि । जाइ पाप जस लीधइ नामि ॥१॥
गणधर सघला गुणना नीला । एक एकथी छइ अति भ[ला] ।
पणि आगम जे वरतइ सार । ते सोहम्मस्वामी उपगार ॥२॥
हवडा वरतई जे अणगार । ते सवि सोहम्मनु परवार ।
असी वात मिं आगमि लही । रचुं रास रस आणी सही ॥३॥
जंबुदीव थाली आकार । लाख जोयण तेहनुं वस्तार ।
दक्षण भरति मगधदेस । वारु कोलाग सनिवेस ॥ ४॥
धम्मिल विप्र तणु तिहां वास । भद्दिला नारी जाणउ तास ।
नंदन सोहम्म गुणनुं निलु । चऊद वद्याइं वी(दी)पइ भलुं ॥ ५ ॥
प(पू?)छइ पाठ पंडित सइ पाव । शास्त्रवादि नहीं खलखांव ।
सकल शास्त्र संकेतह कहिइ । संधे एक ते मन महांवइं ॥ ६ ॥
मध्यपापानारी[१] छइ एक । सोमिल विप्र वसइ सविवेक ।
तेहनइ ज्यागि मलीउ लोक । बाभणना तिहां तेड्या थोक ॥ ७ ॥

१. पापानगरी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिगनिदीक्षा एकादश वर्‌या उपाध्याय ते वद्या भर्‌या ।
च्यार वेद चतुर ते भणइ । स्मृति पाठतिपाठिंगणइ ॥ ८ ॥
एणइ अवसरि श्रीजिनमहावीर । केवलज्ञान पामइ गंभीर ।
तीर्थभूमिका वंदन करी । चालइ जिहां छइ पावापुरी ॥ ९॥
कनककमलि पग मुकइ देव । चउसठि इंद्र वाटि करइ सेव ।
अजुआलु करवा जिनवीर । बार जोयण आवइ तव धीर ॥ १० ॥
अनंतज्ञान तणा भंडार । जिनवर जाणइ लाभ अपार ।
लाभ जाणी तीर्थंकर रइ । देव दानव मानव[गह]गहि ॥ ११ ॥

वस्तु

वीर जिनवर वीर जिनवर करुं परिणाम
सोहम्मस्वामी गुणकरु धम्मिल तात भद्दिला मात
कोलाग संनिवेसि हवु वीरपाटि गणधर विक्षात ॥
पावाइं सोमिल द्विज जिगनि तेडावइ जाम
वीर वर केवल लही लाभि आवइ ताम ॥ १२ ॥

ढाल २

गौतमस्वामिना रासनुं ढाल । जम सहिकारि कोय ० ।
समोसरण तिहां देवे करीइ । सिर उपरि छत्रत्रय धरीइ ।
सुरनर कोडी तिहीं मलइ ।
देव दुंदुभिनुं नाद मनोहर । सवे विप्र सुणइ तव सुंदर ।
जाणइ देवा आम वलइ ॥ १३ ॥
देव जिगनि मूंकीनइ जाइ । विप्र सवेनइ कोप ज थाइ ।
नाविइ देवा तेह कसिं ।
सुणीआ आव्या केवलज्ञानी वीर जिनेशर मोटा ध्यानी ।
देवा जाइ तेणमसिं ॥ १४ ॥
इंदभूई महां इम चिंतइ । सवजाण को मझ जयवंतइ ।
इंद्रजालि देव मोहीइ ए ।
जाणपणुं हु हंवडा टालुं । [1]जईनइ पूठा (पूछा) जोईए ए ॥ १५ ॥

---

१. एक पंक्ति खूटती जणाय छे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंद्रभूति आव्यउ[गह] गहितु । जिनवर महिमाने अणसहितु ।
नाम लाधइ चिंतवन कीउए ।
नाम गोत्र मझ सहुय वखाणइ । मन - संधे जु माहरु जाणइ ।
तु हु एणि वसि कीउए ॥ १६ ॥
वेदपदिं जिन संधे टालइ । लि दिक्षा सइं पाचसिउं पालइ ।
अमरख बीजु मनि करइ ।
आविउ तव टालिउ संदेह । अनुक्रमि त्रीजु चुथु जेह ।
संघे रहित संयमधरए ॥ १७ ॥
च्यारसुए पाते संयम वरीया । **सोहम्म** माहण कोपि भरीया ।
आवइ वेगि समोसरणि ।
कोडि गमे ते देवा देखइ । रिद्धि [सिद्धि] पेखइ ण लेखइ ।
कुसुमवृष्टि देखइ धरणि ॥ १८ ॥
वीर सुधर्म कहीय बोलावइ । अगनिवेसायण गोत्र महलावइ ।
किम मुनिधरो (?)
अथवा माहंरु नाम विक्षात । सहु को जाणइ मह अवदात ।
मन चिंतन कहि मुनिपवरो ॥१९ ॥
तुं जाणइं आणइ भवि जेह । परभवि तेहवु हुसिइ तेह ।
इहां नर ते नर हसिइ ।
नारी हसिइ ते नारी था जासि । पशुय पुशयपणइ पणि जासि ।
नहि तु जारिं जारिं कसिइं ॥ २० ॥
वेद पदनुं अर्थ विचारि । ताहरुं संधे तुंह निवारइ ।
एकइ जनिमिं वय फरइ ।
नर मरीनइं देवइ थावइ । देव चवीनइं नरभवि आवइ ।
कर्म्म विचित्री इम करि ॥ २१ ॥
नहीं तु दया दान कां दीजइ । तपिं करी तनुं कां सोसीजइ ।
संधेरहित सोहम्म हवा ।
मन वात ते मुनिपति भासी । सात धात ते धर्म्मिवासी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनवाणी अमृत लवा ॥ २२ ॥
पंचसयासिउं संयम लेवइ । जिनपति ततक्षण त्रिपदी देवइ ।
चउदपूरव गणधर कहिइ ।
घडीमांहिं [पूरव] ते कीधां । मुनिवरनइ पणि भणवा दीधां ।
वद्यावंत विचार लहिइ ॥ २३ ॥

वस्तु

समोसरणिं समोसरणिं मलइ बहु देव ।
अमरख आणी आवीइ इंद्रभूति जिनवर बोलावइ ।
अनुकरमिं गणधर सवे जिन समीविं संयम पावइ ।
त्रिपदी तीर्थंकर कहइ विरचइ पूरव सार ।
जिन पासइं वासिं वसइ वरतिउ जयजयकार ॥ २४ ॥

ढाल - ३

(दशानभद्रना रासनुं पहिलुं ढाल ।
वीर जिनेशर पइ नमीए० ए ढाल ॥)
वीर जिनेशर पय नमइए । गणधर गणधर वर अग्यार के ।
महियलिं हीडइ परवर्या ए । बूझवइ बूझवइ वरण अढार के ।
वीर जिनेशर पय नमइए ॥ २५ ॥

त्रूटक

पय नमइ मुनिवर चऊद सहस सहस छत्रीस पुव्वता (?) ।
सुर असुर नरवइ चरण सेवइ वखाणंइ बहुसुं वृता ।
बहुतिरि वरसनुं आयु पाली करम टाली सिद्धि थया ।
कात्तिक वदिनी अमावस्या पावाइं शवपुरि गया ॥ २६ ॥
सोहम्म गणहर पांचमांइ वीरनइ वीरनइ पाटि वखाणि के ।
जाणि जगगुरु गुणिनिलु ए ज्ञान ए ज्ञान ए तणी ए खाणि के ।
सोहंम गणधर पांचमा ए ॥२७॥
त्रू. पांचमु गुणधर सुंदर सुखकर गुणमंदिर सुरतरु
ग्रामानुग्रामिं व्याहर करता फरता देसदेसांतरु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजग्रहए नयर पुरसरि आवइ सोहम्म मलपता
पांचसइ अणगार साथि दया वाणी जलपतां ॥ २८ ॥
प्रणव सहित नमो यती ए अवधि अवधि नाणीय अनेक के
रिजूमई विफू(पु)लमई भली ए । पूरव पूरवधर सववेक के ।
प्रणव सहित नमो यती ए ॥ २९ ॥
त्रू. प्रणव सहित विक्रयलबधी केवलनाणी तिहां बहू
घणा आभिणिबोहिणाणी सुयणाणी छइ सहू ।
बीजबुद्धी कुट्ठबुद्धी पयाणुसारिणोवरा
मणबलीया वयबलीया कायबलीया सुयधरा ॥ ३० ॥
मणपज्जवणाणी अछइ ए संभिण्णरासोईया केवि के ।
व्यद्याहर मुनीशरूप चारण चारण दोय मलेवि के ।
मणपज्जवणाणी अछइ ए ॥ ३१ ॥
त्रू० अछइ णांणी आमोसहीया विप्पोसहीया सव्वोसहीया सुरवरा ।
नाणबलीया दश[न]बलीया चरित्तबलीया दुखहरा ।
खीरासवीया महूयासवीया सप्पीया सवीया वरा[१] ॥३२ ॥
अखीणमाहणसीया मुनि ए तपीया य तपीया य तिनुं परवार के ।
बार भेदे तप करइ ए ध्यानीय . ध्यानीय छइ मनोहार के ।
अखीणमाहणसीया मुनि ए ॥ ३३ ॥
त्रू० मुनिवरा चुथ छठ अट्ठम दसम दुवाल सम[२] धरा ।
मासखमण एक दु ति चु पंच छ परमुखकरा
आंबिल नीवी एकासणीया अंत पंत - आहरी यती ।
दोष रहिता समर्तिहता (?) पाप पंक नहीं रती ॥ ३४ ॥
एहवा मुनिवर वांदीइ ए समरीइ समरीइ रातिनइं दीस के ।
सोहम्मस्वामि तणा यती ए संपति संपति हुइ जगीस कि ।
एहवा मुनिवर वांदीइ ए ॥ ३५ ॥
त्र० वांदीइ मुनिवर तपिं सूरा लबद्धि पूरा जे अछइ

१. एक पंक्ति खूटे छे । २. तप विशेषनां नामो ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नित नित नित नमता जाप जपतां दुख दुरगति नहीं पछइ ।
परवार पोढइ नहींय थोडइ सुधर्म्मस्वामी परवया
राजग्रह वर नगर परसरि आवीनइ समोसर्या ॥ ३६ ॥

वस्तु

वरस बहुतिरि वरस बहुतिरि वीर आयु ।
पालीनइं शवपुरि गया सोहम्मस्वामि जिन पाटि थापिउ ।
महीयलि महिमां वस्तरिउ त्रणि त्रिभुवनि जस व्यापिउ ।
बहु परवारिं परवर्या आवइ राजगृहिं जिहा ।
जन सघला वंदन करइ जय जय वरतइ तिहां ॥ ३७ ॥

ढाल - ४

(एकवीसानु ढाल ।
आविउ आविउ रे आविउ जल०) ।

ए जाण्या ए जाण्या रे सोहम्मस्वामी समोसर्‌या ।
लोक आवइ रे परवारिं बहु परवर्या ।
अनव्रती रे बहूला आवी अणुसर्या ।
जंबूकुयर रे बंदनि पहूता गुणि भर्या ॥ ३८ ॥

त्रु. गुणभर्‌या सोहम्मस्वामि वंदइ सुणंइ देसन गुरुतणी
मधुरवाणी अमीयसमाणी हित आणी कहि घणी
संसार सारइ सार पातु धर्माजनु कीइ
क्रोध माया मान मूंकी लोभ थोभ न दीजीइ ॥ ३९ ॥
जाणु जाणु संभव दोहिलु ।
तेणइ कीजइ रे जिनधर्म्म ते अति सोहिलु ।
जिम छुटइ रे कर्म्म कठोर ते जीवडु ।
सघलांमां रे महाव्रत धर्म्म ते छ (छे) वडु ॥ ४० ॥

त्रू० वडु महाव्रत धर्म्म जाणी जंबू वाणा(णी) ते ग्रहि
आदेस सामी अह्मे पामी चरित्र लेशिउं इम कहि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शीलव्रत ज स्वामी दीजइ संबल लीजइ एतलुं
शील लेइ जम्बु जाइ सुख थाइ अति भलु ॥ ४१ ॥
आवइ आवइ रे आवइ थ...... कुण गणइ ।
मात तातनइ रे मझ दीक्षा दिउ इम भणइ ।
जंबू बोलइ रे जाणीनइं जंतु को हणइ[१] ॥ ४२ ॥
त्रु० ....जाणी इम वाणी लेइ रहि
आठ कन्या तम्हे परणु मात तात ते इम कहि ।
अह्मे परणी चारित्र .... उं तु सही
हा ज पाडी कहि माडी हरख पहुचाडउ वही ॥ ४३ ॥
परणइ परणइ रे कन्या आठ एकइ दिनिं ।
मनि जाणइ रे दिन ऊगिं जाउं वनि ।
रयणीइ रे कन्या आठइ बूझवी ।
जंबूनइं रे कोडि नवाणुं रिद्धि हवी ॥ ४४ ॥
त्रू० हवी रिद्धि नीमसधि प्रभावु चोरा भली आवीउ
निद्रा देतु धन लेतु जंबूइं बोलावीउ ।
पंचसइ चोरा थंभ्या थोरा कहि प्रभवु सुणि धणी
बिय वद्या मुझ लेई एक आपि न तुझ तणी ? ॥४५ ॥
कहि जंबूरे मुझ कुवद्या ते कसी ।
जिनधर्मनी रे वात मोरइ हईइ वसी ।
प्रभवु रे पांचसइं चोरशुं तव वलिउं ।
चोरी हत्या रे पाप थकी ते तां टलिउ ॥ ४६ ॥
त्रू० टलइ पापथी आप आपि माय बाप चारित्र धरइ
कन्या आठना माय बाप नारी पणि संयम वरइ ।
पांचसइ चोर सहित प्रभवु जंबू साथि संयम लीइ
पांचसइ अठावीसनइं सोहम्मस्वामि चारित्र दीइ ॥ ४७ ॥

१. एक पंक्ति खूटती जणाय छे, अथवा ३ पंक्तिनी ज कडी हशे ? ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तु

लीइ दिक्षा लीइ दिक्षा कुंयर जंबू
आठ कन्या पोता तणी । माय बाप पणि तस जाणुं ।
पांचसयाशिउं प्रभवु ऋषभदत्त धारणि वखाणुं ।
सोहम्म स्वामी स्वामी स्वहथिं संयम दीइ मुनीस ।
पांचसया ऊपरि वली व्रत लि अठावीस ॥ ४८ ॥

ढाल - ५

राग-देसाख

(ढाल : आषाढभूतिना रासनुं ।)

मारगि अति उतावलु ए सोहम्म स्वामी वहिरता ।
बूझवइ बहूजीव दया दान ते भाखता । तपीया अती ॥ ४९ ॥ आंचली ।
सोहम्म स्वामी मुनिवरु गुणनुं भंडार
जस सोभागिं दीपता पंचमा गणधार ॥ ५० ॥ सो०
तेजिं दिनकर किंकरु समचुरस संठाण ।
वज्रऋषभ संघयण छइ सुस्वर करइ वखाण ॥ ५१ ॥ सो०
रूपि रति हारीउ वदनिं अरवंदा
वाणी अमृत आगली सुख सोभा कंद(दा) ॥ ५२ ॥ सो० ।
अचल मेरु तणी परिं सायर पि गंभीर ।
नीरदनी परि गाजतु गिरुउ वडवीर ॥५३ ॥ सो० ।
गाम नगर पुर पाटणिं कांइ नहीं पडिबंध ।
गज गतिं हींडइ मलपतु रूयडा दो खंध ॥ ५४ ॥ सो०
क्रोध मान माया नहीं नहीं लोभ लगार ।
रिंदय छइ निरमल जल समुं चारुप (वारु ए) अणगार ॥ ५५ ॥सो०
शमरस सागर सुंदरु दयावंत अपार ।
कूरमनी परि गोपव्यां सवे इंद्री सार ॥ ५६ ॥ सो०
सात हाथ देह भलु कनकवर्ण अपार ।
मुनिवर वंदिं परवर्या महीयल करइ विहार ॥ ५७ ॥ सो०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मध्यानमांहि झीलता आविउं शुकल ध्यान ।
करम कर्‍यां ते पातलां पाम्या केवलज्ञान ॥ ५८ ॥ सो०
केवल स्वामी जव लहि आवइ सुरनर कोडि ।
केवल महुछव तव करइ रहि दो करजोडि ॥ ५९ ॥ सो०

वस्तु

सोहम्मस्वामी सोहम्मस्वामी महीयलि विचरइ ।
भव्यजीवनइ बूझवइ गामि नगरि परवर्‍या चालइ ।
अणुव्रत गुणव्रत शीलव्रत महाव्रत तप विवध आलइ ।
शुक्लध्यान ध्यातां थकां पामइ केवलज्ञान ।
इंद्रादिक महुछव करइ ध्याइ जिननुं ध्यान ॥ ६० ॥

ढाल - ६

ढाल-वधावानु ।

सोहम्मस्वामी गणधरु केवलज्ञानी सार ।
संघे टालइ जनतणा जननुं रे छइ ए आधार के ॥ ६१ ॥ आंचली
सोहम्म सामी वांदुं वांदइ रे सुरनरना कोडि कि ।
वांदइ रे मुनिवर करजोडिके । सोह०
लबधि अठावीसिं भरिउ परवरिंउ बहु परवार ।
जगमाहिं नाम ते राखीउं तारीया रे संसार अपार के ॥ ६२ ॥ सो०
वरस पंचास घरि वश्या छदमस्त बितालीस ।
आठ वरस हऊआ केवला व्याप्या रे जंबूय़ मुनीस के ॥ ६३ ॥ सोह०
राजग्रहि अणसण करिउं मास दिवस जव थाइ ।
शेष करम ते क्षे करी शवपुरि स्वामि जाइ के ॥ ६४ ॥ सोह०
परमानंद आनंदमय अनंत सुखमइला ।
काल जासि जु अतिघणुं तुहि रे नहीं हुइ खीण के ॥ ६५ ॥ सो०
रिद्धि वृद्धिनी बहु सिद्धि हुइ भणइ वारु रास ।
मंगलमाल ते पामीइ हुइ रे घरि लीलविलास के ॥ ६६ ॥ सोह०
प्रहि ऊठीनइ गाईइ पाईइ परिमाणंद ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आधि व्याधि दूरिं टलइ तेहनइं रे हुइ सुखनुं कंदकि ॥ ६७ ॥ सोह०
रूडां काज ते कीजीइ गणीइ विशेषिं एह ।
परवार वारू वस्तरइ सजनशुं रे पणि वाधइ नेह के ॥ ६८ ॥ सोह०
चिंता टलइ रोग उपसमइ न नडइ वइरी नास ।
नरनारी नित नित गणउ सोभागी रे सोहम्मनु रास के ॥ ६९ ॥ सोह०
सवंत सोल ते जाणजिउ **च्यालीसु** निरधार ।
फागुण सुदि तेरसि भली नक्षत्र रे पुष्पनइं **गुरुवार** के ॥ ७० ॥ सोह०
विविधपक्ष गछिं जाणीइ **श्रीसुमतिसागरसूरिंद** ।
श्रीगजसागरसूरि तस तणइ पाटि रे ऊदयुय दिणंद के ॥ ७१ ॥ सो०
तास सीस पेटलाद्रमिं छइ **पुण्यरत्नसूरि** ।
ऋषभदेव पसाउलि हुइ रे आनंद भरपूरके ॥ ७२ ॥
सोहम्मस्वामी वांदुं वांदइ रे सुरनरनी कोडि के ।
वांदइ रे मुनिव्वर करजोडि के । सोहम्मस्वामी वांदुं ॥

इति श्रीसुधर्म्मस्वामिनुं रास संपूर्ण: ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दोनो कोश

शब्द	शब्दार्थ	कडी
खलखांव	?	६
संधे	संदेह	६,१६,१७,२१,२२,६१
ज्यागि	यागमां	७
जिगनि दीक्षा	यज्ञदीक्षा	८
अमरख	अमर्ष	१७,२४
समोसरणि	समवसरणे, तीर्थंकरनी धर्मसभामां	१८,२४
त्रिपदी	त्रण पदो, जे तीर्थंकरो गणधरोने आपे छे.	२४
शवपुरी	शिवपुरी - मोक्ष	३६,३७
रिजूमई	ऋजुमति (पांच ज्ञान पैकी चोथा ज्ञानना बे प्रकारो)	२९
विफुलमई	विपुलमति	२९
पूरव	पूर्व (जैनागम)	२९
पूरवधर	पूर्वधर (आगमना ज्ञाता)	२९
विक्रयलबधी	वैक्रियलब्धि इच्छित रूप धरवानी शक्ति	३०
आभिणिबोहिणाणी	मतिज्ञानी	३०
सुयणाणी	श्रुतज्ञानी	३०
बीयबुद्धी	बीजबुद्धि	३०
कुट्ठबुद्धी	कोष्ठबुद्धि	३०
पयाणुसारिणो	पदानुसारी (त्रणे विशिष्ट ज्ञान लब्धिओ, ते धरावता मुनिओ)	३०
मणबलीया	मनोबली	३०
वयबलीया	वचनबली	३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायबलीया	कायबली	३०
मणपज्जवनाणी	मन:पर्यव नामे ज्ञानवाला	३१
संभिण्णरासोईया	संभिन्नश्रोतस् लब्धिवाला	३१
चारण	ते नामे लब्धिवाला	३२
आमो सहीया	(त्रणे विशिष्ट रोगोपशामक	३२
विप्पोसहीया	लब्धिओ, तेने वरेला	३२
सव्वोसहीया	मुनिओ)	३२
नाणबलीया	ज्ञानबली	३२
दसणबलीया	दर्शनबली	३२
चारित्तबलीया	चारित्रबली	३२
खीरासवीया	क्षीरास्त्रवलब्धिवंत	३२
महूयासवीया	मध्वास्त्रवलब्धिवंत(दूध-मध-घीना जेवी तृप्ति आपे तेवी वाणी वालां)	३२
सप्पीयासवीया	सर्पिरास्त्रवलब्धिवंत	३२
अखीणमहाणसीया	अक्षीणमहाणस (अक्षयपात्र) लब्धिवाला	३३
अंत पंत आहरी	तुच्छ - वधेल आहार लेनारा	३४
समोसर्या	पधार्या	३८
नीसधि	निशीथे - रात्रे	४५
समचुरस संठाण	समचतुरस्त्र संस्थान, शरीराकृतिनो एक अतिविशिष्ट प्रकार	५१
वज्रऋषभसंघयण	अतिविशिष्ट दृढ अस्थिरचना	५१
पडिबंध	प्रतिबंध-आसक्ति	५४
रिंदय	हृदय	५५

★★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगोनी पगदंडी पर

—हरिवल्लभ भायाणी

सात 'सुख'

सायणकृत 'माधवीय धातुवृत्ति'मां बोधिन्यास नामना वैयाकरणनो मत नोंध्यो छे के 'साति' धातु सुखवाचक छे अने ए मात्र पाणिनिसूत्रमां ज मळे छे (एटले के सौत्र धातु छे)। पाणिनिए ए धातु परथी 'सातय' एवुं कृदन्त रूप बने छे एम कह्युं छे (३, १, १३८). कातंत्र व्याकरणमां पण ए धातुनो निर्देश छे। (जुओ 'बोधिन्यास ; एक अप्रसिद्ध वैयाकरण', 'सामीप्य' १२,२ जु. स. १९९५, पृ. ३६).

मोनिअर विलिअम्झना कोशमां 'साति' ने बदले 'सात्' एवुं धातुरूप आप्युं छे, अने 'सात'='सुख' अने 'सातय' ए साधित रूप आप्यां छे। हेमचंद्राचार्यना 'अभिधान-चिन्तामणि'मां सुखवाचक शब्दोनां 'सात' आप्यो छे (पद्यांक १३७०)। संपादके 'शात' एवो रूपभेद पण आप्यो छे. प्राकृतमां 'साय' शब्द सुखवाचक छे अने ते जैन आगम साहित्यमां वपरायो छे।

जैन दर्शना सैद्धान्तिक ग्रंथ 'तत्त्वार्थाधिगम-सूत्र'मां कर्मना विविध प्रकारोमां 'सद्वेद्य' = (सातावेद्य) अने 'असद्वेद्य' (=असातावेद्य) गणावेल छे. पहेलानो अर्थ 'जेने लीधे सुख अनुभवाय' अने बीजानो अर्थ 'जेने लीधे दुःख अनुभवाय' एवो छे। आजे पण जैनोमां 'शाता छे', 'शातामां छे' एवा प्रयोग सामान्य भाषाव्यवहारमां छे।

आम जे धातु के तेमांथी साधित शब्दनो प्रयोग अन्यथा संस्कृत साहित्यमांथी नथी मळतो ते जैन परंपरामां प्राकृतमां जळवायो छे. आथी ए धातुनी अने प्राकृत प्रयोगनी प्रमाणभूतता पण स्थपाय छे, अने धातुपाठना जे धातुओनो प्रयोग उपलब्ध संस्कृत साहित्यमांथी नथी मळतो तेमनो आधार प्राकृत साहित्यमांथी मळी रहेतो होवानुं आथी एक वधु उदाहरण आपणने मळे छे, तथा एवा धातुओ वैयाकरणोए कृत्रिम बनावी काढ्या छे ए मतनुं निरसन थाय छे. आ पहेलां में आना ज एक बीजा उदाहरण तरफ ध्यान दोर्युं छे। 'आड्वल्' एवो सोपसर्ग, 'ड्वल्' धातु गुजराती वगेरेमां मळती सामग्रीने आधारे प्रमाणभूत ठरे छे अने 'ट्बल्' के 'टल्' धातुओथी ए जुदो छे. जुओ 'Notes on Some Prakrit Words' ('निर्ग्रन्थ', १, १९९६, पृ. २५-३२) ए लेखमां पृ. २७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेपणी, अरित्र

१. क्षेपणी

१. 'नामलिंगानुशासन' (अमरकोश), 'अभिधान-चिन्तामणि' जेवा परंपरागत शब्दकोशोमां सं. **क्षेपणी** शब्द **नौकादंड** एटले के 'हलेसुं'ना अर्थमां आप्यो छे। (अमर० १०,१३, अभि० ८७७) । टर्नरना भारतीय-आर्य भाषाओना तुलनात्मक कोशमां आमांथी निष्पन्न हिंदी, **खेवनी** आपवा उपरांत सं. **क्षेपयति, क्षेप, क्षेप्य, क्षेपक** ए शब्दरूपोमांथी ऊतरी आवेला हिंदी वगेरेना **खेवना** वगेरे, बंगाळी वगेरेना **खेया** वगेरे, पंजाबी **खेवा**, वगेरे, हिन्दी **खेवैया** वगेरे 'नाव', 'नाव चलाववी', 'नाव चलावनार' वगेरे अर्थोमां नोंध्या छे (टर्नर, क्रमांक ३७३८ थी ३७४२) ।

२. अरित्र

२. सं. **अरित्र**ना अर्थनी बाबतमां मतभेद (कदाच अर्थपरिवर्तन के कशीक गरबड) छे। 'अमरकोश'मां (१०,१३) तथा 'अभिधान-चिन्तामणि'मां (८७९) तेनो 'सुकान' एवो अर्थ आप्यो छे। परंतु मोनिअर विलिअम्झना संस्कृत कोश अनुसार 'ऋग्वेद' आदि वैदिक साहित्यमां तेम ज पाणिनिनी 'अष्टाध्यायी'मां तेनो 'हलेसुं' ए अर्थमां प्रयोग छे। 'आचारांग-सूत्र'मां (परिच्छेद ४७९) पण **अलित्त** (पाठांतर **आलित्त**-पासम.मां आ बंने शब्दरूपो 'आचारांग'ना संदर्भ साथे 'हलेसुं'ना अर्थमां आप्यां छे, परंतु **अरित्र** 'धर्मविधिप्रकरण'ना संदर्भ साथे 'सुकान'ना अर्थमां आप्यो छे). जंबूविजयजीना संपादनमां आपेल 'चूर्णि'ना संदर्भोमां पण लांबाटूंका हलेसाना तथा सुकान वगेरेना वाचक शब्दोमां 'अलित्त' मळे छे. अर्धमागधीनी लाक्षणिकता धरावता मूळना 'र्' > 'ल्' एवा परिवर्तनवाळा शब्दोमां **अलित्त** (< **अरित्र**)नो पण समावेश थाय छे।

हेमचंद्रविजयगणिनी 'अभिधान-चिन्तामणि-नाममाला'नी आवृत्तिमां सार्थ शब्दानुक्रमणिकामां मूळ **अरित्र**नो 'वहाणनुं सुकान' ए अर्थ बराबर कर्यो छे, परंतु अभि.मां अपेल **अरित्र**ना पर्याय **केनिपात** अने **कोटिपात्र**ना 'वहाणनुं सुकान, हलेसुं' एम जे बे अर्थ आप्या छे ते भूल छे। **क्षेपणी**नो अर्थ पण अनवधानथी क्षेप 'निन्दा' आप्यो छे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गरुस्तुतिरूप त्रण लघुकृतिओ

संपा. **भँवरलाल नाहटा**
कलकत्ता

नोंध : (जेसलमेरस्थित भंडारनी १४मा शतकनी ताडपत्र-पोथीमां संगृहीत केटलीक लघुकृतिओनी नकल, जैन मनीषी पं. श्रीभंवरलाल नाहटा (कलकत्ता) पासे छे. आ कृतिओ अप्रकट छे, अने मुख्यत्वे खरतरगच्छना आचार्यो साथे संबंध धरावे छे. श्रीनाहटाए लखी मोकलेली त्रण विशिष्ट लघुकृतिओ अत्रे प्रस्तुत छे.)

श्रीमोदमन्दिरगणि विरचित

श्रीजिनप्रबोधसूरि-श्रीजिनचंद्रसूरि चन्द्रायणा ॥

वंदहु निम्मलनाणनिहि, जिणपबोहसुमुणीसु ।
लद्धिहिं गोयम अवयरिउ, सूरिजिणेसरसीसु ॥१॥ तरेचच्चवचच्चा ॥
सीसि जिणिसरसूरिस्स गुणसायरो, लद्धि किरि अवयरिउ गोयमगणहरो ।
सयलपुहविंदविंदेण वंदियपओ, नाणनिहि नाणनिहि नाणनिहि वंदहो ॥१॥
सोहइ सायरु चंदु समु, नाणपबोहमुणिराउ ।
भवियकुमुयपडिबोहकरु, तिहुयणि जो विक्खाउ ॥२॥ तरेचच्चवचच्चा ॥
जोय विक्खाउ गुरु सच्चजणवल्लहो, मंदपुन्नाण जंतूण वे दुल्लहो ।
कित्तिजुन्हाइ जो सयलजगु बोहण, चंदसमु चंदसमु चंदसमु सोहण ॥२॥
मेरुसेहरु पुहवि जयउ, जाम मेरुगिरि भारु ।
भवियह भवसंतावहरु, चरणलच्छिउरिहारु ॥३॥ तरेचच्चा तरेचच्चा ॥
हारुउरिचरणलच्छीहि जो छज्जए, पंचबाणस्स बाणेहि तो भिज्जए ।
सूरिजिणचंद भव्वाण भवतमहरो, जयउ गुरु जयउ गुरु जयउ गुरु सेहरो ॥३॥
कामलदेवि सधन्नधर, देवराज अनुमंति ।
जाण पुत्तु जिणचंदगुरु, जाउरुवसमकंतु ॥४॥ तरेचच्चवचच्चा तरेचच्चा ॥
कंति पसारउ विहसियकंचणपहो, सुद्धसिद्धांतवक्खाणहयकुप्पहो ॥
उयरि उप्पन्नु जसु सुगुरु साइकला, धन्न सा धन्न सा धन्न सा कोमला ॥४॥
सायरु खारउ रवि तवइ, चंद कलंकिउ देहु ।
केणि उपमिज्जइ इह सुगुरु, निरुवमगुणगणगेहु ॥५॥ तरेचच्चा तरेचच्चा ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गेहु निरुवम सह गुणगणह इह सुहगुरु, केण उवमिज्जए भविय कप्पतरु ।
चंद सकलंकुधर तवइ दिवसेसरो, खारुजलु खारुजलु खारुजलु सायरो ॥५॥

॥ इति श्री जिनप्रबोधसूरि-श्रीजिनचंद्रसूरि-चन्द्रायणाकाव्यं समाप्तम् ॥
कृतिरियं मोदमन्दिरगणीनाम् ॥

★ ★

श्री सज्जनश्रावक कृत
श्रीजिनेश्वरसूरि कुण्डलिया

चउविह धम्मु चलणु जसु धीरह, पंचसमिति तिहुगुपित सरीरह ।
पंचाणणुवय पंच धरंतउ, जिणिसरसूरि तवतेयं फुरंतउ ॥१॥
तवतेय फुरंतउ गयणिं जंपिउ, कामकरिहि जु डारणो,
कुंभयल संगम बलतलप्पवि, कोहमयविडारणो ।
सुइ सीहु देसण रविण गज्जइ, भवियबोहसुप्पहे,
जयवंतु जिणिसरसूरि गणहरु, धम्ममग्गि चउविहे ॥१॥
भंजिउ मोहखंभ जिणि लीलिण, सकल निविड साय तोडिय मण ।
निज्जिउ कोहु दोसु अड चंडउ, जिणेसरसूरि करि धरि विहि दंडउ ॥२॥
करि धरिवि दंड पयंडु चंडिम, मोह वणु जिणि भग्गओ
हरिगच्छविंझगइंद-मुणिंदगणमाहि माणिकदंडओ ।
विहि धम्म सम्म सहाव सीलिण गुडगहि विरउ गंजए
झर्णर्णर्ण झेंझेंकार जिणेसरसूरि कुग्रह भंजए ॥२॥
सील सरोवर पुडइणि मंडिउ, रायहंसि खणु इक्कु न च्छंडिउ ।
जिणेसरसूरि कमलु वर अच्छइ, बहुगुणभरिउ भविउ जणु पिच्छइ ॥३॥
पिच्छि गुणच्छइ छक्कदलवरकम-सुहगुरु भवियणा

x x x x x x x x ।

वरनाण जलपुड इणि सुसंजमि चरणसरकरुसिरे
गर्णुर्णुणुणु भमर मुणिंद रसु सिद्धंतु तहिं सीलस्सरे ॥३॥
छज्जइ कमणुप्पमइ है सुहगर गरुयबुद्धि मज्जाय...यर हर ।
जिणसासणह करइ पब्भावण जिम सुरिंदु सुरगिरिनिच्छलमणु ॥४॥
मणु करिवि निच्चलु भविय सुहगुरु-वयणि भुवण करावियः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उज्जित सत्तुंजओ सुतारणु थंभणउ रच्चाविया ।
धर जाव सुरगिरि भुवण ससाय वहइ गंगतरंग ए
अर्णर्णर्ण मंगलु सूरि जिणेसरसूरि सुहमउप्पम छज्जए ॥४॥

॥ इति श्री जिनेश्वरसूरिकुंडलिया-काव्य; समाप्ता कृतिरियं महं. सज्जन श्रावकस्य ॥

★

महं. सज्जनश्रावक कृत
श्रीजिनप्रबोधसूरि-नाराचबंधछंद

जु वीरनाह पाय पट्टभत्तिचंगजुगवरो
जु नवहभेय बंभचेरगुत्तिगुत्तु गणहरो ।
सुहमसामि जंबुसामि चरणकमल महुयरो
सु सुयणवत्रि जिणपबोहसूरिराउ जुगवरो ॥१॥

जु सतरभेय संजमस्स पालणो पवत्तए
जु दसहभेयज इह धम्म नय विचित्तु पालए ।
पंचसमिति तिन्निगुपति सुद्धसीलसुंदरो
सु सुयणवन्ने(त्रि) जिणपबोहसूरिराउ जगवरो ॥२॥

जु गच्छ पवर मुणिहि माहि लीह पामए
जु गुरुय पंचवयह भारु लीलमत्त धारए ।
सहसअट्ठदसह-सील-अंग जोय धुरंधरो
सु सुयणवत्रि जिणपबोहसूरिराउ जुगवरो ॥३॥

जु पउमसेय लेस सेह अंगसोहए
जु चउकसाय दलिवि दप्पु सुविहि मग्गु जोयए ।
जु जमिय वाणि भविय नाणि बोहए मुणीसरो
सु सुयणवत्रि जिणपबोहसूरिराउ जुगवरो ॥४॥

॥ इति श्रीजिनप्रबोधसूरिनाराचछंद, समाप्ता कृतरियं महं० सैज्जनश्रावकस्य ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अखंड दीवानो विस्तरतो उजाश

(श्री मोहनलाल दलीचंद देशाई रचित अने श्री जयंतकोठारी संशोधित संदर्भ-साहित्य 'जैन गुर्जर कविओ' नो विमोचन-समारोह ता. १९ जान्युआरी १९९७ना रोज, श्री महावीर जैन विद्यालय, मुंबाईना उपक्रमे आंबावाडी श्वे.मू.जैन संघ, अमदावादना आतिथ्य हेठळ योजाई गयो. डो.रमणलाल चि. शाहनी प्रासंगिक भूमिका साथे आरंभाएला आ समारंभमां आ संदर्भग्रंथोनुं विमोचन करतां म.म. के. का. शास्त्रीए आ संदर्भसाहित्यना संशोधन अने संमार्जनकार्यनी भूरि भूरि प्रशंसा करी तेनी संशोधनक्षेत्रमांनी उपादेयता पर भार मूक्यो. डो. कनुभाई जानीए पुस्तकोनी समीक्षा करतां संदर्भ साहित्यमां श्रीजयंत कोठारीए तैयार करेली सूचिओने ए संशोधन कार्यनी कूंची समी ओळखावी डो. रमण सोनीए श्रीजयंत कोठारीए खंतथी विकसावेली पोतानी आगवी संशोधनपद्धति पर भार मूक्यो. आ समारंभना अतिथिविशेष श्रीसुरेश दलाले जयंतभाईने अभिनंदन आप्यां अने प्राचीन कविओना मुखडाथी रचेली पोतानी काव्यरचनाओनो आस्वाद करावी रसल्हाण करावी.

आ प्रसंगे मध्यकालीन गुजराती साहित्यवारसा ना जतन अने प्रकाशननी समस्याओ पर योजाएला परिसंवादमां डो.कनुभाई शेठे-हस्तप्रतभंडारो 'वर्तमान स्थिति अने हवे पछीनुं कार्य', श्री जयंत कोठारीए 'मुद्रित हस्तप्रतसूचिओनी समीक्षा', 'अप्रकाशित साहित्यनो संपादन कार्यक्रम' विशे श्रीरतिलाल बोरीसागरे अने डो. शिरीष पंचाले 'अप्रकाशित साहित्यना प्रकाशननो कार्यक्रम' विशे वक्तव्यो प्रस्तुत कर्या ।

वक्तव्यो पछी, सर्वश्री बळवंत जानी, कनुभाई जानी, रमणलाल पाठक, रमण सोनी, नरोत्तम पलाण, शांतिलाल आचार्य वगेरेए चर्चामां भाग लीधो.

डो. कान्तिभाई शाह अने डो.कीर्तिदा जोशीए समग्र समारोहना संयोजक तरीकेनी जवाबदारी सुपेरे निभावी हती.

श्रीप्रद्युम्नविजयजी महाराजश्रीए ओळखाव्यो तेम समग्र समारोह एक 'ओच्छव'नी साथे साथे, भविष्यमां थनारा संशोधनकार्यनी एक महत्त्वनी भूमिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूरी पाडनारो बनी रहेशे एवी श्रद्धा प्रेरनारो बनी रह्यो.)

(१)

श्री जयंतभाईए आ पुण्यकार्य एमनी आगवी कुशळताथी एवी रीते कर्युं के दीवानी ज्योत वधु प्रकाशमान थई अने अजवाळुं दूर सुधी फेलाव्युं. उजाश एवो तो पथरायो के तेमां रहेली झीणामां झीणी वस्तु-वीगतो हस्तामलकवत् स्पष्ट देखावा लागी. जेम कुशळ तंतुवाय बीजाना वस्त्रने एवी रीते तूणे के जोनारने असल पोतामां उमेरो क्यां थयो ते न देखाय ते रीते जयंतभाईए मोहनभाईनी मूळ सामग्रीने संमार्जित करी आपी. जयंतभाईने पण पोताना उत्तर जीवनने शणगारवानुं अेक विशेष कार्य मळी गयुं. अने जीवलेण मांदगीना बिछानेथी आवा काम करवा माटे ज तेओ जाणे बेठा थया. 'जैन गुर्जर कविओ'ना जूना त्रण भाग (ने चार ग्रंथ) जोया पछी नवा दश भागने जोईए त्यारे लागे के जयंतभाई मोहनभाईना मानसपुत्र छे. मोहनभाईए अहीं आवुं शा माटे लख्युं छे/हशे. आ वात आ रीते केम मूकी छे, ते बधुं जाणे के जयंतभाईए परकायप्रवेशनी विद्या साधीने जाण्युं होय एम लागे. मोहनभाईनो आत्मा ज्यां हशे त्यां, आ कामथी प्रसन्न थइने शुभाशिष वरसावशे. पितृतर्पणनो आथी वधु सारो प्रकार बीजो कयो होई शके ?

संशोधनना काममां जयंतभाईनी सच्चाई, प्रामाणिकता, निष्ठा-आ बधां माटे तो एमना शत्रु पण कान पकडे. नर्मदनी जेम जयंतभाई पण कही शके तेम छे : "वीर सत्य ने नेक टेकीपणुं, अरि पण गाशे दिलथी." आवां कामोने शकवर्ती काम कहेवाय. तेने काळनो काट लागतो नथी. तेमां हजु उमेरवानुं अन्य कोईना हाथे बनशे परंतु तेने कोराणे मूकवानुं नहीं बने. जेने मध्यकालीन साहित्यमां कशुंय जोवुं हशे, नोंधवु हशे, काम करवुं हशे तेने आना विना नहीं ज चाले तेवुं आ काम बन्युं छे.

आवां घणां कामो आदर्या अधूरां रहे छे पण आ तो आदरीने तेने परिपूर्ण कर्युं छे; कहो के एक तप पूर्ण थयुं. आमेय दश भागमां दश वर्षथी वधु समय वीत्यो छे. बार वर्षने तप कहेवाय. आनो ओच्छव करीए.

हजु पण एक शेष कार्य छे. मोहनभाईए जैन साहित्यनो जे संक्षिप्त इतिहास कर्यो छे तेनी संवर्धित आवृत्ति न थाय तोपण तेनुं पुनर्मुद्रण तो अति आवश्यक छे ज. जेथी विद्वानोनी आवती कालनी पेढीना हाथमां आ 'जणस' पहोंचे. एथी पण साहित्यनी मोटी सेवा थशे; मोहनभाईने पूर्ण अंजलि आपी गणाशे. जैन साहित्यना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संक्षिप्त इतिहासना पुन:संपादन अने प्रकाशन माटे जे कांइ सहयोग जोइतो हशे ए आपवा हुं वचनबद्ध थाउं छुं. आमेय हुं जयंतभाई साथे स्नेहबद्ध तो छुं ज.

आ धूळधोयाना कामने समजनारा, पोंखनारा ओछा ज होय छे पण आमां लाल लीटी 'ओछा' शब्द नीचे नहीं पण 'होय छे'नी नीचे मूकीने मारा हैयानो आनंद प्रकट करुं छुं.

—प्रद्युम्नसूरि

(२)

काळजयी साहित्यकृतिना पुनरुद्धारकनुं अभिवादन

कोईपण सर्जनात्मक कार्य, जो ते चिरंजीव बनवानी क्षमता - गुणवत्ता धरावतुं होय तो तेने, योग्य अवसरे, जीर्णोद्धारनी के पुनर्ग्रथननी गरज रहे ज छे. मंदिरोना के भव्य इमारतोना जीर्णोद्धार जो आवश्यक मनाता होय तो साहित्यक्षेत्रनी काळजयी कृतिओना पण जीर्णोद्धार शा माटे आवश्यक न गणाय ? तेमांय ए कृति जो संदर्भग्रंथ होय तो तो तेनो पुनरुद्धार, बदलाई गयेला साहित्यिक वातावरणना संदर्भमां, थाय ते सर्वथा उचित - अपेक्षित ज गणाय. परंतु आवा सर्जनात्मक कार्यनो पुनरुद्धार एवी योग्य व्यक्तिना हाथे के नजर नीचे थवो जोईए के जे व्यक्तिनी क्षमता ते कार्यना मूळ सर्जकनी क्षमतानी बरोबरीमां ऊभी रही शके तेवी होय. वळी, बदलायेला साहित्यिक परिवेशनो पूरेपूरो लाभ उठावी ते मूळ सर्जनने वधु तार्किक, वधु वास्तविक अने वधु संमार्जित रूपमां मूकी आपवानी सज्जता ने दृष्टि जेनामां होय ते ज आवा पुनरुद्धार माटे समर्थ अने योग्य व्यक्ति गणाय.

मो. द. देशाईना अमर संदर्भग्रंथो 'जैन गूर्जर कविओ'नुं ए सद्भाग्य ज गणाय के ते ग्रंथोने, उपर वर्णवी छे तेवी क्षमता तथा सज्जता धरावनार अनुसर्जक सांपड्या-श्री जयंतभाई कोठारीना रूपमां, 'जैन गूर्जर कविओ'ना नवा संपादनना पूर्वप्रकाशित ७ ग्रंथो अने अवशिष्ट रहेला ३ ग्रंथो - एम दश ग्रंथोनुं जरा निरांते अवलोकन करीए तो जयंतभाईनी शोधक दृष्टि, चीवट, अने हाथमां लीधेला कार्यना एकाद अक्षरने पण अन्याय न थई जाय ते माटेनी सूक्ष्म जागृति, तेमां अक्षरे-अक्षरे जोवा मळशे.

आपणे त्यां साहित्यजगतमां मानसपुत्र के मानसशिष्यनो एक ख्याल प्रचलित छे. जोके आ ख्यालने कारणे घणा सारा गणाता साहित्यिको पोते जेने कोई रीते आंबी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शके तेम न होय तेवी मूर्धन्य विभूतिओना पोते मानसपुत्र होवानी भ्रमणामां राच्या होय तेवुं बन्युं छे. आ संजोगोमां, जयंतभाई मो. द. देशाईना मानसपुत्र तरीके ओळखाववानुं हुं उचित नहीं गणुं, तेम पसंद पण नहीं करुं. परंतु 'जैन गूर्जर कविओ'ना अनुसर्जनना कार्यना संदर्भमां एटलुं तो अवश्य कहीश के जयंतभाईए मो. द. देशाईना योग्यतम उत्तराधिकारी छे.

जैन समाजने याद करीने हुं अहीं उमेरीश के मो. द. देशाई जेवा पोताना मूर्धन्य अने बहुश्रुत जैन विद्वानने तथा तेना शकवर्ती सर्जन-संशोधनकार्यने जैन समाज लगभग भूली गयो हतो तेवे टाणे जयंतभाईए आ ग्रंथश्रेणीना पुनरुद्धार द्वारा सर्जक तथा सर्जननी पुनःप्रतिष्ठा करी छे अने दायकाओ सुधी आपणे आ सर्जनने तथा सर्जकने भूलीए नहीं तेवी योजना करी आपी छे ते बदल समग्र जैन समाजे जयंतभाईने वधाववा जोईए. जो मने जैन समाज वती कहेवानो हक मळतो होय तो हुं कहीश के जयंतभाई, जेम मो. द. देशाईने अने 'जैन गुर्जर कविओ'ने अमे नहीं भूलीए, तेम तमने - तमारा आ पुनःसर्जनने पण अमे कदी भूलीशुं नहीं.

—विजयशीलचंद्रसूरि

(३)

समुद्धारयज्ञनी पूर्णाहुति

मो. द. देशाईना 'जैन गूर्जर कविओ' ए विषयनी दृष्टि तो ते प्राचीन गुजरातीनी एक सविस्तर हस्तप्रतसूचि छे - जैन हस्तप्रतभंडारोमां तेमज अन्यत्र संग्रहायेली हस्तप्रतोनी सूचि. परंतु तेनी साथे तेमणे समग्र जैन परंपरा विशे जे संलग्न साहित्यिक, ऐतिहासिक अने सांस्कृतिक सामग्री पण एकत्रित करीने आपी छे अने जे उपयोगी परिशिष्टो अने सूचिओ आपी छे ते जोतां ए महाग्रंथने जैन परंपरानां अने पासांओने लगतो माहितीकोश पण गणवो ज पडे. जैन परंपरानो समग्रदर्शी इतिहास तैयार करवा माटेना काचा मालनो ए अमूल्य, अढळक खजानो छे.

'जैन गूर्जर कविओ'नी भूमिका अने परिशिष्टो रूपे आपेल् लखाणोने सुधारीमठारीने भाई जयंत कोठारीए (१) देशीओनी सूची अने कथानामकोश, (२) गुरुपट्टावलीओ अने राजावली तथा (३) जूनी गुजरातीनी पूर्वपरंपरानो इतिहास - एम त्रण भागमां प्रकाशित करवानुं काम अहीं पार पाड्युं छे, अने एम पोताना समुद्धारयज्ञनी तेमणे पूर्णाहुति करी छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ विषयो ज एवा 'मातबर' छे के तेमां अत्यारे प्राप्त सामग्रीनी दृष्टिए, अद्यावधि थयेला संशोधनकार्यनी दृष्टिए अने संशोधनपद्धतिनी दृष्टिए ते प्रत्येकने अद्यतन कक्षाए पहोंचाडवानुं काम हवे पछी वर्षोनी निष्णात कोटिनी महेनत मागी ले तेम छे. ए दृष्टिए जोतां ए दिशाओनुं काम हवे ठीकठीक काळग्रस्त गणाय. परंतु जयंतभाईए तो एक श्राद्धतर्पणनुं पवित्र कार्य कर्युं छे. देशाईए आरंभेलां कामो पूरां करवानो, विद्यापूर्वजोनुं ऋण फेडवानो भार आजनी पेढीने माथे छे. जयंतभाईनो असाधारण परिश्रम आवा अन्य पूर्वजो – भगवानलाल इन्द्रजी, हरगोविंददास शेठ, ची. डा. दलाल, मुनि जिनविजय, पुण्यविजयजी, मंजुलाल मजमुदार वगेरेए संशोधन क्षेत्रे योगदान कर्युं छे तेनुं स्मरण-मूल्यांकन करवा थोडाक जणने पण नहीं प्रेरे ? थोडीक संस्थाओने पण नहीं जगाडे ?

—हरिवल्लभ भायाणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंडित वीरविजयजी स्वाध्याय ग्रंथ

सं. कान्तिभाई बी. शाह. (श्रीश्रुतज्ञान प्रसारक सभा, अमदावाद, १९९६, डे. २४४ रू. १००)

मध्यकालीन गुजराती साहित्य अने साहित्यसर्जकोमां जेमने साचो रस छे तेमणे आ पुस्तकना पहेला पानाथी छेल्ला पाना सुधी अवश्य नजर नाखी जवी जोईए.

श्री महावीर जैन विद्यालय (मुंबई)ना उपक्रमे ता-१६, १७ सप्टेम्बर १९९५ना रोज जैननगर, अमदावाद खाते श्रीशुभवीरना नामे जाणीता बनेला जैन साधु कवि श्री वीरविजयजीना साहित्य अने जीवनने केन्द्रमां राखीने आचार्यश्री विजयप्रद्युम्नसूरिजीनी निश्रामां 'पंडित वीरविजयजी : जीवन अने साहित्य' विषय पर एक परिसंवादनुं आयोजन करवामां आव्युं हतुं.

आ परिसंवादमां जुदां जुदां स्थळेथी पधारेला विद्वानोए पंडित वीरविजयजीना जीवन अने साहित्य विशे अभ्यासपूर्ण निबंधो रजू कर्या हता, जे आ पुस्तकमां ग्रंथस्थ थया छे.

आ स्वाध्याय ग्रंथमां रंगविजयकृत पं. श्रीवीरविजय 'निर्वाण रास'नुं त्रण हस्तप्रतो अने एक मुद्रित प्रत एम चार प्रतोने आधार डो. कीर्तिदा जोशीए तैयार करेल संपादन उपरांत डो. चिमनलाल त्रिवेदीए 'शुभवेंली'नी समीक्षा करतो विद्वत्तापूर्ण निबंध वांचेलो ते पण रजू करवामां आवेल छे. देशीओनी सूचि अने साहित्यसूचि सहित त्रीस लेखो अने बसो अढार पानामां विस्तरेला आ ग्रंथमां पं. वीरविजयजी विशेनी चरित्रात्मक माहिती आपता लेखो, कविप्रतिभाने उपसावतो लेख, कविनी कथनात्मक दीर्घ रसकृतिओ, वेलीस्वरूपनी रचनाओ, पूजारचनाओ, विवाहलो, बारमासा, ढाळियां, स्तवन, सज्झाय, गहूंळी, छत्रीशी आदि स्वरूपनी रचनाओ विशेना निबंधोने संपादके स्थान आप्युं छे. 'श्री रागेणाङ्कित ६३६ अक्षरात्मक' काव्यम्' जेवी कविनी अप्रगट संस्कृत गद्यरचना सौ प्रथम वार आचार्य विजयप्रद्युम्नसूरिजीना संशोधन-लेख अंतर्गत प्रगट करवामां आवी ते आ ग्रंथनुं ऊजळुं जमापासुं छे.

'पंडित श्रीवीरविजय निर्वाणरास', 'सुरसुन्दरीनो रास', 'धम्मिलकुमारनो रास', 'चंद्रशेखर रास' जेवी कविनी रास रचनाओनो निबंधकारोए सुपेरे परिचय कराव्यो छे. 'शियळवेली' अने 'शुभवेली' जेवी वेलीप्रकारनी रचनाओ विशे विद्वानोए समीक्षात्मक लखाणो आप्यां छे. पूजासाहित्य विशेनो निवृत्त अने वयस्क प्राध्यापक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूपेन्द्रभाई त्रिवेदीनो अभ्यासपूर्ण लेख अने छेक वेदकाळथी चालती आवती पूजाविधि, तेना प्रकारो विशे सारो एवो प्रकाश पाडे छे. कवि वीरविजयकृत 'नेम-राजुल बासमासा' विषयक निबंधमां श्री रमण सोनीए लाघवथी कृतिनिष्ठ चर्चा करी छे. 'पंडित श्रीवीरविजयजीरचित मोतीशाह शेठ विशे ढाळियां' निबंधमां श्री रमणलाल ची. शाहे, शेठ मोतीशाहे पालिताणामां शत्रुंजय पर्वत पर बंधावेली टुंक अंगे पंडित श्रीवीरविजयजीए लखेल 'कुंतासरनी प्रतिष्ठाना ढाळियां' रचनाने ऐतिहासिक दस्तावेजनी गरज सारती कृति गणावी छे.

'काव्यरूपना विविध ताणावाणा' लेखमां श्रीजयंत कोठारीए 'वयरस्वामीनी गहुंली'ना अर्थघटनना प्रश्नो छेड्यो छे. लेखक कहे छे के कृतिमां अवळवाणी आलेखाई छे जेनी परंपरा घणी जूनी छे.

पूज्य आचार्य श्रीविजयप्रद्युम्नसूरिजी अने प्रा. जयंतभाई कोठारीना चीवटपूर्वकना मार्गदर्शन-परामर्शनने लीधे संपादकनो परिश्रम लेखे लाग्यो छे, सफाईदार अने शुद्ध मुद्रण अने आकर्षक मुखपृष्ठ ग्रंथना मूल्यमां ओर वधारो करे छे.

'पंडित वीरविजयजी स्वाध्याय ग्रंथ' मध्यकालीन गुजराती जैन साहित्यना अभ्यासीओने उपयोगी नीवडे एवुं संपादन छे.

-वसंत दवे

*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

A note on
ullaṇa; kusuṇa/kusaṇa

H. C. Bhayani

1. ubbhejja pejja kaṁgu takkollaṇa-sūva-kaṁji-kaḍḍhiyāī/ee u
appa-levā pacchā-kammaṁ tahiṁ bhaiyaṁ// PN 624.
khīra dahi jāu kaṭṭara tella ghayaṁ phāṇiyam sapiṁḍa-rasaṁ/
iccāī bahu-levaṁ pacchā-kammaṁ tahiṁ niyama// PN 625.

ullaṇa v.n. of ullei; ullei *ārdrayati* (Glossary to PN. DN.)

2. ullaṇa : 'a kind of eatable; cooked pulse of slight consis tency (H. osāman; G. osāmaṇ) PN. 624 (PSM.).

ollaṇī : *mārjitā*; curds mixed with sugar, cardamom, cinnaman etc. (PN. 1, 154) (PSM.).

ullaṇa : a kind of porridge, pulse-water.

(Vyavahāra-bhāṣya, 3805. Jain Vishvabhāratī edition).

3. As PN 624, 625 refer to various types of cooked food, *ullaṇa* also means there what is understood by PSM and V.B. references.

4. navaṇīya maṁthu takkaṁ va jāva attaṭṭhiyā va geṇhaṁti/
desūṇa jāva ghayaṁ kusaṇaṁ pi ya jattiyaṁ kālaṁ//
(PN. 282)

kusaṇa prepared in the form of a mixture of rice and curds etc.

kusuṇa : curds etc. (PN. 607).

kusaṇa : *tīmana* (DN 2, 35), 'moistening' (PSM.)

kusaṇa : curds, buttermilk etc. (PN 282) (PSM.)

kusuṇiya : rice mixed with curds etc. (PN. 282 Com.) (PSM.)

kusaṇa : tīmaṇa (DN. 2.35) (PSM.)

5. tīmaṇa : curry (DN. 2.35) (PSM.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

tīmaṇa : (Old Guj.) : curry, pulse-water.

tīmaṇa : 'moistening', 'sauce' (CDIAL 5949)

Compare kaṭṭara (PN 620, 625, 637) = ghṛta-vaṭikonmiśra-tīmaṇādī (PN.ON. Glossary).

6. 'moistening' is the primary meaning of *ullaṇa*. When some liqueous food-article like curds, butter-milk, pulse-water etc. was mixed with rice to moisten it, it also came to be included in the meaning-range of *ullaṇa*.

Similarly the primary meaning of *temana* is mostening. When some liqueous food-arlicle like curry, pulse-water, curds etc. was mixed with rice to moisten it, that came also within the meaning-range of *tīmaṇa*.

7. In Modern Gujarati *kasaṇvũ* means 'to mix some liqueous eatabe like curds, cooked pulse etc. with rice etc. and coagulate to form a thin lump.' That seems to be the primary meaning of Pk. *kusaṇa* (n.) also. Later on it come to signify such a mixture.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bhadram te and *bhadanta*

H. C. Bhayani

(1)

In Vālmīkis *Ramāyaṇa* the expression *bhadram te* occurs as a formula of blessing, of śverting evil or of formal greeting inserted in the midst of a sentence in the speech of a character, breaking the syntactical order–without any connection with the preceding or succeeding portion of the sentence–i.e. as an asyndoton.

The following few occurrences from the first and the second Kāṇḍa would illustrate this peculiar usage :

ताटका नाम भद्रं ते भार्या सुन्दस्य धीमतः । (I 23 25*a*)

एवं भवतु भद्रं ते इक्ष्वाकु-कुल-वर्धन । (I 41 21)

इमौ कुमारौ भद्रं ते देव-तुल्य-पराक्रमौ ।
कथं पद्भ्यामिह प्राप्तौ किमर्थं कस्य वा मुने ॥ (I 47 2)

इमौ कुमारौ भद्रं ते देव-तुल्य-पराक्रमौ ।
गज-सिंह-गती वीरौ शार्दूल-वृषभोपमौ ॥ (I 49 17)

सौपाध्यायो महाराज पुरोहित-पुरस्कृतः ।
शीघ्रमागच्छ भद्रं ते द्रष्टुमर्हसि राघवौ ॥ (I 67 11)

लक्ष्मणागच्छ भद्रं ते ऊर्मिलामुद्यतां मया ।
प्रतीच्छ पाणिं गृह्णीष्व मा भूत् कालस्य पर्ययः ॥ (I 71 18)

स त्वा पश्यतु भद्रं ते रामः सत्य-पराक्रमः ।
सर्वान् सुहृद आपृच्छ्य त्वामिदानीं दिदृक्षते (II 31 4)

शत्रुघ्नोत्तिष्ठ किं शेषे निषादाधिपतिं गृहम् ।
शीघ्रमानय भद्रं ते तारयिष्यति वाहिनीम् ॥ (II 83 2)

It is to be noted that the formula is used in a fixed metrical position—as the last two words in the first or the third of the Anuṣṭubh.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(2)

bhadaṁta is quite well-known in Pali as a term of respectable address or adjective with respect to Buddhist mendicant, monk etc.

Its contracted form *bhaṁte* (for *bhadaṁte*) is frequently used similarly in the Jain Āgamas. (Pischel §§ 165, 349, 366 b, 417, 463, 465).

The root *bhand* is given in the *Dhātupāṭha* (2, 11) with the meanings *kalyāṇa*, *sukha-*. *bhadanta-* derived from it is noted in the *Uṇādi-sūtra-vṛtti* (3, 130) according to Monier Williams dictionary.

Semantically, *bhadanta* can be possibly explained as meaning *kalyāṇakāraka*. But its very frequent use in speeches as a respectful term of address leads me to suspect that it may have been also influenced by the MIA. form of the traditional blessing formula *bhadraṁ te* (> *bhaddaṁ te* > *bhadaṁte*).

The addresser thereby expresses his or her reverence and good wishes 'Bless you !' 'Let no evil visit you'.

This is comparable to the utterances *jaya*, *jīva*, *nanda*, *vardhasva* shouted as blessing for a great person on a festive occasion.

A paralled case is that of Sk. *jīva* 'long live', Ap. *jīu*, *jīu*, occuring in various NIA. languages as *jīu* ! *jyu*, *jī* etc. as a particle of assent or respect and also as an honorific particle added to names (Turner, 5240).

From the respectful term of address *bhadaṁte* was created the address *bhadaṁta* which later became specialized as applying to the Buddhest monks and mendicants.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

A Glossary of Rare and Non-standard Sanskrit Words of The Kathāratnākara of Hemavijayagaṇi (1600 A.C.)*

H. C. Bhayani

अहिफेन २७१ G. अफीण

Opium (Sanskritized back-formation with popular etymology)

आडक २८५ G.आडो=हठ 'Obstinate insisence or demand'.

इहत्य २९८ अत्रत्य

उच्छाल् ६१ उछाळवुं 'to throw up'

उत्फालित १०५ 'taken a jump', G. उकाळ 'effervescnce'. See फाल

उत्पाटय् २२३ G. उपाडवुं 'to lift'

उद्धारक १००, १२१ G. उधार 'purchsing on credit'

उपलक्ष् २४७ G. ओळखवुं 'to recognize'

ऊर्मिका ११३ 'ring'

औचिति ७६ औचित्य

कक्कर ९४ G.कांकरो 'pebble'

कङ्कलोह १५३ 'steel'

कच्चोलक २६ G. कचोळुं '(glass) bowl'

कटोल २८१(?)

करपत्र ८७ G.करवत 'saw'

कपाट ३१ G.कमाड 'door'

कर्कोटक २६५ G.कंकोडा 'a kind of vegetable'

कल्ये ११४ G. काले 'tomorrow'

काकतुण्ड ९ 'charcoal'

काञ्जिक ३४ G.कांजी 'sour gruel'

कासर २७६ (?)

कुटुम्बिनी १८१ G. कणबण 'peasant woman'

कुल्लरिका १५७ G. कुलेर 'a preparation of wheat-flour, molasses and ghee'

केकराक्ष २२० 'cross-eyed'

---

* Edited by Vijayamunichandrasūri. To be shartly published.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोट्टपाल १२९ G. कोटवाळ 'town-guard'

क्षिप्रचटिका २६५ G. खीचडी 'a preparation of rice and pulse(Sanskritized back-for- mation, with a popular etymlogy). See खिच्चडिका

क्षुल्लिका १५२ 'female disciple'

खट्वा ५९ G.खाट 'charpai'

खद्खद् २२० G. खदखद 'boiling sonnd of the water in which rice etc. is being cooked'

खाट्कृ १४१ G.खटकवुं 'to rankle'

खातिका १९०,२९९ G. खाई 'ditch'

खारिका ६५ G. खारेक 'dry date'

खिच्चडिका २२० G. खीचडी 'khicri'

खोरक २६ 'bowl'

गन्त्री १०३ G. गाडी 'cart'

गल्ल २६० G. गाल 'cheek'

गृहगोधक २१८ G. घरोळी 'house lizard'

गोधा १५५ G. घो 'lizard, iguana'.

ग्रहिल २४३ G. घेलुं 'mad, possessed'

घट्ट १४८ G. घाट 'a landing place, steps leading to the river-water.'

घरट्ट ५२ अरघट्ट. G. रहेंट 'Persian wheel'

घर ९० G. घंटी 'grind stone'

चट् २७२ G. चडवुं 'to climb'

चन्द्रोदय २८१ G. चंदरवो 'canopy'

चारबी ६५ some kind of dry fruit

चारुली ६५ G. चारोळी 'a kind of dry fruit'

चिपटाक्ष २२० 'having eyes with gummy secretion'. (Compare G. चीपडा)

चिपट १८८ 'flat-nosed'. G. चपटुं 'flatened, flat'

चिर्भटी १४७ G. चीभडी 'sort of cucumber'

चूरिमक ५५ २८५ G. चूरमुं 'a sweet-dish prepared by pulverizing baked wheat flour'.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैत्यपरिपाटी १९८ चैत्य प्रवाडी 'taking a round of places of pilgrimage'

छोटन ३२ G. छोडवुं 'to untie'

जटित-श्रृंखल ३१ 'with the door chain attached (for closing the **door**).
(G. सांकळ जडीने)

जाहक १४५ 'hedgehog'

जोत्कार २८९ H. जोकार 'greeting'

झर् २८५ G. झरवुं 'to treacle, drip, scatter'

झारिका ११४ G. झारी 'water-pot with snout'

झीमिणी २०६ name of a folk dance, the accompanying song and its metre. The word occurs as धिंदिणि in Old Gujarati. It may be a forerunner of the Gindoli song current in the present-day Rajasthan.

टल्लिका २०९ G. टाल 'baldness'

डम्भ ९ G. डाम (डम्भ्यते, १३९, दम्भन ८) 'burning, cauterizing'

ढौक् २९१, २९३ 'to bring to, to offer as present'

तुरुष्क २२६ G. तुर्क, तरकडो 'A Muslim'

दन्तधावन १४६ G. दातण करवुं 'cleansing the teeth'

दवरक १५७ G. दोरो, दोरडी, दोरडुं 'cord', 'rope'

दाघ १३३ G. दाघ 'burning'

धनिक ८४, ११८, १२६, १८९, २७३ G. धणी 'husband, owner'

धाटी १९२, २४८ G. धाड 'decoity'

धौतिक २६९ G. धोतियुं 'loin cloth'

नक्र २३, २७, ६०, १२६ etc. G. नाक 'nose' (Sanskritized)

नटित ४५ 'overwhelmed, effected'. (Pk. नड्)

निर्धनिकं २९३ G. नधणियातुं 'without an owner' (see धनिक)

निःशूक १४१ 'mereiless'

नीरङ्गी २०५ 'veil' (DN. 4.31)

पटकुटि १८ 'tent'

पट्टकूल २९८ G. पटोळुं 'a silk sari prepared by the tie-dye technique'

पर्पट २९५ G. पापड 'thin cake of pulse'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पस्तिका ६५ G.पस्ता 'pistachio'

पातसाहि १२६ G. पातशाह, बादशाह 'A Muslim ruler'

पापर्द्धि ९३ G. पारधी 'hunting'

पापवान् २८९ G. पापी 'sinner'

पालनक २६७ G. पाळणुं 'cradle'

पाली २६५ sixteen different meanings are noted, a large part of which are from Gujarati

पुट ५८, १५८ G. पड 'fold, layer'

पुत्तलक १५८, २६० G. पूतळुं 'effigy', 'statue'

पुष्पदन्तौ १०५ 'sun and moon'

पूपिका २८५ G. पूडी

पृष्ठिवाह २७ G. पोठियो 'bull as a beast of burden', 'pack-bull'

पेटी २०० G. पेटी 'box'

प्रसेवक ६५ 'pouch'. Marathi पिशवी 'hand-bag'. Pk. पसेवय

प्रातिवेश्मिक ५२ G. पाडोशी 'neighbour'

प्राध्वर २४ G. पाधरुं 'straight'

प्राभृत १६८ 'gift'

फाल २८५ G. फाळ 'jump'

फुल्लगल्ल २५९ G.फुलेल गाल 'swollen cheeks'

बदाम ६५ 'almond'

बप्प २८५ G. बाप lit. 'father' (term of endearing address to a male child)

बीटकं १९६, २५६ G. बीडुं 'betel roll'

बुड् ८८ G. बूडवुं

बूचिको १८९ G.बूचो 'crop-eared, earless'

भङ्गिका २७१ G. भांग 'bhang'

भट्ट २८७ G. भाट 'bard'

भरडक १२३ a Śaiva monk', भरटक २२४

भाटक ८६ G. भाडुं 'rent'

भोजनवारक २३५ भोजनवार 'feast' (cf. G. जमणवार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मठिका ९८ G. मढी 'monastery, cell'

मणिकारक २१३ G. मणियार 'jeweller'

मन्दाक्ष ५२ मंदाक्ष्य २८० 'shame'. Pk. मंतक्ख (DN. 6.141)

महार्घ २८९ G. मोंघुं

मान्द्य १३४, १५२ G. मंदवाड 'sickness' (G. मांदुं 'sick')

मार्गण ७५, 'asking, begging' (G. मागणुं)

मुद्गल २५१ G. मोगल 'a Muslim ruling dynasty'. Here ' kind of spirit, like ghost, goblin etc.'

मुष्टि-जटित १५३ G. मूठ जडेली 'joined with hilt'

मोट् ११२, २५३ H. मोडना, G. मरोडवुं 'to turn aside, to wrench, to bend'

यवनिका २७४ 'curtain'

रक्ष् १०३, २०४ G. राखवुं 'to keep in reserve'

रक्षा (दवरकरक्षा) २११ G. राखडी '(thread tied as) amulet'

रक्षा १८९ G. राख 'ashes'

रजस्त्राण ९ 'mosquito curtain'

रन्धनकारि २८९ G. रांधण 'female cook'

रब्बा G. राब 'gruel'

राजपाटी २० G. रजवाडी 'royal procession'

राटि १८९ G.राड 'quarrel'

रिङ्ख् २८५ G. रींखवुं 'to crawl'

लपनश्री २४५ G. लापशी 'a sweet dish prepared from wheat flour or groats' (Sanskritized back-formation with popular etymology)

वक्षारक २२ G. वखार 'store room'

वप्ता १२६ G. बापा 'father' (Sanskritized with a popular etymology)

वागुरिक १४६. G. वाघरी 'bird-catcher'

वातूलपूल २९८ 'a gust of strong wind ?'

वासिनिका २३६ 'pouch'. G. वांसळी 'a pouch for money etc. usually tied on the waist'

विगोप् ११०, १४८, २८१ 'to harass, to publicly censure'. G. वगोववुं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विरूप १८१ G. बूरुं 'ill'

विभात १२२, १३८ G. वहाणुं 'morning'

वीक्षा २४ 'understanding, grasping'

वैकालिक २८५ G. वाळुं, H. व्यालू 'evening meal'

व्यवहारी २७४ G. वेपारी 'trader'

व्याघुट् = H. बाहुरना 'to return' (व्याजुघोट ११, २६५)

शरट २०९, २१० G. सरडो 'chameleon'

शुद्धि १९२ 'news'

शृङ्गारित १६८ G. शणगार्युं 'decorated, adorned'

श्रीफल २८४ G. श्रीफळ 'cocoanut'

सङ्घाटक १६३ G. संघाडो 'a company, a body'

सज्ज २८३ G. साजुं 'restored to health after illness, recovered'

सञ्चल १३१ G. संचळ 'stirring, slow movement'

सत्यापय् १५५,२५३ 'to prove truthful, to vouch'

समर्घ २८१ G. सोंघुं 'cheap'

सम्भला ५२ वेश्या 'unchaste woman'

सर्वरसं २३९ G. सबरस 'salt'

सादि १५२ 'horseman'

साधु १५५, २४७ G. शाह, H. साहु 'merchant'

सारणी ६३ G. सारण 'canal'

साहि १२६ G. शाह 'A Muslim ruler'

सूत्रकण्ठ ८० ब्राह्मण

सूत्रधार १२४ G. सुथार 'carpenter'

हक्कित १३९ G. हाक्यो 'challanged'

हण्डिका १९० G. हांडी 'pot'

हम्भारव १४१ G. भांभरवुं 'belowing'

हरगृह १२१ श्मशान

हसन्ती १ 'a portable fire-place (G. सगडी)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

SOME NOTEWORTHY EXPRESSIONS

कुर्वन्नस्मि ३५९५ G. करुं छुं (present progressive) 'I am doing', वहन्नस्मि ४३ G. वहुं छुं. 'I am carrying', पतन्नस्मि १३ G. पडुं छुं. 'I am falling', व्रजन्नस्मि २६७ G. जाउं छुं 'I am going', गच्छन्नस्मि २८३ G. जाउं छुं 'I am going'.

माऽसौ पश्यन् भूयादिति ९५ G. रखे ए जोतो होय 'lest he may be seeing it'

स्वमुखे थूत्कर्तुं दास्यति १५ G. पोताना मोंमा थूंकवा देशे 'allow to spit in his mouth'

अद्य कल्ये २८१ G. आज काल lit. 'today and tomorrow', 'now-a-days'

शिरसि चटिष्यन्ति १२ G. माथे चडशे lit. 'will mount on the head'; 'be dominating, demanding'

दत्ततालक २२,९८ G. ताळुं दीधेल 'locked'

शृङ्खलां च दत्वा,२७,२७२ 'having attached the door-chain to close it'

खात्रं पतितम् २० G. खातर पड्युं 'the house was broken, burgled'

पृष्ठे लग्नः १९१ G. पूंठे लाग्यो 'pursued'

वैरं ला १०३ G. वेर लेवुं 'to take reveinge'

पश्चाद् वल्- ४, ११, २४ G. पाछुं वळवुं, 'to come back , to return'.

कपाटखाट्कृति १११ G. कमाड खडखडाववुं 'knocking at the door'

क्रकचमोचन २८, करपत्रमोचन ८ G. करवत मुकाववी 'commit ritual suicide by getting cut the throat with a saw on the banks of the Gaṅga so as to get one's wish fulfilled in the next birth'

हिमालयगलन २१६ G. हेमाळो गलवो 'to go to Himālaya and commit suicide in the cold to repent some sin commited or to get some unfulfilled desire fulfilled in the next birth'.

घटवादन १५५ G. घडियाळां वागवां 'striking the night watch'

मषीकूर्चकं दा ३०० G. मशनो कूचडो देवो. Literally 'to blacken by smearing with a brush of soot', signifying metaphorically stigma, blame or censure brought. A common expression in Pk. and Ap. literature.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशन-परिचय

1. Āyaranga : Word Index and Reverse Word Index.
2. Sūyagaḍa : Word Index and Reverse Word Index.

   M. Yamaraki, Y. Ousaka. Philologica Asiatica Monograph Series Nos. 8,9. The Chūō Academic Research Institute, Tokyo 1996.
3. Nirayāvaliyā Suyakkhandha, Uvangas 4-12 of the Jain canon. Introduction, text-edtion and notes. Josef Deleu. Translated from the Dutch by J.W. de Jong, Royce Wiles. Philologica Asitica Monograph Series 10. प्रकाशक उपर मुजब ।

   पहेला पुस्तकमां 'आचारांग-सूत्र'नी संपूर्ण शब्दसूची तथा शब्दान्त वर्णोना क्रमे तेमनी संपूर्ण ऊलटसूची रोमन लीपिमां आपी छे. ते ज प्रमाणे बीजा पुस्तकमां 'सूत्रकृतांग-सूत्र'नी बंने प्रकारनी शब्दसूची. त्रीजा पुस्तकमां 'निरयावलिया' ए उपांग ८थी १२नो संपादित पाठ, भूमिका अने टिप्पण, जे योझेफ देलेउए डच भाषामां प्रकाशित कर्यां हतां, तेनुं अंग्रेजी भाषान्तर आप्युं छे. आ जपानी संशोधन-संस्थानी जैन आगम साहित्यने लगती संशोधन-ग्रंथमालामां आ पहेलां प्रकाशित 'इसिभासियाइं' अने 'दसवेयालिय'नी पादसूची अने ऊलटपादसूचीनो परिचय 'अनुसंधान'ना त्रीजा अंकमां आप्यो हतो.

ह. भायाणी

★

संशोधन-समाचार

एल. डी. इन्स्टिटयूटना विझिटिंग प्रोफेसर नारायण कंसाराने बे वर्ष पूर्वे दिल्ही स्थित भोगीलाला लहेरचंद इन्स्टिटयूट ओफ इन्डोलोजी (दिल्ही) तरफथी बुद्धिसागरसूरि (वि. सं. १०८०) रचित 'पंचग्रंथी' व्याकरणनुं संपादनकार्य सोंपायेलुं. तेमांनुं संशोधित ग्रंथपाठ तैयार करवानुं कार्य पूरुं थयुं छे. हवे बाकीनुं–प्रस्तावना, परिशिष्टो वगेरे तैयार करवानुं कार्य चालु छे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओरिएन्टल-कोन्फरन्स
३८मुं संमेलन

जादवपुर युनि.ना यजमानपदे, ऑल-इन्डिया ओरिएन्टल कोन्फरन्सनुं ३८मुं अधिवेशन ता.२८थी ३० जान्यु. '९७ना दिवसोमां योजाई गयुं. जान्यु ३ थी ९ दरम्यान बेन्गलोरमां योजाएला वर्ल्ड संस्कृत कोन्फरन्स पछी तरत ज आ संमेलन योजाएलुं होवाथी विद्वानोनी हाजरी प्रमाणमां पांखी हती ।

वैदिकथी मांडीने ईरानीअन, इस्लामीक, द्राविडी, पालि अने बुद्धिज़्म तेम ज प्राकृत अने जैनिज़्म अने मोडर्न संस्कृत जेवा विषयोनो आ संमेलनमां समावेश थयो हतो, अने सर्व विभागनी बेठको समांतर ज योजवामां आवेली (तो ज समेलन त्रण दिवसमां पूरुं थाय). आ संमेलन जादवपुर, बंगाळमां योजायुं होवाथी बंगाळी भाषा-साहित्यनो एक वधारानो अढारमो विभाग पण राखवामां आवेलो ।

हंमेश मुजब विद्वानोमां सौथी वधु लोकप्रिय विभाग क्लासीकल संस्कृत रह्यो, जेमां कुल १७८ शोधपत्रो प्रस्तुत थयां. प्राकृत जैनिज़्म अने पाली-बुद्धिज़्ममां अनुक्रमे ४१ अने २५ शोधपत्रो प्रस्तुत थयां ।

प्राकृत विभागमां सट्टक नाट्यप्रकार पर बे शोधपत्रोमांथी एकमां पूणेना डो.चन्द्रमौली नैकरे भाषाकीय विशेषताओ अने प्रादेशिक भाषानी असरो ('कर्पूरमंजरी'मांथी उदाहरण रूपे 'सीसे सप्पो, देसंतरे वेज्जो' जेवी कहेवतो–अहीं 'हिमवति दिव्यौषधयः, शीर्षे सर्पः समाविष्टः' ए 'मुद्राराक्षस'मांनी उक्ति याद आवे)नुं निरूपण कर्युं. तो बीजा एक शोधपत्रमां स्वरूपनुं समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत थयुं. 'करकण्डुचरिउ', 'समराइच्च-कहा', 'जसहरचरिउ', 'णायकुमार-चरिउ', 'गाथासप्तशती', जैन आगम अने गीता, 'आचारांग', 'वसुदेव-हिण्डी'(मां नैतिक तत्त्व) जेवा विषयो पर शोधपत्रो प्रस्तुत थयां ।

पाली-बुद्धिज़्म विभागमां तिब्बतमां प्राप्य 'लोकेश्वर शतक-स्तोत्र' (संस्कृतमां अनुपलब्ध), तिब्बतमां प्राप्त अभिधर्म-पाठ, दीघ-निकायना महासमय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रनुं तिब्बती-संस्करण, आर्यशूरनी 'जातकमाला' जेवा विषयो पर शोधपत्रो प्रस्तुत थयां ।

गुजरातमांथी लगभग अढार विद्वानोए पोतानां शोधपत्रो जुदा-जुदा विभागोमां प्रस्तुत कर्यां ।

पौर्वात्य-विद्या घणा देशोने जोडनारी कडी छे तेनी प्रतीति आ प्रकारना संमेलनमांथी फरी एक वार थई ।

विजय पंड्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवसान-नोंध

संस्कृत रंगमंचना रंगमां रोळायेल परिव्राजक

गोवर्धन पंचाल

'कुत्ताम्बलम् ऐन्ड कूडियाट्टम्' ए एमना १९८४मां दिल्हीनी संगीत नाटक 'अकादमी वडे प्रकाशित पुस्तकनी मने आपेली नकलमां गोवर्धनभाईए लख्युं छे : १९५२-५६मां भारतीय विद्या भवनमां शरु करेली 'चर्चरी'नी चर्चाथी आजनी 'पोढ'नी चर्चाना समयनी यादमां'—२८-१०-८५.

१९९६ना नवेम्बरनी २२मीए पोताना भरतनी रंगभूमि उपर प्रकाशित थयेला पुस्तकमांना बेत्रण संदर्भोनी वधु चकासणी करवा गोवर्धनभाई अमदावादनी एल. डी. इन्स्टिट्युट ओव इन्डोलजीमां गया हता. बीजे दिवसे ज मार्ग-अकस्मातमां एमनुं अवसान थयुं.

शब्दशः जीवनना अंतिम श्वास सुधीनुं पांच दसकानुं एमनुं नाट्यक्षेत्रनुं अविराम-अविरत परिभ्रमण, मेघाणीना परिभ्रमणनी हरोळनुं; थाक्या वगरना सेंकडो जाणकारो पासेथी अने पुस्तकालयोमांथी अढळक माहितीनो संचय; कांई केटलाये नाट्यत्सवोमां उपस्थिति : मारी शरु थयेली रास-चर्चरीने लगती पृच्छा-परिपृच्छा पछी, उत्तरोत्तर विकास सोपानो चडतां, गोवर्धनभाई पोताना विषयनी सर्वांगीण जाणकारीमां एवी कक्षाए पहोंच्या हता के एमनी जोडनो बीजो जाणकार देश-विदेशमां शोध्यो न जडे —'अनामिका सार्थवती बभूव'. 'दूतवाक्य' अने 'भगवदज्जुकीय' ए नाटको संस्कृतमां भजववानो प्रयोग कर्या पछी तेमणे रामभद्र मुनिए १२मी शताब्दीमां रचेल अने भजवायेल नाटक 'प्रबुद्धरौहीणेय' मूळ संस्कृतमां ज सरस रीते तेमणे भजव्युं — ते माटेनो आर्थिक प्रबंध जेमतेम पण करीने अने भांगेल पगे लाकडीने टेके चालीने (एना परिचय माटे जुओ मारो लेखसंग्रह 'शोधखोळनी पगदंडी पर', १९९७, पृ. १८-२३).

संस्कृत रंगमंचनी अठंग-अष्टांग उपासक एवी गुजरातनी एकमात्र हस्ती (एमणे तो 'गुर्जर संस्कृत रंगम्' नामे संस्थानी स्थापना करी जेथी आवी रीते बीजां संस्कृत नाटको पण भजवी शकाय) एकाएक नामशेष बनी—क्षरदेहे ज. अक्षरदेहे तो ए चिरकाळ विद्यमान रहेशे.

ह. भा.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुपूर्ति

जिनागमोनी मूळ भाषा विशे परिसंवाद

प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, प्राकृत विद्या मंडळ तथा प्राकृत जैन विद्या विकास फंड - आ त्रण विद्या संस्थाओना आश्रये जैनाचार्य श्री सूर्योदयसूरिजी तथा श्री शीलचंद्रसूरिजीना सांनिध्यमां अमदावादना शेठ श्री हठीसिंह केसरीसिंहना भव्य जैन मंदिरना परिसरमां "जैन आगमोनी मूळ भाषा" विषे एक विद्वत्संगोष्ठी योजाई गई.

भगवान महावीरे अर्धमागधी भाषामां पोतानां धर्मप्रवचनो आपेलां तेमज तेमनां आगमो पण अर्धमागधी भाषामां ज मूळतः सचवायां हतां, ते वात इतिहास तेमज आगमनां प्रमाणोथी स्वतः सिद्ध छे. भारतीय तेम ज जर्मन विद्वानोनी दोढसो वर्षोनी आधुनिक संशोधन-परंपरा द्वारा पण आ तथ्य सिद्ध थयेलुं ज छे, अने आज सुधी आ मुद्दे कोई जातनो विवाद के मतभेद पण न हतो.

परंतु, छेल्लां बेएक वर्षो दरम्यान जैन धर्मनी एक शाखा दिगंबर संप्रदायना केटलाक मुनिवरो तथा अमुक विद्वानो द्वारा एवुं प्रस्थापित करवानो जोरदार प्रयत्न थई रह्यो छे के भगवान महावीर तथा तेमना आगमोनी भाषा अर्धमागधी प्राकृत नहि, परंतु शौरसेनी प्राकृत हती.

आ नवीन अभिगम तथा अभिप्रायनुं प्रामाणिक मूल्यांकन तथा परीक्षण अत्यंत अनिवार्य हतुं. माटे आ विद्वत्-संगोष्ठीनुं आयोजन आचार्यश्रीनी प्रेरणाथी करवामां आव्युं हतुं.

बे दिवस चालेली आ संगोष्ठीमां स्थानिक तथा बहारगामना मळीने तेर जेटला शोधनिबंधो प्रस्तुत थया, जेमां डॉ. मधुसूदन ढांकी, डो. सत्यरंजन बेनर्जी, डॉ. सागरमल जैन, डॉ. रामप्रसाद पोद्दार, डॉ. एन. एम. कंसारा, डॉ. दीनानाथ शर्मा, डॉ. प्रेमसुमन जैन, डो. जितेन्द्र शाह, डो. रमणीक शाह, डो. भारती शेलत, कु. शोभना शाह, डॉ. के. रिषभचंद्र, डो. हरिवल्लभ भायाणी, तथा पं. दलसुखभाई मालवणियां वगेरे विख्यात तेमज नामांकित विद्वानोनुं प्रदान हतुं अने चर्चामां भाग लीधो हतो. तो ते सिवाय अन्य चालीसेक विद्वानोए चर्चामां भाग लीधो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हतो. तेरापंथना समणी चिन्मयप्रज्ञा पण आमां भाग लेवा खास आव्यां हतां.

संगोष्ठीनी प्रथम बेठक एक जाहेर समारोह रूपे रही. आ समारोहमां अतिथिविशेष तरीके जाणीता जैन अग्रणी शेठ श्रेणिक कस्तूरभाई तथा आंतरराष्ट्रीय पुस्तक प्रकाशक मोतीलाल बनारसीदास (दिल्ही)ना श्री नरेन्द्रप्रकाश जैननी विशेष उपस्थिति रही. उपरांत मुंबईथी श्री प्रताप भोगीलाल पण हाजर रह्या हता. समारोहनुं यशस्वी संचालन डो. कुमारपाळ देसाईए कर्युं. आ समारोह दरम्यान डो. के. आर. चंद्रे दस वर्षना कठोर परिश्रम द्वारा भाषिक दृष्टिए पुनः सम्पादित "आचारांग-प्रथम अध्ययन" नामना ग्रंथनुं विमोचन पंडित दलसुखभाई मालवणियाना वरद हस्ते थयुं. उपरांत अन्य पांच ग्रंथोनुं विमोचन पण जुदा जुदा महानुभावोना शुभ हस्ते थयुं.

बपोरे संगोष्ठीनी प्रथम बेठक मळी जेना अध्यक्ष स्थाने बहुश्रुत इतिहासविद तथा स्थापत्यविद डो. मधुसूदन ढांकी बिराज्या. आ बेठकमां चार विद्वानोए पोताना शोधपत्रो वक्तव्य रूपे रजू कर्यां. संगोष्ठीनी विशेषता ए रही के प्रत्येक वक्तव्य बाद श्रोतावर्ग तथा विद्वानो द्वारा मार्मिक तथा तात्त्विक चर्चा-प्रश्नोत्तरी थती, वक्ता द्वारा तेनो जवाब अपातो अने छेवटे अध्यक्ष तेनुं मधुर समापन करता, पछी बीजुं वक्तव्य थतुं. आ कारणे संगोष्ठीनुं वातावरण रसभर्युं, जीवंत तथा तार्किक बनी रह्युं.

ता. २८ एप्रिलना बीजा दिवसे सवारे संगोष्ठीनी बीजी बेठक विख्यात भाषाशास्त्री डो. सत्यरंजन बेनर्जी (कलकत्ता)ना अध्यक्षपदे मळी. आ बेठकमां पांच शोधपत्रो रजू थयां, जेमां डो. सागरमल जैन, डो. पोद्दार, डो. बेनर्जी वगेरेनां शोधपत्रो विशेष ध्यानपात्र तथा नोंधपात्र संशोधनोथी सभर रह्यां.

बपोरनी त्रीजी तथा छेल्ली संगोष्ठीनुं अध्यक्षपद डो. सागरमल जैने (बनारस) संभाळ्युं. जैनविद्या तथा भारतीय संस्कृतिना ऊंडा अभ्यासी आ विद्वाने छेल्ली बेठकनुं सरस संचालन कर्युं. आ बेठकमां आ संगोष्ठीना पुरोधा डो. के. आर. चन्द्र समेत चार विद्वानोए पोतानां शोध-पत्रो सहित वक्तव्यो आप्या.

संगोष्ठीमां श्वेतांबर मूर्तिपूजक, श्वे. स्थानकवासी, श्वे. तेरापंथ, तेमज दिगंबर मतना विद्वानो उपस्थित रह्या हता तो साथे साथे अजैन विद्वानोनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपस्थति पण ध्यानाकर्षक हती. फलतः आ संगोष्ठी कोई अेक पक्षनी के संप्रदायनी न बनी रहेतां व्यापक रूपे विद्वानोनी संगोष्ठी बनी रही.

आ तमाम विद्वानोना प्राकृत भाषा तथा साहित्यने केन्द्रमां राखीने लखायेला शोधप्रबंधोनो सार अे रह्यो के —

१. भगवान महावीरनी भाषा अर्धमागधी हती; २. शौरसेनी करतां अर्धमागधी वधु प्राचीन भाषा छे; ३. जैन आगमोनी भाषा अर्धमागधी ज छे; अने ४. शौरशेनी भाषामां पण आगम-साहित्य नथी तेवुं नथी परंतु ते अर्धमागधीना आगम साहित्यनी अपेक्षाए परवर्ती काळनुं छे, प्राचीन नहि.

संगोष्ठीना श्रोतागणमां जाणीता साहित्यकार प्रा. जयंत कोठारी, प्रा. सी. वी. रावल, प्रा. गोवर्धन शर्मा, प्रा. मलूकचंद शाह, प्रा. नीतिन देसाई, प्रा. विनोद मेहता, प्रा. वी. एम. दोशी, प्रा. वसंत भट्ट, प्रा. विजय पंड्या, प्रा. निरंजना वोरा, डो. कनुभाई शेठ, डो. ललितभाई, प्रा. जागृति पंड्या, प्रा. गीता मेहता तथा अन्य विभिन्न क्षेत्रोना विद्वानोनी हाजरी संतर्पक रही.

संगोष्ठीनो विषय जटिल तथा शुष्क होवा छतां वातावरण बोझिल ने रूक्ष न बनी जाय तेनी काळजी डो. मधुसूदन ढांकी, डो. एस. आर. बेनर्जी जेवा प्रतिभावंत विद्वानोअे पोताना सेन्स ओफ ह्युमर द्वारा राखी हती, जे एक विरल बाबत रही.

संगोष्ठीना समापन प्रसंगे आ. श्री विजयशीलचंद्रसूरिजीए मार्मिक तथा संवेदनभीनां शब्दोमां कह्युं के—

आपणे घणा घणा विवादो लईने बेठा छीअे, तेनाथी हजी थाक्या नथी के आ भाषाना नामे चाली आवती एकताने नष्ट करतो नवो विवाद सर्जाय छे? आ विवाद शा माटे छे? शुं कोईनी अस्मिताने नष्ट करवानो आनी पाछळ हेतु छे? आवो हेतु कोइनो पण हशे तो ते कदी बर नहि आवे. अनेकांतवादनी वातवातमां दुहाई देता मित्रोने उद्देशीने तेओअे कह्युं के-बंदूकमांथी गोळी छोडनारने बधी छूट अने पछी बचाव करवा जनारने अनेकांतनुं पालन फरजियात- आवा अनेकांतमां अमने विश्वास नथी. "मारवुं पण अने न पण मारवुं"— आवा- 'पण' सिद्धांतने अनेकांत न कही शकाय. त्यां तो - "न ज मारवुं "—एवो 'ज'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धांत ज स्वीकारवो पडे. एम बन्ने संप्रदायना प्राचीन-अर्वाचीन विद्वानोए जे भाषा स्वीकारेली छे, तेनो छेद उडाडवो अने नवी ज वातने अनेकांतना नामे मानवी—ए कोई रीते वाजबी नथी. वधुमां तेमणे अेम पण कह्युं के केटलाक विद्वान मित्रो "नरो वा कुंजरो वा"ना सिद्धांतमां मानता जणाय छे. अहीं आवे तो अहींनी हा, ने त्यां जाय तो त्यां पण हा. आवी पद्धति तेमने विद्वान भले ठरावती होय, पण तेओ एकेडेमिक माणस तो न ज गणाय. एमनी श्रद्धेयता तो न ज स्वीकाराय. आवा मित्रोने मारे कहेवुं छे के तेमने शौरसेनीनो पक्ष ठीक लागे तो तेओ ते ज स्वीकारे पण बेवडी नीति तो न ज राखे.

अंतमां अध्यक्षश्रीना उपसंहार साथे संगोष्ठी सुखद अने संवादी वातावरणमां समाप्त थई हती.

संगोष्ठीना आयोजनमां डॉ. के. आर. चन्द्रे तथा डॉ. जितेन्द्र शाहे सक्रिय महत्त्वपूर्ण भाग भजव्यो हतो. बे दिवस विद्वानोना भोजनादिनो प्रबंध श्री वक्तावरमल बालर, वंसराज भंसाली, नारायणचंद महेता वगेरेअे कर्यो हतो, तो निवासादिनो प्रबंध शेठ हठीसिंह केसरीसिंह ट्रस्टे कर्यो हतो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org